मैकियावेली
शासक
प्रस्तुति
शशिबधुम

मैकियावेली शासक
(चिंतन)

सपादन
डॉ० नीलिमा सिह

प्रथम संस्करण १९८६
द्वितीय संस्करण १९८७
प्रकाशक
सरस्वती विहार
जी० टी० रोड, शाहदरा
दिल्ली ११००३२
मुद्रक
सोनी आफसट प्रिंटर्स
शाहदरा दिल्ली 110 032

मूल्य पतीस रुपये

SHASAK
MACHIAVELLI

First Edition 1986
Price 35 00

अनुक्रम

समपण पत्र ७
निकोलो मकियावेली ९
अध्याय
१ राज्य के प्रकार और उनकी प्राप्ति के उपाय ३०
२ वंशानुगत राज्य ३१
३ मिश्रित राज्य ३३
४ सिकन्दर के द्वारा विजित दारा के साम्राज्य ने उसकी मृत्यु के बाद भी उसके विरुद्ध विद्रोह क्यों नहीं किया ? ४४
५ स्वशासन के अभ्यस्त नगर राज्यों अथवा रियासतों का प्रशासन उन पर विजय पाने के बाद कैसा होना चाहिए ? ४८
६ अपने बाहुबल और पराक्रम से प्राप्त रियासतें ५०
७ भाग्य से अथवा विदेशी सेना की सहायता से प्राप्त की गई रियासतें ५५
८ धूर्तता द्वारा सत्ता हथियाने वाले शासक ६५
९ असैनिक राज्य ७१
१० किसी राज्य की शक्ति का अनुमान कैसे हो ? ७६
११ धर्म-गुरुओं की रियासतें ७९
१२ सैन्य-संगठन और किराये के सैनिक ८३
१३ सहायक, मिले-जुले और स्थानीय सैन्य दल ९०
१४ शासक अपनी देश रक्षक सेना का गठन कैसे करें ? ९६
१५ शासक की निन्दा या स्तुति क्यों की जाती है ? १००
१६ उदारता बनाम कृपणता १०३
१७ आतंक बनाम लोकप्रियता १०
१८ शासक अपने वचन का पालन कैसे करे ? १
१९ अवहेलना और घृणा से बचने की आवश्यकता १

२० दुर्ग एवं अन्य सुरक्षा-उपकरणों की उपयोगिता — १२८

२१ सम्मान प्राप्त करने के लिए शासक क्या करे? — १३४

२२ शासक के निजी सेवक — १३६

२३ चाटुकारों से कैसे बचें? — १४१

२४ इतालवी शासक अपना-अपना राज्य क्यों खो बैठे? — १४४

२५ भाग्य किस सीमा तक मानव जीवन का नियन्त्रण करता है तथा उसका विरोध कैसे किया जाए? — १४७

२६ इटली को बर्बर शासकों के चंगुल से मुक्त कराने का आह्वान — १५२

२७ प्रमुख नाम और संदर्भ — १५८

समर्पण-पत्र
महिमामय लारेन्जो द' मेदीची को सेवा में

शासक की अनुकम्पा प्राप्त करने के आकांक्षी लोग प्राय अपनी सर्वाधिक मूल्यवान सम्पत्ति को लेकर, अथवा उसी की विशेष मनभाती वस्तुओं को लेकर स्वयं उसके समक्ष उपस्थित हुआ करते हैं। यही रीति है। अतएव हम देखते हैं कि शासकों को प्राय घोड़े, शस्त्रास्त्र, जरीदार वस्त्र, मणि-माणिक्य अथवा उनके उच्च पद के अनुकूल ऐसे ही अन्य आभूषण भेंट किए जाते हैं। इस समय मैं, अपने समर्पण के प्रतीक के रूप मे कुछ लेकर स्वयं को महामहिम के समक्ष प्रस्तुत करने की आकांक्षा रखता हू। और मुझे अपनी सम्पत्ति और स्वामित्व के दायरे म ऐसी कोई चीज नजर नही आती जो इतनी प्रिय हो, अथवा जिसकी महत्ता मैं महान व्यक्तियो के कृत्यो के बोध के समरूप आंकता होऊं। यह बोध मैंने समकालीन राजनीतिक घटना प्रवाह के साथ दीर्घकालिक परिचय तथा प्राचीन युग के निरंतर अध्ययन के बल पर प्राप्त किया है। मैंने इन मामलो का बड़े परिश्रम से विवेचन किया है, उनपर लम्बे समय तक सोचा-विचारा है और अब उनका सार-संक्षेप एक छोटी-सी पुस्तक म करने के बाद मैं उसे महामहिम की सेवा मे भेज रहा हू।

यद्यपि मैं जानता हू कि यह कृति आपके समक्ष प्रस्तुत किये जाने योग्य नही है, फिर भी मुझे पूरा विश्वास है कि आप इसे स्वीकार करने की कृपा करेंगे। यह महसूस करते हुए कि मैं आपके समक्ष उस साधन से बढ़कर मूल्यवान कोई चीज पश नही कर सकता था, जिसके द्वारा आप थोड़े ही समय मे उस सबको पा और समझ सकते हैं, जिसे पाने और

लिए मैंने लम्बे अर्से तक प्रताडनाएं सही हैं और मुसीबतें उठाई हैं। मैंने इस कृति को अलंकारों से सजाया नहीं है, मीठी-मीठी बातों से भरा नहीं है, बड़े बड़े और प्रभावशाली शब्दों अथवा अन्य किसी भी प्रकार के आकर्षणों तथा अलंकारों से, जिनका प्रयोग बहुतेरे लेखक अपनी-अपनी कृतियों को सजाने अथवा उनका वर्णन करने में करते हैं, लादा नहीं है। क्योंकि मेरी महत्त्वाकांक्षा रही है कि या तो मेरी पुस्तक को कोई महत्त्व ही न दिया जाए, अथवा इसमें संकलित विविध वक्तव्यों और इसके कथ्य की गम्भीरता के बल पर मूल्यांकन किया जाए। मैं यह भी आशा करता हूं कि किसी निम्न कोटि के व्यक्ति द्वारा शासकीय व्यवहार के नियमों का निष्पादन करने का दुस्साहस धृष्टता नहीं माना जायेगा, क्योंकि मैं समझता हूं कि प्राकृतिक दृश्यों का चित्रांकन करने के इच्छुक व्यक्ति को पर्वतीय सुषमा तथा पठारी इलाकों की प्रकृति का अध्ययन करने के लिए मैदानों में उतरना पड़ता है तथा निचली भूमि का सौन्दर्य निहारने के लिए उच्चतर भूमि पर जाना पड़ता है, उसी प्रकार शासकों की यथार्थ प्रकृति को पूरी तरह समझने के लिए व्यक्ति को सामान्य नागरिक ही होना चाहिए। अतएव, महामहिमामय, मैंने जिस भाव से यह छोटा-सा उपहार आपकी सेवा में भेजा है, उसी भाव से आप इसे स्वीकार करें। यदि आप इसका परिश्रम से अध्ययन करेंगे और इसके विषय में सोचेंगे तो आप इसमें मेरी इस त्वरित आकांक्षा को समझ सकेंगे कि आप इतने महान हों, जितना कि आपको अपने भाग्य और उपलब्धियों के बल पर होना चाहिए और अगर अपने उच्चासन से आप महामहिमामय इन निचले मैदानों की ओर झाकेंगे तो देखेंगे कि मैं अकिंचन किस सीमा तक अकारण भाग्य की महान और निर्मम शत्रुता का शिकार हुआ बैठा हूं।

---

1 लारेंजो (१४९२-१५१९) पिएरो द मेदीची का बेटा और गियोवानी द मेदीची (लियो दशम) का भतीजा था। गियोवानी ने उसे १५१६ में उर्बिनो का ड्यूक बना दिया। उसका बेटा फ्लारेंस का प्रथम ड्यूक था। ग्यूलियानो द मेदीची जिसके प्रति सम्भवतः मकियावेली पहले अपनी कृति शासक समर्पित करना चाहता था पिएरो तथा गियोवानी का भाई था और ये दोनों लारेंजो द मैग्निफिको के बेटे थे।

निक्कोलो मैकियावेली

व्यावहारिक राजनीति के आदिगुरु के रूप में भारत में जो प्रतिष्ठा ब्राह्मण कौटिल्य को प्राप्त है, वही स्थान यूरोपीय राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में मैकियावेली को भी प्राप्त है। फर्क सिर्फ यही है कि भारत में हम कौटिल्य का नाम आज भी सम्मान के साथ लेते हैं और मकियावेली राजनीति की हर बुराई का इलज़ाम अपने सिर लेने वाला विवादास्पद मोहरा बन चुका है। शायद इसका कारण भारत देश के एकीकरण में कौटिल्य की सफलता और अपनी व्यावहारिकता के बावजूद मैकियावेली के दर्शन की विफलता है।

मैकॉले ने मैकियावेली की चर्चा करते हुए कहा था—"मुझे सन्देह है कि विश्व साहित्य के इतिहास में आमतौर पर कोई और नाम इतना बेहूदा भी हो सकता है जितना उस व्यक्ति का नाम जिसकी अब हम चर्चा करने वाले हैं।" परम्परागत मान्यताओं के अनुसार 'शासक' ("द प्रिन्स" अथवा इतालवी भाषा में "इल प्रिन्सीप") शैतान द्वारा प्रेरित कृति है।

भारत तक मकियावेली की कुख्याति इंग्लैण्ड होकर आई है और इंग्लैण्ड में वह पेरिस से पहुंची थी। फ्रांसवालों की नज़र में वह इसलिए बुरा आदमी था कि वे लोग इटली के तत्कालीन शासक कैथेराइन द मेदीची के प्रति काफी दुर्भाव रखते थे। १६४० इस्वी में जब 'शासक' का 'प्रथम अंग्रेजी संस्करण प्रकाशित हुआ था, उस समय तक उसके "चरित्र और चिंतन की कलुषता' सारे यूरोपीय जनमानस पर छा चुकी थी। यूरोपीय साहित्यकार अपने त्रासद नाटकों तथा अन्य कृतियों की रोमांचकारी पृष्ठभूमि के रूप में मैकियावेली के इटली को प्रस्तुत करते थे। शैतान का पर्यायवाची सम्बोधन 'ओल्ड निक' मैकियावेली का भी पर्याय ब

था और शैतान को मैकियावेली सरीखा कहना उतना ही सहज हो चुका था जितना मैकियावेली को शैतान सरीखा कहना।

धार्मिक विद्वेष से प्रेरित द्वन्द्वों में हर बुरे काम का दोष इसी विचारक के मत्थे मढ़ा जाता था। सच्चाई यह है कि उसने कभी भी कैथोलिक सम्प्रदाय की बुराई नहीं की। हां वह राज्य-कार्य में पादरियों के हस्तक्षेप का कट्टर विरोधी था। यही कारण है कि पोप के साम्राज्य के विरुद्ध की गई उसकी टिप्पणियां अनेकों सुधार विरोधी कैथोलिकों को सालती रहीं। इसके विपरीत प्रोटेस्टैण्ट सम्प्रदाय के अनुयायी उस कैथोलिक शासक को उपदेशक सलाहकार मानते थे और ये कैथोलिक शासक संत बार्थोलोमिऊ दिवस के भयावह हत्याकाण्ड के लिए उत्तरदायी थे। इतने परस्पर विरोधी भावों को जगाने वाला व्यक्तित्व यदि समय के धुंध और कुहरे में छिपकर एक कल्पनारंजित किम्वदन्ती का रूप धारण कर ले तो क्या आश्चर्य ?

'शासक' के सन्दर्भहीन उद्धरण इस कृति के लेखक की कुटिलता और नीचता के प्रमाण माने जाते हैं। इस कृति की यही निराधार बदनामी इसके रचयिता के जीवन एवं सत्य को निरन्तर विकृत करती चली जाती है। शुरू में इस रचना का स्वागत लगभग उपेक्षा के साथ किया गया था। धीरे धीरे जब इसकी प्रसिद्धि हुई और इसका मुद्रित संस्करण लोगों के हाथों में आया, तो धर्मगुरुओं ने इसके विरुद्ध हाहाकार मचाया। और यहीं से आक्षेप और कटूक्ति के युग का सूत्रपात हो गया।

बाद में कुछ लोगों ने मैकियावेली के प्रति सदाशयता से प्रेरित होकर इस कृति में किसी गुह्य अर्थ के निहित होने की भ्रान्त धारणा को लेकर 'शासक' की पैरवी करनी शुरू की। आलोचकों, समीक्षकों ने एक बार मैकियावेली के व्यक्तित्व पर दृष्टिपात किया और एक झक्की लफंगे का चमत्कारिक चरित्र चित्रण कर डाला।

यह कृति आज भी बदनाम है अंशतः मैकियावेली की परस्पर विरोधी धारणाओं के कारण और अंशतः इसलिए कि इसको उतनी बार पढ़ा नहीं जाता, जितनी बार इसे उद्धृत किया जाता है। इसकी इस बदनामी का एक कारण यह भी है कि अधिकांश लोग इसका मूल्यांकन एक समसामयिक सन्दर्भ की पूर्ति के लिए लिखी गई दस्तावेजी कृति के रूप में नहीं, निरपेक्ष

दृष्टि से लिखे गए राजनीतिक दर्शन के एक ग्रन्थ के ही रूप मे करते हैं।

उल्लिखित वक्तव्य से एक गलतफहमी हो सकती है। 'शासक' मात्र किसी पत्रकार द्वारा किया गया तथ्य सकलन अथवा सामयिक टिप्पणी नही है, यद्यपि इसे समझने के लिए तत्कालीन इतिहास का काफी ज्ञान अपेक्षित है। किम्वदन्ती के धुधलके को लाघकर मैकियावली के इटली का पर्यवेक्षण किए बगैर, उस युग की मन स्थिति का समझे बिना, 'शासक' की सार्थकता को न तो समझा जा सकता है और न ही उसकी पैरवी की जा सकती है।

यह कृति एक आशावादी व्यक्ति की वयक्तिक एव राष्ट्रीय त्रासद अनुभूतियो का परिणाम है। मैकियावेली के जीवनकाल मे इटली बराबर बर्बर युद्धो से त्रस्त रहा। इस विचारक तथा जन सामान्य के मतानुसार भी, तत्कालीन इतालवी रियासतें प्रतिद्वन्द्वी विदेशी शक्तियो की चक्की म पिसकर रह गई थी। इटली की यह स्थिति मौर्य शासको के उदभव तथा महामन्त्री कौटिल्य की प्रतिष्ठा से पूर्व के भारत की राजनीतिक स्थिति का ही प्रतिबिम्ब थी।

मकियावेली की युवावस्था मे इस देश मे काफी स्थिरता थी। जिस वर्ष, १४६९ मे उसका जन्म हुआ, उसी वर्ष फ्लारेंस के प्रभावशाली शासक के रूप में लारेन्जो द' मेदीची का उदभव हुआ था। यद्यपि उन दिनो इटली असख्य छोटी-बड़ी रियासतो मे बटा हुआ था, फिर भी मेदीची की कूटनीति देशभर म शान्ति बनाए हुए थी। यो पूरे इटली पर पाच प्रमुख शक्तियो का अधिकार था और इनमे से प्रत्येक का क्षेत्रीय विस्तार काफी था। ये पाच शक्तिया थी—स्वय फ्लारेंस वेनिस, मीलान, नेपल्स तथा पाप।

ईस्वी सन १४९२ मे लारेन्जो की मृत्यु हो गई। १४९४ मे शाह चार्ल्स अष्टम् ने नेपल्स की राजगद्दी पर अपना दावा जताने के लिए सेना लेकर इटली पर कूच का डका बजा दिया। इटली के बुरे दिनो की शुरुआत का यही वर्ष माना जाता है। चार्ल्स के उत्तराधिकारी लुई बारहवें ने अरागान के फर्डिनेण्ड के साथ सौदेबाजी करके नेपल्स के विभाजन का फसला किया और स्पेन की शक्ति को भी सत्ता सघर्ष के इस अखाड़े मे खीचे। स्पेन वाले कुछ ही वर्षों मे सारे दक्षिण के मालिक बन बठे।

सोलहवीं शताब्दी के प्रथम चरण म इतालवी शासक एव आक्रान्ता को दूसर से भिडाकर अपने बचाव का प्रयास करते रहे। मगर वे लोग आपस म कभी भी आवश्यक एकता बनाकर नहीं रख सके। (चन्द्रगुप्त मौय के उद्भव स पहले का भारत क्या इससे कुछ भिन्न था? अथवा ब्रिटिश सौदागरों क युग का भारत भी क्या इससे कुछ अलग था? और क्या आज का भारत इससे कोई बेहतर तस्वीर पेश करता है?) ईस्वी सन् १५२७ म मैकियावली की मत्यु हुई। उस समय तक इटली की नपुसकता अपने चरम बिन्दु पर पहुच चुकी थी। उसी वष राम को विद्रोही साम्राज्य-वादी सनिको द्वारा लूटा और जलाया गया। अन्तत इटली स्पेन के शिकजे मे आ गया। मीलान, नेपल्स और सिसिली पर स्पेन का सीधा शासन था। फ्लारेन्स उसी के सरक्षण म था और प्रायद्वीप म सैनिक छावनियो के माध्यम से स्पेन क शासक ही राज्य कर रहे थे।

इन कुछेक वर्षों के दौरान इटली की दुर्गति से, राष्ट्र द्वारा सहे जा रहे अपमान और लाछना से, मैकियावेली मन ही मन बहुत दुखी था, लेकिन इतालवी तथा विदेशी, मकियावेली की भाषा म बबर लोगों के बीच की विभाजन रेखा की चेतना थी, फिर भी इटली के प्रति उसकी धारणा राष्ट्रीय नहीं, जातिगत एव सास्कृतिक थी। वह शायद वेनिस और नेपल्स को इटली का अनिवाय अग नहा मानता था।

मेकियावेली का 'राष्ट्र' फ्लारेन्स था। उसकी राष्ट्र भक्ति इस नगर राज्य तक ही सीमित थी। फ्लारेन्स म कभी किसी प्रकार की सरकार रही हो, उसने एकाग्रचित्त होकर समर्पित भाव स इसी राज्य की सेवा की। यह उसका दुर्भाग्य ही था कि जब वह प्रौढ हुआ, तब तक एक स्वतन्त्र राज्य के रूप म फ्लारेन्स के दिन लद चुके थे।

निरन्तर आक्रमणो की शृखला ने फ्लारेन्स को कमजोर करके स्पेन का आश्रित बना दिया। १४९४ मे जब फ्रास ने हमला किया, तो लारेन्सो के बेटे को पसीना आ गया। आतक क मारे इस पियरो द मेदीची ने चाल्स क साथ सौदेबाजी शुरू कर दी। इस क्षुद्र हृदय शासक को नागरिकों ने उसकी अनुपस्थिति मे ही देशद्रोही घोषित कर दिया। पियरा के निष्कासन तथा चाल्स के राम अभियान के बाद फ्लारेन्स म एक बार फिर लोकतन्त्र

की स्थापना हुई।

प्रारम्भ मे फ्रांसीसियों के प्रभाव के कारण और फिर व्यापार तथा दूरदर्शिता के लिहाज से, फ्लारेन्स फ्रांसीसियो क साथ मैत्री सम्बन्ध बनाए रहा, लेकिन इसका कोई लाभ इस राज्य को नही हुआ। फ्रांसीसियो ने पहले फ्लारेंस द्वारा शासित नगर राज्य पीसा को स्वतन्त्र राज्य बनने मे मदद दी। यही से फ्लारेंस वाला पर पीसा को फिर से प्राप्त करने तथा परोक्ष रूप से मैकियावेली पर फ्लारेन्स के लिए एक कुशल और समथ नागरिक सेना खड़ी करने की सनक सवार हुई।

फ्रांसीसी शासक फ्लारेन्स से धन तो बटोरते रहे, मगर बदले मे इस राज्य को उन्होंने कुछ भी नहीं दिया। इस लोकतन्त्री सरकार पर पहले सवोनारोला का और बाद मे मैकियावेली क मित्र सादरिनी का प्रभाव रहा, लेकिन यह सरकार ईस्वी सन १५१२ तक ही चली। इसके बाद वनिस, स्पेन के फर्डिनेण्ड तथा पोप जूलियस द्वितीय के पवित्र सगठन न बलात मेदीची परिवार को गद्दी पर बैठाया और लुई द्वारा विजित लग भग तमाम इतालवी प्रदेश उससे छीन लिये।

मेदीची परिवार के सदस्यो, लिओ दशम तथा क्लीमेन्त सप्तम का पोप के रूप म उद्भव होने पर फ्लारेंस पोप-साम्राज्य के विस्तार की नीति का अनुयायी हो गया। १५२७ म एक अन्तराल आया। जब रोम मे हुई लूटमार का समाचार यहा पहुचा तो पोप क्लीमेन्त के प्रतिनिधि के शासन के विरुद्ध विद्रोह हुआ और एक बार फिर फ्लारेन्स म लोकतन्त्र की स्थापना हुई, लेकिन तीन ही वष बाद सम्राट चार्ल्स पचम की सेनाओ ने फ्लारेंस को एक बार फिर मेदीची परिवार के हवाले कर दिया। यह परिवार वहा लगभग दो सौ वर्षों तक जमा रहा यद्यपि मान्यता के स्तर पर ये लाग शीघ्र निरस्तित्व होते चले गये।

अपने समय के राजनीतिक जीवन से घनिष्ठतम स्तर पर मैकियावेली का सम्बन्ध अवश्य ही था। उसके पिता एक सामान्य किन्तु पुरातन प्रतिष्ठित परिवार के सदस्य एव फ्लारेंस में एक वकील थे। उसका कैशोर्य और यौवन फ्लारेंस की सस्कृति के स्वण युग मे बीता। जब फ्रांसीसी सेनाए निर्विरोध नगर मे घुस आई, उस समय तक मैकियावेली एक

अज्ञात युवक था। उसके साहित्यिक समकालीनों को उसका पता नहीं था और उस समय तक शायद उसने कभी कुछ लिखा भी नहीं था।

पन्द्रहवीं शताब्दी के अंतिम चरण की घटनाओं ने उसके मन पर गहरा प्रभाव डाला था। उसने मेदीची-परिवार का प्रभाव देखा और महसूस किया कि प्रजा की सद्भावना पर निर्भर न रहने वाला कोई भी शासन अधिक दिनों तक टिका नहीं रह सकता। उसने फ्लारेन्स में विभिन्न गुटों की आपसी प्रतिद्वंद्विताओं को, सवोनारोला के प्रभाव के युग में देखा और देश की आंतरिक एकता के बल पर खड़ी होई एक शक्तिशाली सरकार की जरूरत महसूस की। शीघ्र ही उसे और भी निकट से राजनीतिक समस्याओं से उलझना पड़ गया।

फ्लारेंस के लोगों में एक बड़ी बुद्धिमत्तापूर्ण परम्परा थी। वहां लेखकों और साहित्यकारों को सरकारी नौकरी दी जाती थी, यद्यपि इस नौकरी में वेतन बहुत कम मिलता था। मकियावेली द्वारा आजीवन भोगी गई दरिद्रता इसका प्रमाण है। लगभग तीस वर्ष की उम्र में १४९८ में उसकी नियुक्ति सचिव और द्वितीय श्रेणी के मन्त्री के रूप में हुई। नागरिक सेवाओं में यह पद काफी ऊंचा माना जाता था। उसका काम सरकार की कार्यकारिणी समितियों को सलाह देने का था।

इस पद पर रहकर प्राय: वह कूटनीतिक दायित्वों का निर्वाह करता रहा। प्रशासनिक तथा सैनिक पदों पर भी उसने काम किया। मकियावेली १४ वर्ष तक सरकारी नौकरी करता रहा। १५१२ में लोकतन्त्री शासन के पतन के साथ ही उसके भी कार्यकारी जीवन का अन्त हो गया।*

सोदेरिनी उसे बहुत पसन्द करता था और उससे ढेरों काम लेता था। इसीलिए मकियावेली से ईर्ष्या करने वाले शत्रु बहुतेरे थे। स्पेन, फ्रांस तथा साम्राज्य की सैनिक और राजनीतिक गतिविधियों का काफी गहरा और त्वरित प्रभाव फ्लारेन्स-वासियों के स्वास्थ्य पर पड़ता था। अतएव वहां का लोकतन्त्री सरकार निरन्तर कूटनीतिक आदान प्रदान में उलझी रहती

*मैकियावेली के कार्यकारी जीवन का यह ब्यौरा डॉक्टर डब्ल्यू० ब्रिमस्टाइन द्वारा लिखित 'इटालियन स्टडीज फार १६५६ (हफर एण्ड सन्स, कैंम्ब्रिज) पर आधारित है।

लेकिन इस मुद्दे पर भी भाग्य ने उसका साथ नहीं दिया। १५०५ में सोदेरिनी ने मैकियावेली को नागरिक सेना-सम्बन्धी अपनी योजनाओं को क्रियान्वित करने का निर्देश दिया। वह फ्लारेंस द्वारा शासित प्रदेशों में घूम घूमकर सनिकों की भरती की अथक चेष्टा करता रहा। १५०७ के प्रारम्भ में एक अध्यादेश जारी करके नागरिक सेना के नवरत्नों की नियुक्ति की गई। इस समिति का अध्यक्ष उसी को तैनात किया गया, लेकिन मैकियावेली के सिपाही पीसा के विरुद्ध युद्ध में अपने करतब नहीं दिखा सके और १५१२ में स्पेन वालों से लड़ते हुए बुरी तरह से विफल रहे। यद्यपि दावा यह किया जाता है कि स्पेनी सैनिकों से लड़ते समय फ्लारेंसवासी सैनिकों के साथ धोखा किया गया था। यों इस नागरिक सेना की पैरवी के लिए तर्क यह भी दिया जा सकता है कि अपने देश की सैनिक और नागरिक गरिमा को जगाने का मैकियावेली का प्रयास १५२९-३० में जाकर रंग लाया जब फ्लारेंस लोकतन्त्र ने सफलतापूर्वक एक दीर्घ कालिक सैनिक घेरे का डटकर मुकाबला किया।

मैकियावेली लोकतन्त्र का नहीं दम्भ का नकन था। मेदीची के पुन सत्तारूढ़ होने पर इसे अपदस्थ कर दिया गया। मैकियावेली अब भी राजनीतिक घटना प्रवाह का अवलोकन जिज्ञासु और चमत्कृत दृष्टि से कर रहा था। इस घटना प्रवाह में अपनी भूमिका निभाने के अवसर से उसे निरन्तर वंचित किया जा रहा था। जमाने द्वारा पहुँचाई गई यह असह्य चोट ही भावी पीढ़ियों के लिए वरदान बन गई। वह अपने मन की कटुता को लगातार अपनी कृतियों में उड़ेलता रहा। जो सलाह या मार्गदर्शन वह अपने समकालीन शासकों को देना चाहता था वह उससे कागज काले करता चला गया।

नवम्बर १५१२ में उसने बहुत आशान्वित होकर मेदीची को एक पत्र लिखकर शासन को सुधारने की राय दी। मकियावेली को नजरबन्द कर दिया गया। कुछेक महीनों बाद उस पर नये शासकों के विरुद्ध षड्यन्त्र रचने का सन्देह किया गया। उसे बन्दी बनाकर भारी यातनाएं दी गईं, लेकिन शीघ्र ही उसे मुक्त कर दिया गया। वह अपने निर्धन पारिवारिक घर में सानकाशियानो में जाकर रहने लगा। वहां से वह फ्लारेंस की

इमारतो को देख सकता था। वह सोचता रहता था कि इन मीनारो के साये मे और महराबो के पीछे क्या हो रहा है? यही आवास के दौरान उसकी साहित्यिक गतिविधियो का समृद्धतम दौर गुजरा।

समय-समय पर वह फ्लारेन्स आता रहा। अवकाश ग्रहण करने के कुछ वर्ष बाद उसने ओरिसेलारी उद्यान मे होने वाली साहित्यिक गोष्ठियो मे भाग लेना शुरू किया। यहा वह अपनी रचनाए और लेख भी पढा करता था और उसे अपनी कला के पण्डित का-सा सम्मान प्राप्त होता था।

इसी दौर मे मेदीची घराने से उसका परिचय कराया गया। सरकारी पद पाने की उसकी आशाए एक बार फिर जाग उठी। व्यापारिक महत्त्व के कुछेक काम करने के बाद वह थोडे समय के लिए फिर सावजनिक जीवन मे लौटा। वह रोम आया। यहा उसे पोप क्लीमेन्त की ओर से 'फ्लारेन्स का इतिहास' के लेखन के लिए आर्थिक सहायता दी गई। यहा उसने रोमाना मे एक नागरिक सेना खडी करने के लिए पोप को तैयार करना चाहा। उसकी यह चेष्टा भी विफल रही। पोप ने इस दिशा मे कोई व्यावहारिक कदम नही उठाया। बहुत कोशिश के बाद अन्तत उसे फ्लारेन्स के परकोटे की किलेबन्दी की एक परियाजना को पूरा करने का दायित्व सौंपा गया।

दुर्भाग्य से मकियावेली का सावजनिक जीवन मे पुनरागमन भी उसके लिए सुखकर सिद्ध नही हुआ। जब लोकतन्त्र का फ्लारेन्स मे पुनरोदय हुआ, तो उसे मदीची परिवार का पिटठू समझा गया। नये शासको की नजर म वह सन्दिग्ध व्यक्ति बन गया। अतएव उसकी खुलकर उपेक्षा की गई। इसके कुछ ही समय वाद वह बीमार पड गया। उसके उदर मे किसी भयकर रोग ने डेरा डाल दिया था।

ईस्वी सन १५२७ मे उसका दहावसान हा गया। उसके पुत्र के कथनानुसार उसकी मत्यु के समय उमका परिवार बहुत दरिद्रावस्था म था।

मैकियावेली के पारिवारिक जीवन के विषय मे हमे बहुत कम जानकारी मिलती है। ईस्वी सन् १५०२ मे उसने मारिएत्ता कोर्सिनी से विवाह किया था। मारिएत्ता से उसके छ बच्चे हुए। पत्नी उसके प्रति समर्पित थी, लेकिन क्योकि मैकियावेली का मन प्राण राजनीति मे

शरद जोशी

जन्म 21 मई 1931, उज्जैन (म० प्र०)

हुआ था, अतएव उसकी भद्रा पत्नी जीवन भर उसकी उपेक्षा की शिकार बनी रही।

उसके सम्बन्ध में जैसे अनैतिक, अनुशासनहीन जीवन की परिकल्पना की जाती है, वैसा जीवनयापन उसने सचमुच कभी किया होगा, इसमे सभी जानकार लोगो को सन्देह है। एक कुरूपा वेश्या से हुई अपनी किसी मुलाकात का वणन करते हुए जो एक पत्र उसने अपने मित्र फ्रांसेस्को वेत्तोरी को लिखा था, वह और कुछ नहीं, मात्र साहित्यिक कल्पना की ही उडान मालूम होता है।

निस्सन्देह वह भावातिरेक से ग्रस्त प्राणी था। परम्परागत बदनामी के अनुसार जिस षड्यन्त्रकारी, धूत और धमवान ठग का चित्रण किया जाता है, वह यथाथ मैकियावेली से कही मेल नही खाता, लेकिन यदि उकसाये जाने पर वह भावान्दोलन का शिकार हो सकता था—उदाहरणतया कभी अपने ही दुर्भाग्य से और कभी भाडे के सैनिकों द्वारा की गई कृतघ्नता के कारण—तो भी उसके जीवन क्रम से छोडा गया प्रभाव यही है कि वह भीड से अलग-थलग रहने वाला, चेहरे पर अपमानजनक, तिरस्कारपूण मुस्कान धारण किए हुए दूर खडा रहने वाला दम्भी दशक हो सकता है, सामान्य व्यक्ति की कुण्ठाओं तथा वर्जनाओ के नीरस बोझ तले दबने वाला औसत प्राणी नही। राजनीतिक जीवन मे व्यावहारिक स्तर पर महत्त्वपूण भूमिका निभाने की आकाक्षा के साथ, गर्वीले स्वभाव तथा बौद्धिक अलगाव की पटरी तो बैठ जाती है, लेकिन सदव तो ऐसा नहीं होता।

विलारी के शब्दो मे युवा मैकियावेली का जीवन वृत्तान्त इस प्रकार है "मध्यम कद, इकहरा शरीर, चमकती हुई आखें, काले बाल, काफी छोटा-सा सिर, शुक-नासिका और कसे हुए से होठ। उसके पूरे व्यक्तित्व से जाहिर होता था कि वह बडी पैनी नजर से हर वस्तु और घटना का निरीक्षण करता है और बडी गहराई स सोचता है, लेकिन इसी व्यक्तित्व से यह प्रभाव भी पदा होता था कि यह व्यक्ति दूसरो पर कुछ अधिक प्रभाव या दबदबा नही रखता—न ही रख पाता। निरन्तर उसकी मुख मुद्रा पर जो व्यग्य की, विद्रूप की छाया बनी रहती थी, उससे वह छुटकारा नही

पा सकता था। उसकी आखो मे इसकी झलक मिलती थी। इसी से लगता था कि यह व्यक्ति बडी निममता से, बडे निरपेक्ष भाव से किसी भी स्थिति का मूल्याकन कर सकता है। इसके बावजूद उसका जीवन और व्यक्तित्व प्राय उसकी अपनी प्रबल कल्पना शक्ति के द्वारा शासित रहता था। कभी-कभी तो उसकी यह कल्पना शक्ति इस हद तक उस पर छा जाती थी कि वह अतिकल्पनाशील और अकल्पनीय कोटि का भविष्य द्रष्टा नजर आने लगता था।"

वह कठोर परिश्रमी प्राणी भी था। जिस लोकतत्र की सेवा उसने अकथनीय परिश्रम से की थी, वह उस समय ध्वस्त हुआ जब मैकियावेली ४० वप का था। इसके बाद के जबरदस्त बेकारी के जमाने मे उसने कई पुस्तकें लिखी और इन पुस्तको के बल पर वह इतालवी गद्य के आद्य गुरुओ मे गिना जा सकता है। ये पुस्तकें थी— शासक', 'लिवी विषय का वक्तव्य' (उसका वास्तविक राजनीतिक दशन), 'युद्ध की कला', 'फ्लारेंस का इतिहास, शोध ग्रथ 'भाषा-सम्बधी बातचीत', गलत मूल्याकन के शिकार कुछ नाटक 'मान्द्रागोला' और 'क्लीजिया' और इसके अतिरिक्त भी गद्य एव पद्य मे लिखित अनेक रचनाए।

आज सामान्यतया यह कहा और समझा जा सकता है कि उसकी मेधा और व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करने का असाधारण दायित्व 'शासक' पर डालकर समीक्षको-आलोचको ने उसके साथ घोर अन्याय किया है, वर्ना उसका बुद्धि चापल्य और उसकी अभिव्यजना, उसका पाण्डित्य एव उसकी पैठ बहुत गहरी थी फिर भी उसके विषय मे कोई भी निणय दने के लिए 'शासक' को आधार बना लेना अनुचित नही है, क्योकि यह कृति उसकी सवश्रेष्ठ रचना है और उसके सारे राजनीतिक चिन्तन का सार इसी मे निहित है।

आज भी यह कृति लोगो की भावनाओ को भडकाती है और विवाद का विषय बनी हुई है। इसका कार्य, इसके लेखन का उद्देश्य, इसके लेखन की तिथि, इसका अन्तिम अध्याय और यह मुद्दा भी कि पहले-पहल यह कृति अपने प्रारभिक समर्पण के साथ प्रकाशित हुई थी या उसके बिना— ये ऐसे मामले हैं जिन पर आज भी कोई अन्तिम और अकाटय निणय नही

शरद जोशी
जन्म 21 मई 1931, उज्जैन (म० प्र०)

दिया जा सकता।

मैकियावेली की धारणा थी कि 'शासक' के प्रकाशन के लिए क्षमा याचना की, अथवा कोई सफाई देने की कुछ विशेष आवश्यकता नही है। १० दिसम्बर, १५१३ को फ्रासस्को वेत्तारी के नाम लिखे गए अपने एक पत्र मे उसन पुस्तक के उद्‌भव और उसके कथ्य विस्तार का इतना विस्तृत ब्योरा दिया है कि उसके आधार पर कम-से-कम कुछेक अतिरजित धारणाओ का खण्डन निश्चय ही किया जा सकता है।

लगभग व्यग्य और पश्चात्ताप की भाषा मे यह पत्र फ्लारेन्स से दूर रहकर विताए गए उसके जीवन की कहानी कहता है जो इस प्रकार है वह सूर्योदय के साथ ही उठ जाता है और यह देखने जाता है कि उसके लकडहारे उसके लिए कसे अपना काम पूरा करते हैं, वह कभी दान्ते को पढने के लिए इधर उधर भटकता है, कभी पेत्राक, ओविद, तिबुलस आदि को एकाकी बैठकर पढ़ता तथा अपनी प्रेम-कहानियो को दुहराता, बार-बार जीता है। कभी-कभी वह राह मे आते-जाते किसी राहगीर के साथ बतियाता हुआ शराब घर चला जाता है। उदासी और चिन्तन मे मग्न सस्ते किस्म का खाना खाता है, फिर सराय मे जा पहुचता है और चौपड अथवा ताश खेलते हुए, स्थानीय व्यापारियो के साथ मन बहलाते हुए अपना समय काटता है।

लेकिन फिर शाम हो जाती है। मैकियावेली घर लौटता है और अपने अध्ययन कक्ष मे जाकर आसन जमा लेता है। अपने चिक्कन कपडे उतार दरबारी वेशभूषा पहनकर और कल्पना के घोडे पर सवार होकर ऐतिहासिक राजदरबारो मे प्रविष्ट होता है और इतिहास के प्रसिद्धतम तथा महानतम व्यक्तियो के साथ दोस्ताना ढग से बातचीत करता है। वह राजनीति के सम्बन्ध मे बातचीत करता है। उसका जन्म ही इसीलिए हुआ था। वह इन महान शासको से उनके द्वारा अपनाई गई विशिष्ट नीतियों के कारण पूछता है और वे उसे स्पष्ट रूप से सारी बातें बताते हैं।

एक बार उसने बातचीत के दौरान कहा था, "मैंने रियासतो के बारे में एक छोटी-सी पुस्तक लिखी है। इसमे मैंने जितनी गहराई से हो सकता

शरद जोशी

निश्चय ही फिर से सरकारी नौकरी पा जाने की आशा और आकाक्षा का इसमे काफी हाथ था। पुस्तक के "ग्यूलियानो द' मेदीची" (और बाद मे लारेन्जो द' मेदीची) के नाम किये गये समपण से उसकी अवसरवादिता-भर ही नही झलकती है, चाहे मैकियावेली सरकारी नौकरी पाने के लिए बेहद उत्सुक रहा हो। उसके पास ऐसा सोचने का कोई कारण ही नही था कि ग्यूलियानो तथा लारेन्जो इतिहास-सिद्ध प्रख्यात एव महान व्यक्ति सिद्ध नही होगे कि उनके द्वारा अकाटय निणय शक्ति एव प्रबलता से काम किये जाने की और निरन्तर फूट एव विदेशी सत्ता के शिकार इटली का उद्वार करन की 'शासक' मे व्यक्त की गयी आशा पूरी नही होगी।

वस्तुत सर्वोत्तम कोटि के नये शासक का मैकियावेली द्वारा किया गया कल्पनाप्रवण चरित्राकन इतनी ईमानदारी से किया गया है और इतना जीवन्त है कि वह मात्र दासभावना से उदभूत नहीं हो सकता। जहा कही उसने व्यग्य विद्रूप का आश्रय लिया है, अथवा चाटुकारिता की चेष्टा की है, वही वह हलका पड गया है और निवस्त्र हो गया है।

यह भी कहा जा सकता है कि मकियावेली की मौलिक रुचि राज्य मे थी, प्रशासनिक पद्धतियो मे नही। राज्य की भी उसकी धारणा उस सत्तात्मक इकाई पर आधारित है, जो आत्म निमर है, जो अन्य राज्यो से निरन्तर सघपरत रहती है और जा इसी कारण निरन्तर शक्ति और सत्य की खोज मे रहती है। उसके द्वारा वर्णित नया शासक राज्य का ही मानवीकृत रूप था। इसी के बहाने मकियावेली को मेदीची को प्रसन्न करने और उसकी अनुकम्पा प्राप्त करने का अवसर मिला। इसी के माध्यम से उसने प्रभावशाली विदेशनीति की उच्च राजनीतिक चुनौती के विषय में अपनी धारणाओ का नाटकीकरण किया।

मैकियावेली ने इस कृति 'शासक' में विदेशनीति के सम्बन्ध मे जो विचार व्यक्त किय हैं, उन्हें जसे कोई निरकुश शासक अपने वैदेशिक सम्बन्धो का आधार बना सकता है, वसे ही किसी लोकतन्त्र की विदेश-नीति का आधार भी बनाया जा सकता है और मकियावेली के निरकुश शासक को आप अनुत्तरदायी, अत्याचारी, आतकवादी शासक नहीं कह सकत। वह बार-बार इस बात पर जोर देता है कि शासकों को अपने

शासन का आधार जनता की सद्भावना को बनाना चाहिए। यह शासक पौर्वात्य देशो के किसी प्रजापीडक, स्वेच्छाचारी शासक-सा निरकुश नही हो सकता। उसे अपनी प्रजा की भावनाओ तथा सवेदनाओ के प्रति निरतर सजग रहना चाहिए। उसे क्रूरता का मार्ग अपनाने के लिए प्रस्तुत रहना पडता है, तो केवल इसलिए कि दूरगामी परिणामो की दृष्टि से कई बार अशक्त और क्रूर सिद्ध होने की अपेक्षा क्रूरता का परिचय देना अधिक दयालुता का प्रमाण होता है।

इसलिए मैकियावेली की इस कृति मे यदि कथ्य के स्तर पर कोई विसगति या विरोधाभास मिलता है—यदि वह एक स्थान पर लोकतन्त्री दृष्टिकोण से और दूसरे स्थान पर निरकुश शासक के दृष्टिकोण से विवेचन करता हुआ दिखाई देता है, तो इसका यह मतलब नही कि कभी वह स्वातन्त्र्य की पैरवी करता है और कभी आतकवाद की। हमे काल गणना का भ्रम उत्पन्न करने वाली परस्पर विरोधी धारणाओ, लोकतन्त्र और तानाशाही (टोटलिटेरियनिज्म) के बीच विरोध की धारणाओ को लेकर, उसके उद्देश्यो के प्रति कोई भ्रान्ति अपने सामने पैदा नही होने देनी चाहिए। फ्लोरेन्स के लोकतन्त्रवादी तन-मन प्राण से मेदीची से घृणा करते थे, लेकिन दोनो ही पक्ष अपने-अपने पथ का अनुसरण कट्टरपथी ढग से कर रहे थे। मेदीची लोग जितने कट्टर तानाशाह थे, लोकतन्त्रवादी विचारक सावजनिक मताधिकार के उतने ही कट्टर प्रचारक और धारक थे।

मैकियावेली अपने-आप मे अधिकार और शक्ति से सम्पन्न राज्य की कल्पना को लेकर सारा चिन्तन कर रहा था। वह चाहता था कि उद्धार की तमाम आशाओ के दायरे से परे तक, सैकडो बडे छोटे टुकडो मे बटे हुए इटली पर समग्र अपना अधिकार और नियत्रण स्थापित करने म समय शासन की स्थापना की जाए। उन दिनो आवश्यकता इस बात की थी कि विदेशी आक्रमण और नियन्त्रण का प्रतिरोध करने का इच्छुक इतालवी शासक निममतापूवक अपने काय व्यापार का सचालन करे।

इस व्यावहारिक विचारधारा मे प्राय ही वह एक राजनीतिक दशन का भी प्रतिपादन कर रहा था। यह

मकियावेली प्रेरणा के लिए अतीत की ओर देखता था, लेकिन अपनी धारणाओं को रूप देने के लिए वह विभिन्न व्यक्तियों के राजनीतिक कार्य-व्यवहार के आधार पर सामान्यीकरण की विधि अपनाता था। इस विधि के अन्तर्गत अतीत की तुलना वर्तमान से करनी पड़ती थी और मैकियावेली के युग के विशिष्ट 'आधुनिक शासक' वे लोग थे जो फ्रांसीसी आक्रमणों के कारण कमजोर पड़े राष्ट्रीय समुदायों की भ्रष्ट स्थिति का लाभ उठाकर दूसरों के अधिकारों का हनन करके गद्दी पर बैठे थे।

सीज़र बोर्गिया के चरित्र चित्रण में मैकियावेली की प्रशासनिक सुधारक की एवं किसी भी कुशल इतालवी सत्तालोलुप तानाशाह के समक्ष प्रस्तुत संभावनाओं की कल्पनाएं मिश्रित थीं। सीज़र द्वारा अपने पिता पोप अलेग्ज़ान्दर की सहायता तथा निर्मम इच्छाशक्ति के बल पर इटली के मध्य अपने लिए एक साम्राज्य खड़ा कर लेने की घटनाएं मैकियावेली को याद थीं। बरसों पहले जब उसे फ्लोरेंस की लोकतंत्री सरकार की ओर से सीज़र के पास भेजा गया था, तब सीज़र उसे एक खतरनाक सम्भावित शत्रु नजर आया था, लेकिन इस कृति 'शासक' में वह सीज़र का एक जीवन्त आदर्श के रूप में प्रस्तुत करता है। कोई भी इतालवी शासक जो आधे मन से काम करने और अधूरी कार्यवाहियां करने की आदत नहीं रखता और जो तिनके से झोपड़ी छवाने का साहस रखता है, मकियावेली के अनुसार उस सीज़र को उदाहरण मानकर चलना चाहिए। इस स्तर पर आदर्श प्रस्तुत करने के जोश में मैकियावेली ऐतिहासिक सीज़र को भूल गया है। इस पुस्तक में प्रस्तुत सीज़र इस विचारक के राजनीतिक चिन्तन का जीवन्त रूप है, जिसे वह मेदीची के सामने आदर्श रूप में प्रस्तुत कर रहा है।

'शासक' में व्यक्त मनोवैज्ञानिक पैठ और मानवीय चरित्र का सार्वजनिक जीवन के परिप्रेक्ष्य में किया गया गहन अध्ययन चमत्कारिक है। इस पुस्तक में पैगम्बरों जैसी भविष्यवाणी करने की प्रवृत्ति पायी जाती है। यही नहीं, इस कृति का गद्य भी बड़ा अभिव्यात्मक, भावातिरेक से भरपूर है और मजे की बात यह कि इस कृति

सस्करण से लेकर आज तक पाठक को चौंकाने और भटका दन की असाधारण क्षमता बनी हुई है। सदैव बनी रहगी।

मैकियावेली जितना अच्छा कलाकार था, उतना ही अच्छा विश्लेषण-कर्त्ता भी था। अपने विश्लेषण की प्रक्रिया म भी वह चौंकाता और घुटियाता हुआ चलता था। अथ की विपरीतता और सामान्यीकरण, दोनो से उसे प्यार था। वह अपनी टिप्पणियो और निष्कर्षों को निरतर नाटकीय रूपाकार मे प्रस्तुत करता हुआ चलता था। तक की अपेक्षा अत-र्ज्ञान का सहारा वह अधिक लेता था और वांछित प्रभाव उत्पन्न करने के लिए अपने निष्कर्षों को लगातार अतिरजित करता चला जाता था।

दुस्साहसपूण और वेगपूण वक्तव्यो मे उसे एक विशेष प्रकार के रोमाच और पुलक का अनुभव होता था। किसी भी कीमत पर प्रशासन मे मुस्तदी और फुर्ती लाना उसका लक्ष्य था। विदेशी सत्ताओ की सस्त-मिजाजी का मुह तोड जवाब फुर्ती से ही देने के लिए उसके द्वारा इतालवी शासको के प्रति किया गया आह्वान ही शायद वह कारण है, जिसने शता ब्दियो से लगातार इस कृति को उदारचेता विचारको की तीव्र आलोचना का विषय बना रखा है लकिन बात सिफ इतनी ही नही है। जब 'शासक' की अमरता के विषय मे सब कुछ कह और सुन लिया जाता है तब भी सवाल यह रह जाता है कि इसम प्रस्तावित आचारसहिता का सैद्धान्तिक औचित्य स्वय सिद्ध होते हुए भी और अधिकाश शासको के प्रशासनिक और दैनिक व्यवहार का नियामक आधार होते हुए भी सभी की वितृष्णा का विषय बना हुआ है।

मकियावेली का दावा था कि वह राजनीति का विवेचन एक नये ढग से कर रहा है। उसका कहना था कि शासको की आचारसहिता के विषय मे उसके निष्कर्षों का आधार वायवीय नही, बल्कि ऐतिहासिक विश्लेषण होगा। इसी बिन्दु पर आकर 'शासक' पत्रकारिता के स्तर से उठकर और एक समसामयिक सन्दभ की पूर्ति के लिए लिखित दस्तावेज के दर्जे से उठकर प्रशासन की कला के सम्बन्ध मे लिखी गई एक निबन्ध रचना बन जाता है और उसे एक 'क्लासिक' का सम्मान प्राप्त हो जाता है। उसके द्वारा अपनायी गयी विवेचन पद्धति क्रान्तिकारी और विज्ञान-सम्मत थी

अथवा नहीं, इस सवाल का जवाब शायद हम यहा नही दे सकते। यह सच है कि 'राजनीति शास्त्र' के विकास-पथ पर 'शासक' एक मील का पत्थर है।

'शासक' के द्वारा पूजीभूत तमाम रोमाच और वितृष्णा इस स्पष्ट स्वीकृति से उदभूत हैं कि व्यवहारत अपने घोषित-अघोषित लक्ष्यो की पूर्ति के लिए सभी सरकारें, सभी शासक निममता और क्रूरता का व्यवहार करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। मकियावेली द्वारा प्रतिपादित मानव-सम्बधी इस हीनभावना का हम लोग शायद आज उतने जोर से चुनौती नही दे सकते, जितने जोर से हमारे पुरखे दिया करते थे। जहा वह वणन करने लगता है, वहा वह सिद्धा ता का कोई प्रश्न ही नही उठाता, लेकिन 'शासक' मकियावेली-युगीन शासको के दैनन्दिन व्यवहार पर टिप्पणी से अधिक भी बहुत कुछ है। वह माग दशक के रूप मे स्वय को मा यता दिलाना चाहता था और इसीलिए वह प्रशासन-सम्ब धी म त्रणा दे रहा था।

यद्यपि वह कई बार बात को टालने की भी कोशिश करता था। वह चाहता तो सख्त कायवाही के औचित्य और आवश्यकता को सिद्ध भी कर सकता था, फिर भी अन्तत उसने यही कहा कि राजनीति म किसी भी अच्छाई-बुराई का फसला उसकी कायवाही के यथाथ उद्देश्य और उसकी सफलता के ही आधार पर किया जा सकता है। इस मुद्दे पर मकियावेली का चिन्तन आज भी उतने ही तीव्र मतभेद का विषय है, जितना वह शता ब्दियों पहले था।

'शासक' की भाषा उतनी आधुनिक नहीं है, जितना उसके कलेवर मे बाधा गया चि तन। हमने इसे आधुनिक बनाने का कोई विशेष प्रयास भी नहीं किया, लेकिन एक परिवतन स्पष्ट दिखाई देगा। इस कृति के इतालवी शीषक 'इल प्रि सीप' का शाब्दिक अथ अग्रेजी मे 'द प्रिन्स' है और इस अग्रेजी शब्द का अथ हम लोग सकडो वर्षों से राजकुमार अथवा युवराज ही पढ़ते आये हैं, लेकिन शताब्दियो के अध्ययन और विवेचन के दौरान इस कृति म 'प्रि सीप' का अथ कभी भी 'राजकुमार' नही लगाया जा सका। यही कारण है कि अर्थ की स्पष्टता को ध्यान मे रखकर इसका

हिन्दी पर्याय 'शासक' और 'राजा' शब्दों को बनाया है। इसी प्रकार से 'प्रिन्सीपलिटी' शब्द के लिए भी 'राज्य' या रियासत' और 'डोमीनियन' के लिए 'विजित प्रदेश' अथवा 'उपनिवेश' जसे शब्दों का प्रयोग किया है।

इस अनुवाद की प्रक्रिया म मक्यिावेली की जटिलतम धारणाओं को सीधी और स्पष्ट हिन्दी म रखने की चेष्टा की गई है। इसलिए कई बार वाक्यों की सरचना को भी बदलना पड़ा है। इससे एकरसता को टालने में भी सहायता मिली है।

मैकियावेली की मूलकृति म 'ओनोर' (सम्मान), 'ग्लारिया' (कीर्त्ति अथवा यश), 'फोच्यूना' (भाग्य), 'नेसेसिता' (आवश्यक्ता), 'विर्चू' (ईमानदारी गुणवत्ता) आदि का बारम्बार प्रयोग हुआ है। मक्यिावेली तथा 'रिनेमा' काल के अन्य यूरोपीय लेखकों के लिये ये शब्द चलते सिक्के थे। कई बार इनका प्रयोग बड़ी समझदारी से किया गया है। उदाहरणार्थ आठवें अध्याय मे जहां मक्यिावेली ओलिवरोत्तो द्वारा अपने पालक-पिता को छलने और उसकी हत्या करने की घटनाओ का वर्णन करता है, इस शब्द 'ओनेर' (आत्म-सम्मान) का बार-बार प्रयोग हुआ है और इस प्रयोग से इसमे निहित विद्रूप की तीव्रता बढ़ी है।

लेकिन मैं इन्हीं कुछेक शब्दों के आधार पर पूर निबन्ध की सरचना को एक खतरनाक आदत समझता हू और अनुवाद करते समय हर शब्द के पर्याय के रूप म बार-बार एक ही शब्द का प्रयोग आद्योपान्त करते रहना भी जरूरी नही समझता। इससे मूलकृति का सौन्दय विरूप होता है।

मैं यह आशा ही कर सकता हू, दावा नही कि पाठक इस अनुवाद मे मूल लेखक मैकियावेली के लेखन की, उसके चिन्तन की प्रबल धारा का बल अनुभव कर सकेंगे। इस गद्य मे चुस्ती है तीव्र प्रवाह और सीधे चोट करने की क्षमता भी। इसम कटु व्यग्य के लिए भी स्थान है, और अलकार पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए भी।

एक साहित्यिक कृति के रूप म शासक की सरचना प्राय औपचारिक शैली मे की गयी थी। उदाहरणाथ अध्यायो के शीषक लातीनी भाषा मे

रखे गये थे।[1] आज इस कृति का दायरा कुछ सिकुड़ा हुआ और कुछ दूरस्थ भी नजर आ सकता है, लेकिन पाठक को चौंकाने के लिए चौंकाते चले जाने के लिए इसके चिन्तन का आधुनिक युग में किया जा रहा प्रयोग काफी होगा। इसका लेखक एक प्रबल और जटिल भावावेगों का स्वामी था। उसके कल्पना प्रवण प्रबुद्ध व्यक्तित्व का निर्विवाद आईना यह कृति है।

इस अनुवाद का आधार 'इल प्रिंसीप' का वह संस्करण है, जो १९२९ में फ्लोरेंस से प्रकाशित हुआ था और जिसका सम्पादन मेन्योर मेजान तथा कसेला ने किया था।

---

1 कृति के भीतर ही निहित प्रमाणों तथा इस [illegible] का [illegible] मूल्यांकन करने वालों ने यह बताया है कि [illegible] का [illegible] विरोध और [illegible] के हाथों [illegible] के बाद उसकी प्रेरणा [illegible] साहित्य [illegible] वर्ष ११ अंक ४ (दिसम्बर १९६६) [illegible]

१

राज्य के प्रकार और उनकी प्राप्ति के उपाय

आज तक जितने प्रकार के राज्यो, रियासतो अथवा उपनिवेशो के अधीन लोग रहते आये हैं और आज भी रह रहे हैं, वे सब या तो लोकतान्त्रिक पद्धति के शासन थे, या फिर किसी राज रजवाडे की निजी सपत्ति। रियासतें कई बार परम्परा से स्थापित राज परिवारो के वशजो को उत्तराधिकार म मिलती हैं और कई बार एकदम नये शासको के हाथो म चली जाती हैं। नये हाथो म जाने वाली रियासतो म भी कुछेक के शासक ऐसे व्यक्ति बनते हैं जो पहले कभी शासक नही रहे, जैसे मीलान के शासक फ्रासेस्को स्फोर्ज़ा और कुछेक उत्तराधिकार की परम्परा से पुष्ट रियासतें राज्य के एक नये अग के रूप म जुड जाती हैं, जैसे स्पेन के राजा को मिली नेपल्स की रियासत। इस प्रकार प्राप्त की गयी रियासतें या तो राजतन्त्र के अतगत रह चुकी होती हैं या लोकतन्त्र की अभ्यस्त होती हैं। उन्हें प्राप्त करने वाला शासक कभी अपने बाहुबल से उनको प्राप्त करता है और कभी दूसरो की सहायता से, कभी भाग्यवश और कभी कौशल से।

रूप से उसके प्रति शासितो और पडोसी शासकों का स्नेह भाव कुछ अधिक ही बना रहता है। अगर वह अपने असाधारण दुर्गुणो के कारण लोगा की घणा को भडकाता नही है तो जनता सहज ही उसका पक्ष लेती है। उसके शासन की पुरातनता और निरतरता की गहराइयो मे तमाम परिवर्तनो एव उनके कारणो की स्मतिया डूब जाती हैं, क्यो कि हर सफल परिवतन किसी आगामी परिवतन की स्वीकृति की गुजायश छोड जाता है दीवार को आगे बढाने के लिए छोडे गए दातेदार छेद की तरह ।

३

मिश्रित राज्य

लेकिन नयी रियासतों में कठिनाइयां पैदा होती ही हैं। पहली बात, अगर कोई रियासत एकदम नयी न होकर किसी पुराने ही राज्य में जोड़ा गया कोई नया हिस्सा है (जिससे सारा का सारा राज्य, समग्रत, सकलित रियासत कहलाता है), तो वहां प्रायः एक ही स्वाभाविक कठिनाई के कारण अव्यवस्थाएं पैदा होती हैं और वह कठिनाई हर नये राज्य में पैदा होती है। होता यह है कि लोग बेहतर शासन की आशा लेकर स्वेच्छा से अपना शासक बदल देते हैं। इसी आशा के वशीभूत होकर वे शासक के विरुद्ध शस्त्र उठाते हैं, लेकिन वे अपने-आप को ही धोखा देते हैं। अनुभव से उन्हें पता चलता है कि स्थिति पहले से खराब हो चुकी है। यह विडम्बना भी एक अन्य, सामान्य एवं स्वाभाविक आवश्यकता से खड़ी होती है शासक उन सभी लोगों को आघात पहुंचाने के लिए बाध्य होता है, जिन्होंने उसे गद्दी पर बैठाया है—वह इन सहायकों को बन्दी बनाता है, और नव प्राप्त विजय को सुदृढ़ करने के लिए उन पर और भी अगणित कठिनाइयां लाद देता है। परिणामस्वरूप रियासत पर अधिकार करने के लिए जिन लोगों के हितों को आप चोट पहुंचाते हैं, वे सब आपका विरोध करते हैं, जिन्होंने आपको सिंहासनारूढ़ कराया है, उन्हीं की मैत्री आपके हाथों से छिन जाती है, उनकी अपेक्षा के अनुसार आप उन्हें उपकृत नहीं कर सकते, और उनके प्रति कृतज्ञ होने के कारण, उनके विरुद्ध कठोर कार्यवाही भी नहीं कर सकते। किसी शासक की सेना कितनी ही प्रबल क्यों न हो, विजित प्रदेश में प्रविष्ट होने के लिए उसे स्थानीय जनता की सद्भावना की आवश्यकता तो होती ही है। यही

कारण है कि फ्रांस के शहंशाह बारहवें लुई ने जितनी तेजी से मीलान पर कब्जा किया था, उतनी ही तेजी से वह उसे खो बैठे। पहली बार स्वयं लुदोविको की अपनी ही सेनाएं उसके हाथों से नगर को छीन लेने के लिए काफी थीं, क्योंकि उसके स्वागतार्थ नगर के फाटक खोलने वालों ने जब यह महसूस किया कि उनकी अपनी आशाएं और लाभ की अपेक्षाएं छलना मात्र थीं तो वे नवागत शासक के द्वारा किये गये तिरस्कार को सहन नहीं कर सके।

यह भी निश्चित है कि विद्रोह के बाद पुनर्विजित प्रदेश आसानी से अपने शासक के हाथों से नहीं निकलते। कारण? पिछले विद्रोह का लाभ उठाकर, अपराधियों और विरोधियों को कुचलने में, सन्दिग्ध व्यक्तियों की जांच पड़ताल करने में और अपनी कमजोरियों को दूर करके शासन को सुदृढ़ करने में, शासक पूर्वापेक्षा कम झिझकता है। इस प्रकार से, फ्रांस के हाथों से पहली बार मीलान को निकाल लेने के लिए ड्यूक लुदोविको को केवल सीमान्त पर कुछ छापे मारने पड़े, लेकिन दूसरी बार फ्रांस का शिकंजा हटाने के लिए पूरे संसार को उसका विरोध करना पड़ा, और उसकी सेनाओं को या तो नष्ट कर दिया गया अथवा इटली से खदेड़ दिया गया। इसके कारणों का विवेचन मैं पहले ही कर चुका हूं। कुछ भी हो, फ्रांस के हाथों से मीलान दोनों ही बार निकल गया।

पहली बार ऐसा क्यों हुआ, इसके कारण हम बता चुके हैं। अब दूसरी बार फ्रांसीसी शासन के हाथों से मीलान के निकल जाने के कारणों की चर्चा बाकी है—और यह भी देखना बाकी है कि इस पराजय के निराकरण के लिए फ्रांस के पास क्या-क्या उपाय थे, और विजित प्रदेश पर अपने शासन को सुदृढ़ बनाये रखने के लिए इसी परिस्थिति में कोई अन्य शासक क्या-क्या कार्यवाही कर सकता था। मेरी धारणा यह है कि विजय के बाद, विजेता द्वारा लम्बे समय से शासित राज्य के साथ मिलाया जाने वाला प्रदेश, उसी राज्य का एक ही भाषा-भाषी भाग होता है, अथवा स्थिति इसके विपरीत होती है। अगर स्थिति यही हो तो उन पर नियन्त्रण बनाये रखना बहुत आसान होता है, विशेषकर जब कि विजित प्रदेश स्वतन्त्रता का आदी न हो। इन प्रदेशों पर अपना अधिकार

सुदढ बनाये रखने के लिए भूतपूर्व शासक का वशनाश ही काफी होता है। इसके अतिरिक्त यदि जनता की पुरानी जीवन-पद्धतियो से छेड छाड न की जाय और उसके रीति रिवाजो को न बदला जाय, तो वह शात बनी रहती है। बर्गण्डी, ब्रिटानी, गस्कनी, और नार्मण्डी के भी मामलो मे यही तो हुआ था और ये प्रदेश एक अरसे से फ्रास मे ही साथ चले आ रहे है। यद्यपि यहा कुछ भाषागत भेद-भाव हैं, इन प्रदेशो के रीति-रिवाज एक-से हैं और वे मिल-जुलकर आसानी से गुजर कर सकते हैं। यदि शासक नये प्रदेशो पर अपना अधिकार बनाये रखना चाहता है, तो उसे दो बातो का ध्यान रखना होगा एक, पुराने शासक के वश का नाश होना अनिवार्य है, दूसरे, उसे न तो जनता के रीति रिवाज बदलने चाहिए और न ही कर व्यवस्था। इस प्रकार कुछ ही समय पाकर नव विजित प्रदेश पुराने राज्य के साथ मिलकर एक हो जायेगा।

लेकिन जब कभी नव विजित प्रदेश की भाषा, रीति रिवाज, पर-पराए आदि भिन्न होती हैं, तो कठिनाइया उठ खडी होती हैं। इन पर सौभाग्यशाली और तत्पर एव परिश्रमी शासक ही अपना अधिकार बनाये रख सकता है। इसका सबसे अच्छा और सबसे अधिक प्रभावशाली तरीका तो यही है कि विजेता स्वय विजित प्रदेश मे रहने के लिए जाये। इससे नव विजित प्रदेश पर उसका अधिकार अधिक सुरक्षित, अधिक स्थायी होगा। यूनान मे तुर्कों की उपलब्धि यही थी। तमाम उपाय करने के बावजूद यदि तुर्क विजेता वहा पर स्वय निवास के लिए नही जाता, तो यूनान पर अधिकार बनाये रखना असम्भव होता। घटनास्थल पर उपस्थिति के कारण, विपत्ति के बीजो को फूटते हुए देख लेना और तत्काल उनका विनाश करना सम्भव होता है। अनुपस्थित रहने पर विपत्ति का पता तभी चलता है, जबकि वह गम्भीर हो चुकी होती है और उसका निदान सम्भव नही रहता। इसके अतिरिक्त, विजेता की निजी उपस्थिति के कारण उसके कारिन्दे और अधिकारी भी विजित प्रदेश को लूट-खसोट नही सकते। शासक तक सीधी पहुच होने के कारण जनता सन्तुष्ट रहती है। यदि जनता उसके अनुकूल वृत्ति वाली है तो उससे और भी प्यार कर सकती है। इसके विपरीत मन स्थिति में शासित उससे

भयभीत भी रहती है । राज्य पर आक्रमण करने के इच्छुक लोग भी शासक की उपस्थिति के कारण सोचने विचारने के लिए विवश होते हैं। इसलिए नवविजित प्रदेश मे बस जाने वाले शासक को अपदस्थ करना कठिनतम काय हो जाता है।

एक दूसरा और बेहतर तरीका नव विजित प्रदेश मे दो-एक उपनिवेश (कालोनी) बसा देना है। इनके कारण वह प्रदेश बध कर रह जायेगा। अगर आप उपनिवेश नही बसायेंगे, तो आपको 'विजित प्रदेश मे) छावनिया बनानी पडेंगी, सशस्त्र सैनिक और तोपखाने तैनात करने होंगे। बस्तिया बसाने पर कोई अधिक खच नही होता एव शासक कोई व्यक्तिगत हानि सहन किये बिना उनकी स्थापना और सचालन कर सकता है। वह केवल उन्ही लोगो को आघात पहुचाता है, जिनकी भूमि और मकान लेकर बस्ती के नये निवासियो को देता है और ये लोग अत्यत अल्पसख्यक होते हैं और सदैव धन-सम्पत्ति हीन एव बिखरे हुए रहने के कारण राज्य को किसी प्रकार की हानि नही पहुचा सकते। अन्य लोगो से कोई छेड छाड नही की जाती। वे इस भय से भी शान्त बने रहते हैं कि नये शासन मे धन सम्पत्ति से वचित किये गये लोगो जसी ही हालत उनकी भी न कर दी जाये। निष्कष यह है कि बस्तिया बसाने मे बहुत कम खच आता है और ये अधिक विश्वसनीय भी होती हैं तथा कम हानिकर होती हैं। जसा कि मैंने कहा है सम्पत्ति से वचित किये गये लोग निधन होते हैं और बिखरे हुए रहते हैं, अतएव आपको वे किसी प्रकार की हानि नहीं पहुचा सकते। यहा इस बात की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए कि लोगो का या तो पोषण किया जाना चाहिए अथवा दमन क्योकि मामूली आघात का प्रतिशोध तो वे ले सकते हैं घातक चोट का नही। इसलिए शासक जब कभी किसी का चोट पहुचाये ता इतनी गहरी चोट पहुचाये कि फिर प्रतिशोध का भय न रहे।

फिर भी यदि शासक (विजित प्रदेश म) बस्तिया बसान के बदले सैनिको को ही भेजता है, तो व्यय बहुत अधिक होता है, क्योकि सारा राजस्व तो प्रतिरक्षात्मक कायवाहियो पर खच हो जाता है और लाभ हानि मे बदल जाता है। इस प्रकार शासक जनता को कहीं अधिक चोट पहुचाता

है। देश के विभिन्न भागो मे अपनी सेना को तैनात करके वह सभी को दुश्मन बना लेता है और प्रजा के रोष के शिकार सभी लोग होते हैं। जो लोग उसके विरोधी हो जाते हैं, वे उसे हानि पहुचा सकते हैं, क्यो कि पराजित होते हुए भी वे अपने-अपने घरो मे बने रहते हैं। किसी भी प्रकार से देखें, प्रतिरक्षा का यह तरीका उतना ही व्यर्थ है जितना बस्तियो का बसाना सार्थक।

इसके अतिरिक्त, मेरे बताये हुए आधार पर अपने राज्य से भिन्न प्रकार के प्रदेश मे जाने वाले हर शासक को स्वय पास-पडोस की छोटी-छोटी शक्तियो का नेता और रक्षक बन जाना चाहिए एव प्रबलतर शक्तियो को कमजोर बनाने का प्रयास करना चाहिए। उसे ऐसी तमाम सावधानिया बरतनी चाहिए, जिनके कारण उसी जैसा कोई शक्तिशाली विदेशी उस प्रदेश पर आक्रमण न कर सके। प्राय किसी भी आक्रमणकारी को न्योता देने वाले वे ही लोग होगे, जो अतीव महत्त्वाकाक्षा अथवा भय के कारण विजेता शासक के शत्रु बन चुके हैं। इस प्रकार से एक बार यूनान में इतोलियन लोग रोमनो को ले आये थे। यही नही, रोमनो द्वारा विजित हर प्रदेश म उन्हें न्योता स्थानीय निवासियो ने ही दिया था। होता यह है कि जसे ही कोई सम्पन्न विदेशी किसी प्रदेश पर आक्रमण करता है, उसे आस पास की क्षीणतर शक्तिया अपना समथन प्रदान करती हैं, क्योकि वे अद्यतन शासक के प्रति ईर्ष्यालु होती हैं। जहा तक इन क्षीणतर शक्तियो का सवाल है, इन्हें अपने पक्ष मे कर लेने मे आक्रान्ता को कोई कठिनाई नही होती। वे स्वेच्छा से उसके द्वारा स्थापित राज्य मे विलय हो जाती हैं। उसे केवल इस बात का ध्यान रखना होता है कि ये क्षीणतर शक्तिया कभी बहुत अधिक शक्ति एव अधिकार से सम्पन्न न हो जायें। जो सशक्त हैं, उन्हे वह इन (क्षीणतर शक्तियो) के समथन से कुचल ही सकता है, और हर प्रकार से इस प्रदेश का स्वामी बन सकता है। जो भी शासक इन नुक्तो पर सावधानी से आचरण नही करेगा, वह अपने विजित प्रदेशो को जल्दी ही खो बैठेगा। उन पर अपना शासन बना रहने पर भी, उसे अगणित कठिनाइयो और विरोधो का सामना करना पडेगा।

रोमनो ने जिन प्रदेशो को विजय किया था, वहा वे इन बातो का बाकायदा ध्यान रखते रहे। उन्होने बस्तिया बसायी। क्षीणतर शक्तियों का दम खम बढाये बगैर वे उन्हे सन्तुष्ट करते रहे। शक्तिसम्पन्न तत्त्वा का दमन करते रहे और उन्होने कभी किसी शक्तिसम्पन्न विदेशी को इन प्रदेशो मे सम्मान अर्जित नही करने दिया। यूनान इसका बहुत अच्छा उदाहरण है। यहा पर रोमनो ने इकियनो और इतोलियनो को तुष्ट किया। मकदूनिया के शासन को कुचल दिया, और एन्तियोकस को उन्होने मार भगाया। तमाम सदव्यवहार के बावजूद रोमनो ने इकियनो अथवा इतालियनो को कभी अपने क्षेत्र का विस्तार नही करने दिया। फिलिप ने इन लोगो से दोस्ती गाठने की कोशिश की, मगर रोमनो ने उसका सिर कुचलकर ही यह दोस्ती होने दी उससे पहले नही, और अपनी तमाम शक्ति के बावजूद एन्तियोकस को यूनान मे कभी किसी प्रकार का अधिकार नही दिया गया।

इन परिस्थितयो मे रोमनो ने ठीक वही किया, जो कोई भी बुद्धिमान शासक करता। वे वर्तमान कठिनाइयो से ही नही भिड़े, बल्कि भविष्य की सम्भावनाओ को भी उन्होने देखा और उनका अग्रिम निराकरण किया। भावी कठिनाइयो का सही पूर्वानुमान करने से उनका निदान सहज हो जाता है। विपत्तियो के प्रकट होने की प्रतीक्षा करने से उनका उपचार सम्भव नही रहता। रोग निदान से परे जा चुका होता है। राजनीति की स्थिति भी वसी ही है जैसा कि चिकित्सक लोग शरीर को गलाने वाले अथवा क्षय जसे रोगो के बारे मे कहते हैं। प्रारम्भ मे उनका पता लगाना मुश्किल होता है। इलाज आसान हो मगर उसका पता पाकर इलाज नही किया गया तो कुछ समय के बाद उसका पता लगाना आसान हो जाता है, इलाज मुश्किल। राजनीतिक अव्यवस्थाओ का पहले से पता पाकर उनका निराकरण शीघ्र ही हो सकता है (और केवल बहुत अधिक विवेकशील शासक ही इतना दूरदर्शी हो सकता है)। यदि इस अव्यवस्था का पूर्वानुमान नहीं लगाया गया और उसे इतना बढ़ने दिया गया कि हर कोई उसे देख सके तो उसका निराकरण सम्भव ही नही रहता।

अतएव रोमन शासक आनेवाली विपत्तियो का पहले से ही पता लगाते

रहते थे और उनके निदान के लिए आवश्यक कार्यवाही करते रहते थे। वे युद्ध से बचने के फेर मे इन विपत्तियो को निर्दोष बढने नहीं देते थे, क्योंकि वे जानते थे कि युद्ध को टाला नहीं जा सकता, युद्ध का केवल स्थगन किया जा सकता है और इस स्थगन का लाभ दूसरे लोग उठाएंगे। वे फिलिप और एन्तियोकस से इटली में नही लडना चाहते थे, अतएव उन्होंने यूनान में ही इनके विरुद्ध युद्ध छेडने का फैसला कर लिया। उस समय वे युद्ध को टाल भी सकते थे। मगर उन्होंने ऐसा नहीं किया। जो बात आज हम अपनी पीढी के प्रबुद्ध लोगो की जबान से सुनते हैं—कि वर्तमान से जितना लाभ उठा सकते हो, उठा लो, फिर पता नही अवसर मिले न मिले! यह प्रलोभन कभी उनके मन में भी नहीं आया। वे लोग तो अपने पराक्रम और दूरदर्शिता का ही अधिकतम लाभ उठाते थे। समय अपने प्रवाह मे हर चीज को बहाये लिए जा रहा है—उसके प्रवाह मे आपके हिस्से अच्छाई भी आ सकती है और बुराई भी।

आइए, फ्रास की बात को ही लें। जिन तरीकों की चर्चा मैंने की है, क्या फ्रास ने भी उनका इस्तेमाल किया? मैं चार्ल्स के बजाए लुई की चर्चा करना चाहूगा। लुई बहुत समय तक इटली में जमा रहा, इसलिए उसके चरित्र का अध्ययन मैं और निकट से कर सका। आप देखेंगे कि पराये देश मे अपने शासन को बनाये रखने के लिए जो कुछ भी किया जाना चाहिए, लुई ने सब कुछ उसके विपरीत किया।

शाह लुई वेनिस वालो की महत्त्वाकाक्षा के घोडे पर सवार होकर इटली आये थे। वेनिस के शासक लोम्बार्दी का आधा भाग स्वय हथियाना चाहते थे। मैं शाह लुई की कार्यवाही की निन्दा नही करना चाहता। वह इटली मे पाव धरने की जगह चाहता था और वहा पर उसका कोई सहायक मित्र नही था। इसके विपरीत, शाह चार्ल्स की हरकतों के कारण, लुई के लिए सभी द्वार बन्द थे। अतएव वह जहा जो मिले, उसीको मित्र बनाने के लिए मजबूर था। अगर वह दूसरी गलतिया न करता तो इस मामले में उसकी नीति सफल भी हो गई होती। हुआ यह कि उसके हाथ मे लोम्बार्दी के आते ही लुई को वह स्थान मिल गया, जो चार्ल्स ने खो दिया था। जैनोआ का भी पतन हो गया। फ्लारेन्स के शासक

बन गए। मार्क्विस ऑव मान्तुआ, फरारा के ड्यूक, बेन्तिवोग्ली, फार्ली की काउन्तेस, फीन्जा, पीसारो, रिमिनी, कैमेरिनो और पियोम्बिनो के नरेश,* लुक्का, पीसा, सिएना आदि के नागरिक, सभी उसकी मैत्री की इच्छा लेकर सामने आए। तब वेनिस के शासकों को यह अहसास हुआ कि उन्होने जल्दबाजी से काम लिया है। लोम्बार्दी के दो नगरो को पाने के लालच मे शाह लुई को उन्होने तिहाई इटली का शासक बना डाला था।

अब सोचिये कि यदि लुई ने मेरे बताये हुए नियमो का पालन किया होता और अपने इन मित्रो की मैत्री को सभालकर रखा होता तो वह कितनी आसानी से इटली मे अपने शासन को बनाए रख सकता था! उसके मित्र बहुसख्या मे थे, वे कमजोर और भयभीत भी थे। कुछ चर्च से डरे हुए थे और कुछ वेनिस वालो से, अतएव वे उसका साथ देते रहने के लिए विवश थे और उनके माध्यम से वह अपनी रक्षा उन ताकतो से भी कर सकता था, जो अब भी प्रबल थी, लेकिन मीलान मे पहुचते ही उसने वह काम किया, जो उसे नही करना चाहिए था। उसने पोप अलेग्जान्देर को रोमान्या पर अधिकार कर लेने मे सहायता दी। उसे यह भी याद नही रहा कि इस काम से उसने अपने-आपको कमजोर कर लिया है और मित्रो को शत्रु बना लिया है तथा आश्रितो को पराया कर दिया है और चर्च की वर्तमान धार्मिक सत्ता को इतनी अधिक सासारिक सत्ता का बल देकर, उसे बहुत अधिक शक्तिसम्पन्न कर दिया है। एक गलती करने के बाद वह अन्य गलतिया करने के लिए विवश हो गया। पोप अलेग्जान्देर की महत्त्वाकाक्षा को भग करने एव उसे तोस्काना का शासन हथियाने से रोकने के लिए उसे स्वय इटली आना पडा। चर्च को प्रबलतर बनाकर और मित्रो की मैत्री खोकर ही उसने चैन नही लिया, बल्कि नेपल्स का राज्य प्राप्त करने के लोभ मे उसने स्पेन के शाह के साथ मिलकर उसे बाट लिया। प्रारम्भ मे जहा वह इटली का एकमात्र शासक था, वहा अब वह एक ऐसे प्रतिद्वन्द्वी को मैदान मे उतार लाया, जिसकी शरण मे उसके

---

* इनके नाम थे क्रमश /एस्तोरे म फ्रेदी गियोवान्नी दि कोस्तेन्जो स्फोर्जा पेन्दोल्फो मालातेस्ता गियूलियो सीजर दा वेरानो और जेकोपो देप्लो एपियानो।

अपने महत्त्वाकांक्षी और असन्तुष्ट सहायक मित्र जा सकते थे। वह चाहता तो नेपल्स के शाह का अपने मेंता भोगी के रूप मे तैनात कर सकता था।*
इसके विपरीत उसने इस शाह को अपदस्थ करके एक ऐसे व्यक्ति को नियुक्त किया, जिसने समय पाकर स्वय उसी का बाहर खदेड दिया।

अधिक सत्ता हथिया लेने की इच्छा सामान्य एव स्वाभाविक है, यह बात मानी जा सकती है। इस इच्छा के पूरे हो जाने पर कभी किसी की निन्दा नही की जाती, प्रशसा ही होती है लेकिन जब ऐसी इच्छा रखने वाले शासकों मे और अधिक पाने की योग्यता नही होती और वे फिर भी हर कीमत पर ऐसा करने की कोशिश करते हैं तो उनकी गलतियो के लिए उनकी निन्दा होनी ही चाहिए। फ्रास मे अगर नेपल्स पर अपनी सेना के बल पर हमला करने की सामर्थ्य थी, तो उसे ऐसा करना चाहिए था। अगर यह सामर्थ्य नही थी, तो उसे नेपल्स का विभाजन नही करना चाहिए था। जहा वेनिस वालो के साथ मिलकर किया गया लोम्बार्डी का विभाजन उचित ठहराया जा सकता है क्योकि उससे लुई को इटली मे पाव जमाने का अवसर मिला, वहा इस दूसरे विभाजन की निंदा की जानी चाहिए, क्योंकि इसकी कोई आवश्यकता नही थी।

इसलिए लुई से ये पाच गलतिया हुइ—उसने क्षीणतर शक्तियो को नष्ट कर दिया, इटली म पहले ही शक्तिसम्पन्न माने जाने वाले कुछ शासकों की शक्ति उसने बढा दी, उस देश मे वह एक प्रबल विदेशी शक्ति को खींच लाया, स्वय वह इटली से दूर बना रहा और उसने वहा कोई बस्तिया नहीं बसाई। अगर लुई जीवित रहता और एक छठी गलती न करता, तो यह पाच गलतिया भी उसके लिए घातक सिद्ध न होती। यह छठी गलती थी—वेनिस वालो को उनके लाभ से वचित करना। अगर उसने पोप को प्रबलतर नही बनाया होता और स्पेन का इटली में न्योता न होता, तो उसके लिए वेनिस के शासको को कुचलना आवश्यक भी होता एव उचित भी, लेकिन पहली दो कार्यवाहिया करने के बाद, उसे वेनिस

---

* नेपल्स के नरेश थे अरागान के फ्रेडरिगो। उन्होंने 1501 में फ्रांसीसी सेना के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया था।

न्तालो की बरबादी रोकनी चाहिए थी, क्योंकि ये शक्तिसम्पन्न बने रहने पर य लोग अन्य नक्तियों को लोम्बार्डी पर आक्रमण करने से सदय रोकते रहते। वेनिस वाले विदेशी आक्रमणकारियों का तब तक विरोध करते रहते, जब तक इस आक्रमण से लोम्बार्डी का शासन स्वयं उन्हीं को नहीं मिल जाता और कोई भी आक्रमणकारी फ्रांस के हाथों से वेनिस वालों को देने भर के लिए लोम्बार्डी का शासन छीनने का कष्ट न उठाता। नये आक्रमणकारी फ्रांस और वेनिस दोनों की सत्ता को चुनौती देने का साहस भी नहीं जुटा पाते।

यदि कोई यह कहे कि शाह लुई ने रोमान्या पर पोप अलेग्जान्डेर को केवल इसलिए अधिकार कर लेने दिया कि वह स्वयं युद्ध से बचना चाहता था तो मैं इन्हीं तर्कों के आधार पर यह कहूंगा कि किसी भी शासक को केवल युद्ध से बचने के लिए अपने आयोजन को भग नहीं होने देना चाहिए, फिर युद्ध कभी भी टलता नहीं है। वह तो केवल विरोधी के लाभार्थ स्थगित हो जाता है और अगर कोई व्यक्ति शाह लुई द्वारा पोप पर किये गए विश्वास की बात कहे, जिसके बदले में पोप ने वचन दिया था कि वह रोमान्या के शासन के बदले में लुई के विवाह सम्बन्ध को भग कर देगा और रुएन का कार्डिनल की उपाधि प्रदान करेगा, तो मेरा जवाब वही होगा, जो मैं आगे चलकर शासकों की विश्वसनीयता और उनके वचन-पालन के विषय में कहने वाला हूं। अतः शाह लुई के हाथों से लोम्बार्डी का शासन इसलिए निकल गया कि उन्होंने ऐसे किसी भी नियम का पालन नहीं किया, जिसका पालन दूसरे देशों पर अधिकार करने एवं उन पर अपना शासन बनाये रखने के इच्छुक अन्य शासक करते हैं। इसमें अकल्पनीय कुछ भी नहीं है। यह सब सामान्य है और उचित भी। मैंने इस विषय में रुएन के साथ नान्तीज में उस समय बातचीत की थी, जब रोमान्या पर (पोप अलेग्जान्डेर के बेटे सीज़र बोर्गिया) ड्यूक वैलेन्तिनो का अधिकार था। जब रुएन के कार्डिनल ने मुझसे कहा कि इतालवी लोगों को युद्ध का कोई ज्ञान नहीं है, तो मैंने उन्हें डपटकर जवाब दिया कि फ्रांसीसी लोग राजनीति को नहीं समझते। अगर वे समझते होते तो चर्च को इतना प्रबल न हो जाने देते। इटली में घटी घटनाओं के प्रवाह से स्पष्ट है कि फ्रांस ने

चर्च को एव स्पेन को सशक्त बनाया और इन दोनो शक्तियो ने फ्रास का सर्वनाश किया। इसीसे हम एक सामान्य सिद्धान्त बना सकते हैं, जो शायद ही कभी गलत सिद्ध होगा—जो भी व्यक्ति अथवा शासक अन्यों के शक्ति सम्पन्न होने का कारण बनेगा वही अपनी बरबादी का कारण भी बनेगा, क्योंकि यह शक्ति या तो मौलिकता से उद्भूत होती है अथवा बाहुबल से। शक्ति-सम्पन्न हो चुका व्यक्ति इन दोनो को शक की निगाहों से देखता है।

शासित राज्य मे राजा का प्रभुत्व गहनतर होता है, क्योकि देश-भर मे स्वामि भक्ति का पात्र और अधिकारी एकमात्र वही माना जाता है। अन्य अधिकारियो अथवा मन्त्रियो की आज्ञा का पालन उनके पद के कारण किया जाता है, लेकिन इनके प्रति जनता को कोई लगाव नही होता।

इन दो भिन्न प्रकार के शासनो के समकालीन उदाहरण तुर्क सम्राट और फ्रास के सम्राट के रूप मे देखे जा सकते हैं। तुर्क साम्राज्य का शासन-सूत्र एक ही व्यक्ति के हाथो मे है, अन्य सभी प्रशासक उसीके अनुचर एव दास हैं। यह एक शासक अपने साम्राज्य को सज्याक्यो* (प्रशासनिक इकाइयो) म बाट देता है और इनके प्रशासन का दायित्व वह अलग अलग प्रशासको को सौंप देता है और अपनी आवश्यकता के अनुसार इनको बदलता रहता है, लेकिन फ्रास के सम्राट के चारो ओर लम्बे समय से प्रतिष्ठित सामन्तो की भीड लगी है, जिन्हें अपनी-अपनी रियासतो मे अपनी-अपनी प्रजा से मान्यता एव स्नेह प्राप्त है। इनके अपने-अपने विशेषाधिकार हैं। सम्राट अपने लिए सकट खडा किये बगैर इन विशेषाधिकारो को छीन नही सकता।

इसलिए इन दोनो साम्राज्यो की तुलना करने से ही पता चल जाएगा कि तुर्क साम्राज्य पर अधिकार करना कठिन है, लेकिन एक बार विजय हो जाने के बाद उस पर नियन्त्रण बनाये रखना आसान होगा। दूसरी ओर कई तरह से ऐसा लगेगा कि फ्रासीसी साम्राज्य को आसानी से हथियाया जा सकता है, लेकिन उसे अपने अधीन बनाये रखने के लिए बहुत कठिनाई का सामना करना पडेगा।

तुर्क साम्राज्य को हथियाने मे पेश आने वाली कठिनाई का कारण यह है कि उस पर विजयाभियान के लिए किसी स्थानीय राजा या शासक के द्वारा आमन्त्रित किये जाने की कोई सम्भावना नही है और सम्राट के निकटस्थ लोगो के विद्रोह के बल पर अपने विजयाभियान की सफलता की भी आशा नही की जा सकती। इसके कारण मैं पहले बता चुका हू। ये सब लोग अपने स्वामी के प्रति स्वामिभक्ति के बन्धन मे बधे हुए अनुचर हैं

---

* तुर्क प्रदेशों के प्रशासकों के लिए सबोधन

अत सिकन्दर के सामने पहला काम उसे पूरी तरह से कुचलना और उसके राज्य पर अधिकार स्थापित करना था। राज्य को जीत लेने के बाद और दारा के मारे जाने पर, पूर्वचर्चित कारणो से ही राज्यशासन पर सिकन्दर की पकड बडी मजबूत हो गयी। उसके उत्तराधिकारी अगर सगठित होते, तो वे निर्बाध रूप से इस राज्य पर शासन करते रहते। इस राज्य मे सच पूछिये तो उनके द्वारा स्वय भडकाये गए विद्रोहो के अतिरिक्त कभी कोई विद्रोह नही हुआ, लेकिन जहा तक फ्रास के ढग पर शासित प्रदेशो का सवाल है, उनपर इतने निर्बाध रूप से शासन करना सम्भव नही होता। इसी तथ्य से स्पेन, फ्रास और यूनान मे रोमनो के विरुद्ध हुए अनेक विद्रोहो का स्पष्टीकरण मिल जाता है। ये देश अनेक रियासतो मे बटे हुए थे और इसीलिए यहा विद्रोह होते थे। इन रियासतो के शासको को पुराने दिन भूलते नही थे, इसीलिए रोमनो को इन पर अपने नियन्त्रण के विषय मे सदैव शका बनी रहती थी।

काफी समय पाकर जब रोमन शासन सुदृढ और शक्तिसम्पन्न हो उठा और जनता रियासतो को पूरी तरह भूल चुकी थी, तो रोमनो ने अपने कदम और मजबूती से जमा लिए। लेकिन बाद में जब रोमन विजेता स्वय आपस मे ही लडने लगे, तो उनमे से प्रत्येक को अपने-अपने अधिकार और हैसियत के अनुसार विजित प्रदेश के किसी न किसी भाग से समर्थन मिलने लगा। पुराने सामन्तो और शासको का पूरी तरह से सफाया कर दिए जाने के कारण यह समर्थन रोमन शासको को उनके निजी रूप मे मिलता था। इस बात का यदि ध्यान मे रखा जाए, तो किसी को इस बात पर आश्चर्य नहीं होगा कि सिकन्दर ने इतनी आसानी से एशिया पर अपना नियन्त्रण बनाये रखा, अथवा पाइरस एव उसी जसे अन्य विजेताओ को अपने विजित प्रदेशो पर अधिकार बनाये रखने मे इतनी कठिनाइयो का सामना करना पडा। दोनो के बीच का विरोधाभास विजेताओ की योग्यता अथवा सामर्थ्य पर नही, विजित प्रदेशो के प्रशासनिक सगठनों पर निर्भर करता है।

कार्थेज और नुमान्शिया पर अधिकार रखने के लिए उन नगरों को बरबाद कर दिया और ये नगर कभी भी उनके हाथों से नहीं निकले। उन्होंने स्पार्टा वालों की ही तरह यूनान पर उसे स्वतन्त्र रखते हुए और उसके अपने ही कानून-कायदों के अनुसार शासन करना चाहा, पर वे सफल नहीं हुए। अत वहां अपना शासन बनाए रखने के लिए वे लोग इस प्रदेश के कई नगरों को बरबाद करने के लिए विवश हो गए। सच तो यह है कि किसी प्रदेश पर अपना शासन बनाए रखने का उसकी बरबादी से अधिक सफल कोई तरीका हो ही नहीं सकता, जो भी विजेता स्वतन्त्रता के आदी हो चुके किसी नगर-राज्य पर विजय पाने के बाद उसे बरबाद नहीं करता, वह किसी भी समय अपनी बरबादी की उम्मीद कर सकता है, क्योंकि वहां जब भी कभी विद्रोह होगा, नगर की जनता अपनी स्वतन्त्रता और अपनी पुरानी परम्पराओं की दुहाई देकर विद्रोह का औचित्य सिद्ध कर देगी, क्योंकि काफी समय गुजर जाने पर और नये शासन से होने वाले तमाम फायदों के बावजूद, जनता इन परम्पराओं को भूलती नहीं। विजेता कुछ भी करे और कितना भी दूरदर्शी क्यों न हो, अगर उसने नगर की जनसंख्या को तितर बितर नहीं किया, तो वे लोग न कभी पुराने राज्य का नाम भूलेंगे, न वहां की परम्पराओं को और पहला मौका मिलते ही तुरन्त उन्हीं की छत्रछाया में एक हो उठेंगे। पीसा ने सौ वर्ष तक फ्लारेंस के शासकों की गुलामी में रहने के बाद सिर उठाया था।

जब नगरों अथवा प्रान्तों की जनता किसी राजा के अधीन रहने की आदी होती है और उसका वंश नाश कर दिया जाता है, तो वह अपने बीच से ही नये राजा का चुनाव नहीं कर सकती और न ही राजा के बिना कार्य संचालन कर पाती है, क्योंकि एक ओर तो वह आज्ञापालन की आदी हो चुकी होती है दूसरी ओर उसका भूतपूर्व राजा अस्तित्वहीन हो चुका होता है। इसलिए इन लोगों को विद्रोह के लिए तैयार होने में देर लगती है। इस बीच कोई भी शासक विजय प्राप्त करके उन पर आसानी से शासन करता रह सकता है, लेकिन लोकतन्त्रों में अधिक जागरूकता, गहरी घृणा और प्रतिशोध की प्रबल भावना होती है। पुरानी स्वतन्त्रता की याद उन्हें चैन नहीं लेने देती। अत उनपर शासन
उनको नष्ट कर देना अथवा स्वयं वहां जाकर रहना जरूरी

कार्येज और नुमान्जिया पर अधिकार रखने के लिए उन नगरो को बरबाद कर दिया और ये नगर कभी भी उनके हाथों से नही निकले। उन्होंने स्पार्टा वालो की ही तरह यूनान पर उसे स्वतन्त्र रखते हुए और उसके अपने ही कानून-कायदो के अनुसार शासन करना चाहा, पर वे सफल नही हुए। अत वहा अपना शासन बनाए रखने के लिए वे लोग इस प्रदेश के कई नगरो को बरबाद करने के लिए विवश हो गए। सच तो यह है कि किसी प्रदेश पर अपना शासन बनाए रखने का उसकी बरबादी से अधिक सफल कोई तरीका हो ही नही सकता, जो भी विजेता स्वतन्त्रता के आदी हो चुके किसी नगर-राज्य पर विजय पाने के बाद उसे बरबाद नही करता, वह किसी भी समय अपनी बरबादी की उम्मीद कर सकता है, क्योकि वहा जब भी कभी विद्रोह होगा, नगर की जनता अपनी स्वतन्त्रता और अपनी पुरानी परम्पराओ की दुहाई देकर विद्रोह का औचित्य सिद्ध कर देगी, क्योंकि काफी समय गुज़र जाने पर और नये शासन से होने वाले तमाम फायदो के बावजूद, जनता इन परम्पराओ को भूलती नही। विजेता कुछ भी करे और कितना भी दूरदर्शी क्यों न हो, अगर उसने नगर की जनसख्या को तितर बितर नही किया, तो वे लोग न कभी पुराने राज्य का नाम भूलेंगे, न वहा की परम्पराओ को और पहला मौका मिलते ही तुरन्त उन्हीं की छत्रछाया मे एक हो उठेंगे। पीसा ने सौ वर्ष तक फ्लारेंस के शासको की गुलामी मे रहने के बाद सिर उठाया था।

जब नगरों अथवा प्रान्तो की जनता किसी राजा के अधीन रहने की आदी होती है और उसका वश नाश कर दिया जाता है, तो वह अपने बीच से ही नये राजा का चुनाव नही कर सकती और न ही राजा के बिना कार्य सचालन कर पाती है, क्योकि एक ओर तो वह आज्ञापालन की आदी हो चुकी होती है, दूसरी ओर उसका भूतपूर्व राजा अस्तित्वहीन हो चुका होता है। इसलिए इन लोगो को विद्रोह के लिए तयार होने मे देर लगती है। इस बीच कोई भी शासक विजय प्राप्त करके उन पर आसानी से शासन करता रह सकता है, लेकिन लोकतन्त्रों मे अधिक जागरूकता, गहरी घृणा और प्रतिशोध की प्रबल भावना होती है। पुरानी स्वतन्त्रता की याद उन्हें चैन नही लेने देती। अत उनपर शासन लिए उनको नष्ट कर देना अथवा स्वय वहा जाकर रहना

६

अपने बाहुबल और पराक्रम से प्राप्त रियासतें

नितान्त नये शासक और नय संविधान द्वारा शासित रियासतो की चर्चा के दौरान मेरे द्वारा दिये गए आदर्श किस्म के दृष्टान्तो को सुनकर किसी को आश्चय नही होना चाहिए। लोग सदैव दूसरों को बनाई लीक पर चलते हैं और अनुसरण द्वारा अपनी समस्याओ का समाधान करते हैं। यद्यपि दूसरो की बनाई लीक का अनुसरण वे नही कर पाते और अपने आदर्श-पुरुषो जैसा पराक्रम भी उनमे नही होता। बुद्धिमान व्यक्ति वही है, जो महान व्यक्तियो का अनुसरण करे और दक्ष सिद्ध हुए लोगो का अनुकरण भी। ऐसी स्थिति म यदि उसका अपना पराक्रम उसके आदर्शों के अनुरूप नही होगा, तो कम-से-कम उसमे महानता की गन्ध तो होगी ही। उसे उन कुशल धनुर्धारियों की तरह व्यवहार करना चाहिए, जो निशाना दूर होने पर अपने धनुष की सामर्थ्य को आकते हैं और अपने लक्ष्य से काफी ऊंचा निशाना साधते हैं। वे उतनी ऊचाई पर बाण नहीं मारना चाहते, बल्कि ऊचा निशाना साधकर किसी प्रकार से अपने लक्ष्य को पा जाते हैं।

इसीलिए मेरी धारणा है कि नये राज्य मे नवागतुक शासक को अपना शासन बनाए रखने मे पेश आने वाली कठिनाइया उसकी निजी योग्यता अथवा अयोग्यता की समानुपाती होती हैं और इस शासक का सामान्य नागरिक के स्तर से उठकर शासक बन जाना ही या तो उसम असाधारण योग्यता का प्रतीक होता है अथवा उसके अत्यधिक भाग्यशाली होने का

प्रमाण। इस योग्यता अथवा सौभाग्य से ही कुछ हद तक उसकी मुश्किलें आसान हो जाती हैं। इसके बावजूद कोई व्यक्ति भाग्य पर जितना कम निर्भर करेगा, वह उतना ही प्रबल हो उठेगा। यदि नये शासक के पास और कोई राज्य-सम्पत्ति न हो तो उसे विवश नवविजित प्रदेश में ही रहना पड़ता है और यह एक अच्छी ही बात है।

लेकिन यदि हम उन लोगों की ओर पलटें जिन्होंने सौभाग्य से नहीं, अपनी योग्यता के बल पर राज्य पाया है तो हम उनमें मूसा को पायेंगे, रोम्युलस, साइरस थीसियस और इसी किस्म के अन्य शासकों को पायेंगे। यद्यपि मूसा (बाइबिल के मोजेज) को हमें तर्क का विषय नहीं बनाना चाहिए, क्योंकि उसने तो ईश्वरेच्छा का पालन भर किया, फिर भी हमें उस गरिमा और मर्यादा की तो प्रशंसा करनी ही चाहिए जिसके कारण वह ईश्वर से संवाद करने के योग्य बन सका।

लेकिन हम साइरस और उसी जैसे उन शासकों की चर्चा करेंगे जिन्होंने राज्यों को जीता अथवा उनकी स्थापना की। वे सब प्रशंसा के पात्र थे और उनके द्वारा की गई कार्यवाहियां एवं स्थापित परम्पराएं जांच करने पर मूसा द्वारा किए गए कार्यों से कम महत्त्व की नहीं दिखतीं, यद्यपि मूसा का स्वयं ईश्वर जैसा महान उपदेशक मिला था। तिस पर यदि हम इन शासकों के जीवन एवं गतिविधियों का विश्लेषण करें तो देखेंगे कि भाग्य से उन्हें अवसर के सिवाय कभी कुछ नहीं मिला। भाग्य ने उन्हें वह कच्ची मिट्टी ही दी थी, जिसे ढालकर उन्होंने रूप और आकार दे दिया। इस अवसर के अभाव में उनका गुण भी मिट गया होता और उस गुण के अभाव में यह अवसर व्यर्थ निकल गया होता।

इस प्रकार दासता के बंधन से मुक्त होने के इच्छुक इस्राइलियों के लिए मूसा का अनुसरण करने को तैयार रहना जरूरी था और मूसा के लिए भी यह एकदम अनिवार्य था कि वे उसे मिस्र में मिस्रियों की दासता और दमन की चक्की में पिसते हुए मिलें। रोम का शहंशाह और अपने देश का संस्थापक बनने वाले रोम्युलस के लिए भी अल्बा का आवश्यक था और उसके जन्म के समय इसका मरण से साइरस को केवल इसी बात की आवश्यकता थी कि फारस के

के प्रति विद्रोह के लिए प्रस्तुत हों और मेदेरस एक सम्बे समय तक शांति बना रहने के कारण कोमल हृदयवाला और पौरुषहीन हो चुका हो अगर एथेन्सवासी आपस में इतने बिखरे हुए न होते, तो थीसियस अपना पराक्रम नही दिखा सकता था। इन लोगों को जो अवसर मिले, उनसे इनकी सफलता सम्भव हो सकी और इनके अपने अपवादात्मक पराक्रम ने इन्हें अवसर का लाभ उठाने के योग्य बनाया। परिणामत इनके देशों का नाम ऊंचा हुआ और इनके देशवासी समृद्ध हुए।

जो लोग इन्ही महान् शासकों जैसे पराक्रम से शासक बनते हैं, उन्हें अपनी रियासतों को पाने मे चाहे कठिनाई होती हो, उन पर शासन बनाए रखना उनके लिए आसान होता है। उनके मार्ग मे रियासतों को पाने के लिए भी जो कठिनाइया आती हैं, उनका आंशिक कारण वे नई परम्पराए और कानून भी होते हैं, जिनको लागू करने के लिए वे, शासन की स्थापना और सुरक्षा की दृष्टि से विवश होते हैं।

इस बात का सदैव ध्यान रखा जाना चाहिए कि किसी राज्य के सविधान को बदलने से ज्यादा कठिन कोई काम नही। इस काम की सफलता सर्वाधिक सदिग्ध होती है और इसी को पूरा करना सबसे खतरनाक भी होता है। नयी परम्पराओ अथवा कानूनो का सस्थापक उन तमाम लोगो को बैरी बना लेता है, जो पुरानी व्यवस्था के अन्तगत फले-फूले थे और नयी व्यवस्था मे जिनके फलने-फूलने की सम्भावना होती है, उनका समथन बड़ा क्षीण-सा होता है। इस समथन की क्षीणता का कारण कुछ तो उन प्रतिद्वन्द्वियो का भय होता है, जिन्हें वर्तमान कानून का सरक्षण प्राप्त है और कुछ इसलिए कि मानव स्वभावत शक्की मिजाज होता है। जब तक वह अनुभव की कसौटी पर नई चीजो या परम्पराओ का परीक्षण नही कर लेता, तब तक वह उन पर विश्वास नहीं करता।

इस प्रकार से नयी व्यवस्था के सस्थापक और उसके मित्र, दोनो ही खतरे मे होते हैं, लेकिन इस विषय पर विशद चर्चा करने के लिए हम नितान्त आत्मावलम्बी और परावलम्बी, दोनो किस्म की नव व्यवस्थाओ के बीच भेद करना होगा। इस भेद को समझना भी होगा। नयी व्यवस्था की स्थापना के लिए कुछ लोग बल प्रयोग कर सकते हैं और कुछ लोग

समझाने-बुझाने का ही तरीका अपनाते हैं। दूसरा तरीका अपनाने वाले लोग सदैव कष्ट पाते हैं, क्योंकि उन्हें उपलब्ध कुछ नही होता, लेकिन जब ये लोग अपने ही साधन-स्रोतो पर निर्भर करते है और अपनी बात बलात् मनवा भी लेते हैं, तो उन्हें कोई खतरा नही रहता। यही कारण है कि आज तक तमाम शस्त्रधारी सुधारक विजेता हुए और अहिंसा के उपासक नष्ट कर दिए गए।

जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हू, जनता होती ही दुबल हृदय है। उसे कोई बात समझा देना मुश्किल नही होता, समझाई हुई बात को उसके हृदय मे जमा देना मुश्किल होता है। इसलिए शासक को कुछ ऐसी ही व्यवस्था करनी चाहिए कि यह अविश्वास करने वाले प्रजाजनो को बलात विश्वास दिला सके। मूसा, साइरस, थीसियस और रोम्युलस यदि निःशस्त्र होते तो कभी भी अपनी बात न मनवा सकते थे। जैसा कि स्वय हमारे युग मे फ्रा जिरोलामो सवोनारोला के साथ हुआ। जब जनता की आस्था उसमे नही रही, तो नयी परम्पराए और नये कानून उसके लिए मुसीबत बन गए। उसके पास आस्थावानो की एकता को बनाए रखने और अविश्वासी जनता को बलात विश्वास दिलाने का कोई तरीका ही नही रह गया था। ऐसे लोगो को अपनी लक्ष्य प्राप्ति मे बहुत कठिनाई का सामना करना पडता है, और उनके लिए सबसे खतरनाक वक्त वह होता है, जब वे लोग अपने कदम जमाने के लिए सघर्ष कर रहे होते हैं, लेकिन एक बार जब वे कदम जमा लेते हैं और उन्हें प्रजा का समादर मिलने लगता है और जब वे लोग अपने गुणात्मक प्रतिद्वंद्वियो का नाश कर चुके होते हैं, तो वे स्थायी तौर पर सत्ता, सुरक्षा, सम्मान और समृद्धि के अधिकारी बन जाते हैं। अब मैं इन दृष्टातो की शृखला मे एक और अपेक्षाकृत हलका-सा दृष्टात जोडना चाहता हू। यह व्यक्ति भी कुछ हद तक उनसे तुलना मे बराबर रहेगा, लेकिन मैं उसे अपनी ही श्रेणी के नमूने के रूप मे प्रस्तुत करूगा। मैं वस्तुत जेरोने साइराकूजाने की बात कर रहा हू। वह एक सामान्य नागरिक के पद से उठकर सिराक्यूज़ का शासक बन गया। सौभाग्य ने उसे भी अवसर के सिवाय कुछ नही दिया था। *सिराक्यूज़ के शासको ने ही अपनी विपत्ति के समय उसे अपनी सेनाओ*

का नेतृत्व करने के लिए चुना था। यहीं से उसने उनका शासक बनने का भी अधिकार प्राप्त कर लिया। एक सामान्य नागरिक होते हुए भी उसमें ऐसा कौशल था कि उसके जीवनीकार ने लिखा, ' उसके पास राज्य के अतिरिक्त राजा के सभी गुण मौजूद थे।' यह उद्धरण रोमन इतिहासकार जस्टिन की कृतियों से लिया गया है मगर सही नहीं है। उसने पुराने सैन्यदल को भंग कर दिया और एक नयी सेना का गठन कर डाला। उसने पुराने समझौते भंग करके नये समझौते किए। अपने ढंग के सैन्य-संगठन एवं मैत्री सम्बन्धों के बल पर वह जो चाहता कर सकता था। इसलिए अपने शासन की स्थापना के लिए उसे बड़ी मेहनत करनी पड़ी, लेकिन उस शासन को बनाए रखने में उसे कोई दिक्कत न हुई।

७

भाग्य से अथवा विदेशी सेना की सहायता से प्राप्त की गयी रियासतें

सौभाग्यवश राजा बन जाने वाले सामान्य नागरिको को शासन पाने के लिए तो विशेष श्रम नही करना पडता। मगर राज्य स्थापना के बाद उस पर अपना अधिकार बनाए रखने के लिए उन्ह काफी कष्ट सहना पडता है। वे अपनी यात्रा तो मानो पखो के सहारे उडकर तय कर लेते हैं, लेकिन धरती पर पाव रखते ही उनकी समस्याओ का दौर शुरू हो जाता है। यह हालत उन लोगो की होती है, जो या तो सभी का अनुमोदन-समथन खरीदते हुए उच्चतम पद पर पहुचते हैं अथवा किसी की अनुकम्पा से शासन सूत्र पा जाते हैं। यूनान मे कई शासको के साथ यही हुआ। आयनिया और हैलिसपोन्त मे विजेता दारा ने दो क्षत्रप नियुक्त किए, जिससे कि वे इन नगरो का शासन सूत्र चलाते रह और उसकी कीर्ति का विस्तार करें। यही बात उन शासको के विषय मे भी कही जा सकती है, जो सामान्य नागरिक थे और सैनिको को पथभ्रष्ट करके स्वय सम्राट बन बैठे।

ऐसे शासक हमेशा उन लोगो की कृपा और सम्पत्ति पर निभर रहते हैं, जिन्होने उन्हें इतने ऊचे पद पर बैठाया होता है और यह कृपा एव सम्पत्ति दोनो ही तत्त्व बहुत चपल और अस्थिर होते हैं। ऐसे शासक अपने शासन को न तो बनाए रखना जानते हैं, न उसे बनाए रख सकते हैं। इसका कारण यही है कि यदि वह विशिष्ट प्रतिभा और कौशल से सम्पन्न न हो तो, सामान्य नागरिक मे शासन करने की योग्यता नही होती। यही नहीं, सामान्य नागरिक के पास अपनी वफादार सेना भी नही होती।

बलात थोपी गई हर चीज की तरह रातो-रात स्थापित किए गए शासनतन्त्र की जडें गहरी नही होती। उसका प्रभाव भी गहरा नहीं होता।

परिणामत इस प्रकार के शासनतन्त्र विपत्ति का पहला झोका आते ही नष्ट हो जाते हैं। यदि अकस्मात शासक बन जाने वाले व्यक्ति में, भाग्य द्वारा अचानक झोली मे डाल दिए गए शासन और समृद्धि की रक्षा करने की कला और तकनीक को रातोरात सीखने की मेधा और कौशल नही है और यदि उसमे अपनी नीव परम्परा पुष्ट शासको की तरह मजबूत बनाने की योग्यता नही है, तो उसका विनाश अवश्यम्भावी है।

गुण अथवा समृद्धि के बल पर शासक बन बैठने की इन दोनो सभावनाओ के दो उदाहरण मैं अपने अनुभूत इतिहास मे से देना चाहूंगा। ये दोनो हैं—स्फोर्ज़ा के फ्रासेस्को और सीज़र बोर्गिया। फ्रासेस्को मीलान का सामान्य नागरिक था, लेकिन उपयुक्त साधनो और अपने महान गुणो के सहारे मीलान का ड्यूक बन बैठा, जो सत्ता और समृद्धि उसने लम्बे समय तक सघर्ष करके प्राप्त की थी, उसे अपने हाथो मे बनाए रखने मे उसे जरा भी कठिनाई नही हुई। दूसरी ओर सामान्यत ड्यूक वेलेन्तीनो कहलाने वाले सीजर बोर्गिया को अपने पिता की समृद्धि से शासन सूत्र मिला था, और जब पिता के भाग्य का सितारा डूबा, तो यह शासन भी जाता रहा। यद्यपि सीज़र बोर्गिया ने दूसरो के बाहुबल और भाग्य के भरोसे जीते गए राज्य मे अपनी स्थिति मजबूत बनाने के लिए वे सब तौर-तरीके अपनाए, जो कोई भी बुद्धिमान और सुयोग्य शासक अपनाता, फिर भी उसका ऐसा हाल हुआ।

जसा कि मैं पहले कह चुका हू, असाधारण गुण से सम्पन्न व्यक्ति अपने जीवन और उसकी तमाम सम्भावनाओ को खतरे मे डालकर भी प्राप्त किए गए प्रदेश मे अपने शासन की मजबूत नीव डाल सकता है। यदि हम ड्यूक के जीवनक्रम को देखें तो पता चलेगा कि उसने अपने भविष्य के निर्माण के लिए काफी मजबूत नीव बनाई थी और मैं इस मामल मे ड्यूक की उपलब्धियों की चर्चा अनावश्यक नही समझता। किसी नये शासक को उपदेश देने के लिए सीजर की कायवाहियो के निष्कर्षो से बढ़कर सामग्री कहा से मिलेगी? यदि उसके द्वारा की गई स्थापनाए लाभकर सिद्ध नहीं हुई, तो यह उसका दोष नही हैं। यह भाग्य की असाधारण करनी है, जो उसकी विडम्बना बन गई।

अलेग्जान्देर षष्ठ ने जब अपने पुत्र के अभ्युदय की कामना की, तभी उसे असख्य स्पष्ट और सम्भावित कठिनाइयो का सामना करना पडा। सबसे पहले तो उसे ड्यूक के लिए किसी प्रदेश की प्राप्ति का कोई रास्ता नजर नही आया। एक मात्र रास्ता चच से सम्बद्ध किसी प्रदेश को हथिया लेने का था, लेकिन वह जानता था कि चच के किसी प्रदेश को हथियाने की हर योजना का विरोध मीलान और वेनिस के शासक करेंगे। फीऽजा और रिमिनी पहले ही वेनिस वालों के सरक्षण मे थे, फिर उसे यह भी नजर आ रहा था कि इटली की सैन्य शक्ति, जिसका वह इस्तेमाल कर सकता था, उन लोगो के हाथों मे थी, जो पोप के अभ्युदय की सम्भावना से ही आतकित थे। यह सैन्य, शक्ति उसके किसी काम की नही थी, क्योकि वह ओर्सिनी और कालोना तथा उनके सधि बद्ध मित्रो की शक्ति थी।

इसलिए अलेग्जान्देर षष्ठ को अव्यवस्था फलाने तथा इन लोगो के राज्यो मे विद्रोह और अराजकता खडी करने की आवश्यकता थी, जिससे कि वह इन राज्यो के कुछेक अशो को जीत सके और मजबूती से अपने अधिकार में ले सके। यह काम आसान था, क्योकि उसने देखा कि कुछ कारणो से वेनिस के शासक फ्रांसीसी शासको को वापस इटली मे लाना चाहते हैं। अलेग्जान्देर ने न केवल इस प्रयास के प्रति उपेक्षा बरती, बल्कि शाह लुई के एक भूतपूर्व विवाह-सम्बन्ध को भग करके इसे आसान भी बना दिया। इस प्रकार से फास के शहशाह लुई ने वेनिस वालो की सहायता और अलेग्जान्देर की सहमति से इटली पर आक्रमण किया और जसे ही लुई मीलान में पहुचा, पोप ने उसी की सैनिक सहायता से रोमान्या पर अभियान कर दिया। लुई की इटली म मौजूदगी के कारण ही, रोमान्या ने पाप के आगे आत्मसमर्पण कर दिया।

लेकिन जब ड्यूक ने रोमान्या जीत लिया और कोलोना का दमन कर दिया गया, तो अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने और आगे बढ़ने के उसके प्रयास में दो चीजें बाधक बनी, पहली उसके सनिकों की वफादारी सन्देहास्पद थी, दूसरे फ्रास की नीति उसे आडे आ रही थी। स्पष्टीकरण के तौर पर ओर्सिनी की जिस सेना का उसन इस्तेमाल किया था, ऐसा वह सना ही उसे दगा देगी। वह सेना न केवल उसके विजयों

रोक देगी, बल्कि उसके द्वारा जीते गए प्रदेश से भी उसे वंचित कर देगी और ऐसा भी लगा कि शाह लुई भी यही करेंगे। फीज़ा पर अधिकार करने के बाद उसकी इन आशंकाओ की पुष्टि भी हो गई। ड्यूक ने जब बोलोना पर आक्रमण किया, तो ओर्सिनी के सैनिक आधे मन से ही लडते नजर आए। जहा तक शाह लुई का सवाल था, ड्यूक का उसके इरादो का पता तब चला जब उर्बिनो की डची पर अधिकार करने के बाद उसने टस्कनी पर आक्रमण किया और लुई ने उसे वापिस बुला लिया।

यही से ड्यूक ने फैसला कर लिया कि वह दूसरो के सैन्य बल और सौभाग्य पर निर्भर नही करेगा। पहले तो उसने रोम मे ओर्सिनी तथा कोलोना के पक्षधर गुटो की शक्ति घटाई। इसके लिए उसने इन गुटो के सभी कुलीन सदस्यो को पदवियां और ओहदे दे देकर और उनके पदानुकूल सम्मान प्रदर्शित करके अपनी ओर मिला लिया। परिणाम यह हुआ कि कुछ ही महीनो मे इन गुटो के साथ उनके सम्बन्ध क्षीण पड गए और ये लोग ड्यूक के पूर्ण समर्थक हो गए।

कोलोना के नेताओ को वह पहले ही बिखरा चुका था। उनकी एकता भंग करने के बाद ड्यूक ओर्सिनी के नेताओ का विनाश करने का अवसर खोजने लगा। शीघ्र ही एक अच्छा अवसर उसके हाथ आ गया और उसने उसका फायदा उठाया। हुआ यह कि ओर्सिनी वालो को काफी देर से महसूस हुआ कि ड्यूक और चर्च के अभ्युदय का सीधा अर्थ उनका अपना सर्वनाश है। उन्होने पेरूज्या के निकट मेगियोन नाम के स्थान पर एक सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन के परिणाम स्वरूप उर्बिनो मे विद्रोह हुआ, रोमान्या मे हलचल मची और ड्यूक को असंख्य धमकियां मिली। ड्यूक ने इन सबको फ्रांसीसी सेना की सहायता से कुचल दिया। इटली मे उसकी पहले जैसी महत्ता फिर स्थापित हो गई, लेकिन उसे अब फ्रांस अथवा अन्य किसी के भी सैनिको पर भरोसा नही रह गया था और इन पर निर्भर रहकर खतरा उठाने के बजाय उसने छल-कपट का आश्रय लिया।

उसकी अभिनय प्रतिभा इतनी गहन थी कि सिन्योर पॉलो से ओर्सिनी ने भी उसके साथ समझौता कर लिया। ड्यूक ने धन, वस्त्र और घोडो के उपहार देकर और कूटनीति के सभी मोहरो को चलकर, पॉलो को

आश्वस्त कर दिया और इस प्रकार सीधे-सादे ओर्सिनी वाले सिनिगैग्लिया जाकर उसके पंजे मे फंस गए। उनके नेताओ को मार डाला गया व अनुयायियों के पास ड्यूक से मिल जाने के अतिरिक्त कोई चारा ही नही रहा।

इस प्रकार ड्यूक ने अपनी भावी सत्ता की बडी मजबूत नींव डाली थी। उसने उर्बिनो की डची के साथ साथ पूरे रोमान्या पर अधिकार बनाये रखा। यही नहीं, एसा लगा कि पूरे रोमान्या-वासियो का विश्वास और मत्री को भी उसने जीत लिया, क्योकि वे लोग उसके शासन के साये मे फलने फूलने लगे।

इस मुद्दे का गहन अध्ययन और मूल्यांकन किया जाना चाहिए। इसलिए मैं इसे यहीं नहीं छोड दूगा। रोमान्या का शासन हाथ मे आते ही ड्यूक ने महसूस किया कि यहा पर पहले जिन सामन्तो का शासन था वे कमजोर थे और अपनी प्रजा पर अच्छी तरह शासन करने के बजाय उसको लूटते रहे थे। इन शासको ने जनता को एकता के सूत्र मे न बांधकर अराजकता का मार्ग दिखाया था। परिणामत अब इस प्रदेश मे गुण्डागर्दी, डाकेजनी, गुट-परस्ती और सामाजिक जीवन के अन्य सभी रोग मौजूद थे। इसलिए ड्यूक ने यह फैसला किया कि इन बुराइयो को दूर करने के लिए सुचारु शासन-व्यवस्था की आवश्यकता है तभी यहां की प्रजा सम्प्रभु शासक की आज्ञा का पालन करेगी। इसलिए उसने यहां का शासनाधिकारी एक निर्मम, लेकिन कार्यकुशल व्यक्ति रीमिरो डि ओर्को को बनाया और उसे सर्वाधिकार सौंप दिए।

थोडे ही अर्से मे रीमिरो ने इन बुराइयो को दूर कर दिया और रोमान्या में एकता स्थापित कर दी। इसके लिए उसकी बहुत प्रशंसा की गई। अब ड्यूक ने फैसला किया कि इतने अधिक अधिकार सौंपने की अब कोई आवश्यकता नहीं रह गई है, जिसे लोग बर्दाश्त न कर पाए। इसलिए उसने एक सम्मानित अध्यक्ष के अधीन प्रदेश के मध्य मे एक नागरिक न्यायालय की स्थापना कर दी। इस न्यायालय मे राज्य भर के हर नगर का एक प्रतिनिधि नियुक्त किया गया था।

ड्यूक यह भी जानता था कि अतीत मे की गई सख्तियों के कारण लोग उससे घृणा भी करते हैं। उसने जनता के मन से मैल [illegible]

एव उनका स्नेह और समथन जीतने के लिए, यह सिद्ध करने का फैसला किया कि अतीत काल मे जनता पर की गई क्रूरताए उसने नहीं की थी। ये उसके मन्त्री के कठोर स्वभाव का सीधा परिणाम थी। इसके लिए सीजर अवसर की प्रतीक्षा करता रहा। एक दिन प्रात सीजीना के चौक मे रीमिरो का शव दो टुकडो म पडा पाया गया। शव के बगल में लकडी का एक लटठा और खून से सना एक छुरा भी पडा था। इस घटना की भया-वहता को देखकर प्रजा बहुत दिनो तक शान्त और स्तब्ध-सी बनी रही।

लेकिन छोडिए, हम इस विषयण से पूव जहा थे, वही लौट चलें। ड्यूक के हाथो मे काफी सत्ता और शक्ति आ गयी थी और अपने निकटस्थ प्रतिद्वन्द्वियो की शक्ति नष्ट करने एव अपनी सेना के गठन के बाद वह स्वय को अधात सुरक्षित भी महसूस करने लगा था। उसके अस्तित्व को बहुत तेजी से आने वाला कोई खतरा नही था। अपनी सत्ता का विस्तार करने का इच्छुक होते हुए भी उसे फ्रास के मामले मे काफी सावधानी से काम करना था, क्योकि उसे पता था कि शाह लुई उसकी सहायता नही करेगा, क्योकि देर से ही सही उसे अपनी नीतिगत भूलो का पता चल चुका था। अतएव सीजर ने नये मैत्री सम्बन्धो की खोज शुरू की। जब फ्रास की सेनाए गाएना पर घेरा डाले हुए स्पेनिश सैनिको के विरुद्ध अभियान करने के लिए नेपल्स की ओर बढ रही थीं, तो उसने उन्हें टालना शुरू किया। फ्रास के प्रति इस उपेक्षा के पीछे उसका इरादा स्पेनिश शासको का समथन और सहायता पाना था। और अगर अलेग्जान्देर जीवित होता तो ड्यूक को सफलता भी मिल गई होती।

ये तो थी उसके भविष्य की त्वरित योजनाए। उसके परे उसकी चिन्ता का विषय यह था कि पोप के पद का अगला उत्तराधिकारी शायद उसके प्रति इतना मैत्री भाव न रखे और हो सकता है कि अलेग्जान्देर द्वारा दिया गया सब कुछ उससे छीन लेने का प्रयास करे। इस सम्भावना का मुकाबला उसने चार तरह से करने की योजना बनायी जिन शासकों को उसने लूटा और बरबाद किया था, उनका वशनाश पहला तरीका था। इससे पोप इन अपदस्थ शासको को उसके विरुद्ध खडा नहीं कर पाता। दूसरे उसने रोम मे अवस्थित सभी सम्मानित नागरिको और

से विजय प्राप्त करने, प्रजा के मन म अपने प्रति स्नेह और भय उपजाने अपने सनिकों से अनुमोदन और सम्मान पाने के इच्छुक नय शासक के समक्ष ड्यूक स बेहतर आदर्श नहीं हो सकता। यदि नया शासक अपने समर्थ और सम्भावित शत्रुओं अथवा प्रतिद्वन्द्वियों का मिटाने पुरानी परम्पराओं म सुधार करने, कठोर बनने और फिर प्रजा का प्यार पाने उदार और महान बनने का फसला करता है, तो उसे ड्यूक के पदचिह्नों का अनुसरण करना होगा। यदि नया शासक अपने द्रोही सैन्य बल को नष्ट करना चाहता है और नयी सना का गठन करना चाहता है या वह अन्य शासकों अथवा सम्राटों से ऐसे सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है कि या तो वे सम्मान उसकी सहायता करने के लिए बाध्य हों अन्यथा उसे हानि पहुचाने से पहले सोचने-समझने के लिए मजबूर हों तो ड्यूक की परम्परा उसे निभानी पड़गी।

ड्यूक की निन्दा अथवा आलोचना सिर्फ एक मुद्दे पर की जा सकती है और वह है, पोप जूलियस का चुनाव। यहां उसने सही व्यक्ति को नहीं चुना। जसा कि मैंने पहले कहा था, यदि वह अपनी पसन्द के व्यक्ति को पोप के पद पर बठा नहीं सकता था, तो कम-से-कम अनचाहे व्यक्ति को उस पद पर बठने से रोक अवश्य सकता था। उसे किसी भी हालत म ऐसे कार्डिनल का चुनाव पोप-पद के लिए नहीं होने देना चाहिए था, जिसे वह किसी जमाने म आघात पहुंचा चुका था और जो उससे भयभीत रहता था। लोग भय अथवा घृणा के वश होकर ही आपको आघात पहुंचाते हैं। जिन लोगों को सीजर ने स्वयं चोट पहुंचायी थी, उनमें से सान पिएरो अद विक्यूला, कोलोना, सान ज्योर्जियो अस्कानियो आदि भी थे। रूएन और स्पेनवासियों के अतिरिक्त अन्य किसी का भी चुनाव किया जाता, तो वे उससे भयभीत रहते। कॉलेज आव कार्डिनल्स में जो स्पेनी सदस्य थे, वे उसी के देशवासी थे और उसके अहसानमन्द भी और रूएन फ्रांस के राजा का समर्थन प्राप्त होने के कारण अपने-आप में काफी शक्तिशाली था। इसलिए ये दोनों पक्ष ड्यूक से भयभीत नहीं थे। ड्यूक का सवप्रथम लक्ष्य पोप-पद के लिए किसी स्पेनी का ही निर्वाचन चाहिए था और उस चेष्टा म विफल होने पर उसे रूएन...

८

धूर्तता द्वारा सत्ता हथियाने वाले शासक

सौभाग्य और पराक्रम के अतिरिक्त भी सत्ता हथियाने के दो तरीके हैं। यद्यपि इनमे से एक की विशद् चर्चा लोकतन्त्र शीर्षक के अन्तर्गत होनी चाहिए, फिर भी मैं उसे छोड़ देना मुनासिब नही समझता। इनमे से एक किसी अपराधपूर्ण एव नीचकर्म के द्वारा सत्ता हथिया लेने का तरीका है, और दूसरा सहनागरिको की सहमति से किसी सामान्य नागरिक द्वारा सत्ता का सूत्र सभाल लेने का तरीका।

पहले तरीके की चर्चा करते हुए मैं दो उदाहरण प्रस्तुत करूगा—एक पुरातन इतिहास से और दूसरा आधुनिक से। इस सन्दर्भ मे उचित और अनुचित को लेकर कोई टिप्पणी मैं नहीं करना चाहता, क्योंकि अनुकरण के इच्छुक लोगो के लिए प्रस्तुत उदाहरण स्वय म स्पष्ट हैं।

सिसिली का आगाथोक्लीज न केवल एक सामान्य नागरिक था, बल्कि हीनतम, निकृष्टतम कोटि का जीवन-यापन कर रहा था। इस अधम स्थिति से उठकर वह सिराक्यूज का शासक बन गया। कुम्हार के बेटे इस आगाथोक्लीज ने अपने कार्यकारी जीवन मे हर स्तर पर अपराधी वृत्ति से काम लिया, लेकिन उसम, अपने अपराधी कृत्या के साथ-साथ, शौर्य भी इतना था कि सेना मे काम करते हुए वह एक साधारण सैनिक के पद से उठकर सेनापति के पद पर पहुच गया।

सेनापति के पद पर नियुक्त होते ही उसने शासक बनने का और बिना किसी के प्रति उत्तरदायी हुए उस सबका बलात स्वामी बनने का सकल्प कर लिया, जो उसे स्वेच्छा से दे दिया गया था। अपनी इस महत्त्वाकाक्षा के सिलसिले मे उसने कार्थेजिनिया के हैमिलकार के साथ एक समझौता-सा कर लिया—हैमिलकार उन दिनो सिसिली म सैनिक

अभियान कर रहा थ ा।

फिर एक दिन र उसने सिराक्यूज की सीनेट और वहा को प्रजा को इकट्ठा कर लिया। ऐ ना लगा कि वह लोकतन्त्री पद्धति पर शासित उन राज्य के भविष्य से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण मामलो पर बात चीत करना चाहता है। इ नके बाद एक पूर्व निर्धारित सकेत क अनुसार उसने अपने सिपाहियो स त माम सीनेटरो और नगर क अमीरो की हत्या करवा दी। इन लोगो के मारे जाने के बाद उसने बिना किसी प्रकार की आन्तरिक बाधा अथवा विरोध का सामना किये नगर पर अपना कब्जा कर लिया।

यद्यपि उस पर कार्थेगिनिया की सेनाओ ने दो बार चढाई की और घेरा भी डाल दिया, नगर उसने न केवल सफलतापूर्वक नगर की रक्षा की, बल्कि अपने कुछ सनिको को नगर के बचाव करने के लिए छोड़कर शेष सनिको के साथ अफ्रीका पर हमला भी किया और कुछ ही समय म वह घेरा भी उठवा दि या एव कार्थेगिनिया क सनिको की दुर्गति बना दी। वे उसके साथ समझौत ा करने के लिए बाध्य हो गये। इस समझौते म अफ्रीका उनके पास ब ना रहा जबकि सिसिली आगाथाक्लीज का मिल गया।

अतएव जो कोई भी इस व्यक्ति की कार्यवाहियो का अध्ययन विश्लेषण करेगा, वह इस बात को समझ जायगा कि उसके सनिक जीवन म सामान्य सनिक के पद से सेनापति बनने तक भाग्य का कोई योगदान नही है, और जसा कि मैं पहले कह चुका हू उसकी प्रगति के मार्ग मे अनेक कठिनाइया और खतरे मौजूद थ। इस प्रकार स उसने अपना राज्य प्राप्त किया था और उसे बनाये रखने के लिए भी उसे अनेक खतरनाक और दुस्साहसपूर्ण अभियान करने पडे फिर भी अपने सह-नागरिको की हत्या, मित्रद्रोह, नि र्ममता और अविवेक को गुण की सज्ञा नही दी जा सकती। इस तरह के त ौर-तरीको स कोई भी शासक सत्ता का उपार्जन कर सकता है कीर्ति क ा नहीं। यो खतरो का मुकाबला करने और उनसे बच निकलने की आगाथ ोक्लीज की क्षमता की ओर ध्यान आकर्षित किया जा सकता है। विपत्तियो का सामना करने और उन पर विजय पाने की उसकी साहसिकता की भी दाद दी जा सकती है और ऐसा लगता है कि

किसी भी महत्त्वपूर्ण सेनापति से कम उसका महत्त्व नहीं आंका जा सकता। इसके बावजूद उसकी पाशविक क्रूरता, अमानवीयता और उसके असंख्य अपराधपूर्ण कृत्यों आदि के कारण उसे महान् व्यक्तियों की पंक्ति में खड़ा होने का सम्मान नहीं दिया जा सकता। जो उसके भाग्य अथवा गुण की उपलब्धि नहीं थी, उसका श्रेय भी तो इन गुणों का नहीं दिया जा सकता।

हमारे अपने युग में, पोप अलेग्जान्देर षष्ठ के कार्यकाल में फर्मों का ओलिवरोत्तो हुआ है। वर्षों पूर्व बचपन में ही उसके पिता की मृत्यु हो गई थी और उसका लालन-पालन उसके मामा गियोवानी फोग्लियानी ने किया था। युवावस्था के प्रारम्भिक दिनों में उसे पॉलो वितेल्ली के अधीन एक सैनिक की हैसियत से काम करने के लिए भेजा गया, जिससे वह उपयुक्त प्रशिक्षण पाकर ऊंचा पद पा सके। जब पॉलो की मृत्यु हो गयी तो ओलिवरोत्तो ने उसके भाई वितलोज्जो के अधीन रहकर भी काम किया। क्योंकि वह मेधावी भी था और साहसी एवं धैर्यवान भी। इसलिए कुछ ही समय में वह वितेलोज्जो का मुख्य सेनापति हो गया।

लेकिन उसे लगा कि दूसरों के आदेश मानना दासता का प्रतीक है, इसलिए फर्मों के कुछ ऐसे नागरिकों की सहायता से, जिन्हें अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता की अपेक्षा उसकी पराधीनता अधिक आकर्षक लगती थी और वितलोज्जो के कुछ अनुयाइयों की सहमति से, उसने फर्मों पर अपना अधिकार जमा लेने का फैसला किया। उसने गियोवानी फोग्लियानी को पत्र लिखा कि वह बहुत दिनों से घर नहीं गया है। इसलिए अब वह घर आकर उससे (अपने मामा से) मिलना चाहता है। अपने नगर को देखना चाहता है और अपनी सम्पत्ति की जांच करना चाहता है। उसने अपने पत्र में यह भी लिखा कि उसने आज तक सम्मान के अतिरिक्त अन्य किसी लाभ के लिए काम नहीं किया और कि वह अपने सह नागरिकों को दिखाना चाहता है कि उसने इतना समय व्यर्थ नहीं गंवाया है। इसलिए वह सम्मानपूर्वक लगभग १०० घुड़सवार मित्रों और सेवकों के साथ नगर प्रवेश करना चाहता है।

ओलिवरोत्तो ने गियोवानी से अनुरोध किया कि वे उसके लिए ऐसे स्वागत की व्यवस्था करें, जिससे गियोवानी की शान बढ़े और ओलिव-

बले मे अपने-आप को अभेद्य भी बना लिया। यदि सीजर बोर्गिया के धोखे म वह न आ जाता, तो उसका भी पतन उतना ही कठिन होता, जितना आगाथोक्लीज का पतन था। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, सीजर ने ओलिवरोत्तो को सिनिगोग्लिया म फसा लिया था। ओलिवरोत्तो भी यही फसा हुआ था। पितघात करने के एक वप के भीतर ही उसका भी गला वितेलोज्जो के साथ ही घोट दिया गया। ओलिवरोत्तो का पराक्रम एव अपराधपूण वत्तिया वितेलोज्जो की ही देन थी।

किसी किसी व्यक्ति का इस बात पर आश्चय भी हो सकता है कि आखिर आगाथोक्लीज और उसी जैसे अ य शासक अपनी असख्य क्रूरताओ, मित्र अथवा पित द्रोही कृत्यो के बावजूद अपने देश म कैसे सुरक्षित रह सके और कसे विदेशी शत्रुओ को भी थामे रह सक। आगाथोक्लीज के विरुद्ध उसके देशवासियो ने कभी कोई षडय त्र नही किया। इसके विपरीत अ य अनेक शासक अपनी क्रूरताओ के कारण प्रजा की घणा के ऐसे पात्र बन गए कि शाति-काल म भी अपने शासन को बनाये रखना उनके लिए कठिन हो गया, युद्धकाल की अनिश्चयता की तो बात ही दूसरी थी।

मेरी धारणा यह है कि क्रूरता का भी सही और गलत प्रयोग किये जाने की बात उठायी जा सकती है। यदि किसी बुरी बात की चर्चा इस स्तर पर क्षम्य हो, तो हम कह सकते हैं कि यदि एक बार की क्रूरता से समस्या का स्थायी समाधान होता हो और शासक की प्राण रक्षा उसस होती हो और उसके बाद निर तर क्रूरता का आश्रय न लेकर शासक जन कल्याण की ओर उ मुख हो जाए तो हम कह सकत हैं कि उसन क्रूरता का सही इस्तेमाल किया है। क्रूरता के दुरुपयोग की स्थिति वह है जिसमे प्रारम्भ म उसका इस्तेमाल कभी-कभार ही किया जाता है और समय गुजरने क साथ-साथ वह घटने अथवा ब द हो जाने की बजाय बढ़ती ही जाती है।

जो शासक दवी और मानवी सहायता से पहल तरीके का इस्तेमाल करते हैं, वे आगाथोक्लीज की तरह अपनी स्थिति को सुदृढ करने का कोई न कोई उपाय ढूढ लते हैं। दूसरे तरीके का इस्तेमाल करन वाल लाग शायद सत्तारूढ भी नही रह सकते। इसलिए इस बात पर ध्यान दिए

जाना चाहिए कि नये शासक को किसी राज्य पर अधिकार करते समय यह फैसला कर लेना चाहिए कि उसे किस-किस को कितना गहरा आघात पहुचाना होगा। उसे एक ही बार म ये आघात पहुचाकर किस्सा खत्म करना चाहिए। निरन्तर इन चोटो को दुहराना नही चाहिए। इस प्रकार वह अपने शासितो के मन से चिन्ता और अनिश्चय को दूर कर सकेगा और जब चाहेगा, प्रजाजनो को, कुछ लाभ पहुचाकर, अपनी ओर मिला सकेगा।

जो भी शासक दब्बूपन के कारण अथवा गलत मन्त्रणा से इसके विपरीत व्यवहार करेगा, उसे विवश होकर सदैव तलवार हाथ म थामे रहना पडेगा और वह निरन्तर नित्य नयी हिंसा से पीडित और आत्मरक्षा के विषय म सदैव चिन्तित, अपने प्रजाजनो पर कभी भी विश्वास नही कर सकेगा। जो भी हिंसा आवश्यक हो उसे एक ही बार म सम्पन्न करके उसका अध्याय समाप्त कर देना चाहिए। तभी प्रजा उसे भूल पाएगी और नये शासक के प्रति कम रुष्ट होगी। इसके बाद क्रमश धीरे धीरे प्रजाजनो को सम्मान और उपहार दिये जाने चाहिए। विस्तृत हिंसा के मुकाबले मे इन उपहारो का 'स्वाद' जनता को बेहतर लगेगा।

सबसे बढकर शासक का व्यवहार अपने शासितो के प्रति ऐसा होना चाहिए, जिससे अनुकूल अथवा प्रतिकूल परिस्थिति म उस व्यवहार को बदलना न पडे। वरना होता यह है कि विपत्ति की घडी मे दमन की आवश्यकता होने पर भी दमन करने म विलम्ब हो जाता है और शासितो पर किए उपकारो के पीछे जनता को शासक की विवशता नजर आती है अतएव शासित उनके लिए किसी भी प्रकार से आभारी नही होते।

६

७०

१७८

पलटते हैं, जहा एक सामान्य नागरिक किसी
सैनिक अभियान के बल पर नहीं, बल्कि
से अपने देश का शासक बन जाता है।
कह सकते हैं, जिसका शासक बनने के लिए
की आवश्यकता होती है और न ही भाग्य-
का चातुर्य चाहिए।
इस पद्धति के अन्तर्गत कोई व्यक्ति प्रजाजनो
स शासक बन जाता है। प्रजाजन और
हैं और सभी जगह लोग यह चाहते हैं कि
और उनका दमन न कर सकें, जबकि सामन्त
और उनका दमन करने के लिए कटिबद्ध रहते
महत्त्वाकाक्षाओ का इन तीन मे से कोई
है—राज्य किसी शासक की निजी सम्पत्ति बन
राज्य की स्थापना हो सकती है अथवा अरा-

सरचना कभी प्रजाजनो द्वारा होती है और कभी
से जिस पक्ष को अवसर मिल जाए, वही अपनी
है कि जब कभी सामन्तो को यह महसूस होता
उनके लिए असह्य होती जा रही है, तो वे
किसी एक का रुतबा बढ़ाना शुरू करते हैं और
की सिद्धि के लिए उसे शासक बना देते हैं।
का प्रभाव प्रजाजनो के लिए असह्य हो जाता

है, तो वे अपनी भीड मे से किसी एक को उठाकर शासक बना देते हैं, जिससे कि उसके अधिकार की छत्र छाया मे रहकर अपनी रक्षा कर सकें।

प्रजाजना के अनुमोदन से शासक बनने वाले व्यक्ति की अपेक्षा साम-ता की सहायता से शासक बनने वाले व्यक्ति को अपनी सत्ता बनाए रखने म बहुत ज्यादा कठिनाई होती है। शासक की हैसियत से वह स्वय को ऐसे अनेक लोगा से घिरा हुआ पाता है, जो स्वय को उसका समकक्ष समझते है और इसलिए वह उनको अपनी इच्छानुसार निर्देश नही दे सकता। इसके विपरीत प्रजाजना के अनुमोदन से शासक बनने वाला व्यक्ति भीड म अकेला खडा होता है और उसके आसपास के प्राय सभी लोग आदश लेने और उसे मानने के लिए प्रस्तुत होते हैं। इसके अपवाद स्वरूप इक्का दुक्का व्यक्ति ही होते हैं।

इसके अतिरिक्त दूसरो के हितो की हत्या किए बगर ईमानदारी से साम-तो को स-तुष्ट करना असम्भव होता है, लेकिन प्रजाजनो को ईमानदारी से सन्तुष्ट किया जा सकता है। प्रजाजन, साम-तो की अपेक्षा, अपने इरादो और आकाक्षाओ म कही ज्यादा ईमानदार होते हैं, क्योकि सामन्त प्रजा का दमन करना चाहते हैं, जबकि प्रजा की आकाक्षा इस दमन से केवल बचने की होती है। यही नही कोई भी शासक प्रजा के आक्रोश के विरुद्ध कभी अपनी रक्षा नही कर सकता, क्योकि प्रजाजन असख्य होते हैं। इसके विपरीत साम-तो के मुकाबले मे वह अपनी किलेब-दी कर सकता है क्योकि वे अल्पसख्यक होते है।

प्रजाजनो के नाराज होने पर अधिक से अधिक यही हो सकता है कि वे शासक का परित्याग कर दें, लेकिन यदि साम-तगण बिगड उठें, तो वे शासक का परित्याग ही नही करते, बल्कि सक्रिय रूप से उसका विरोध भी करते हैं। साम-त अधिक दूरदर्शी होते हैं और कही अधिक चतुर भी। वे लोग सदव समय रहते ही अपने हितो की रक्षा के लिए कायवाही कर लेते हैं और उसी का पक्ष लेते हैं जिसके जीतने की उ-हे आशा होती है।

फिर शासक को सदव उ-ही प्रजाजनो पर शासन करना होगा, जबकि साम-तो के बगर भी उसका काम बखूबी चल सकता है क्योकि वह उ-हे जब चाहे बना सकता है और जब चाहे अपदस्थ कर सकता है और इच्छा-

नुसार उनकी पदोन्नति अथवा पदावनति भी कर सकता है।

विवाद को और भी स्पष्ट करने के लिए मैं यह कहना चाहता हू कि सामन्तो के विषय मे दा बातें याद रखी जानी चाहिए या तो वे पूणतया आपके भाग्य पर निभर करने लगें अथवा इसके विपरीत अपन ही भाग्य पर निभर करते रह। आप पर निभर करने वाले सामन्त यदि वे लोभी न हो तो सम्मान और स्नेह के पात्र होते हैं। जो साम त आपके प्रभाव और ऐश्वय से परे, आत्म निभर वने रहते हैं, वे ऐसा दो कारणा से करते हैं, एक तो यह कि वे स्वभाव से ही कायर और सकीण हृदय वाले हा, यदि एमा है तो आपको उनका लाभ उठाना चाहिए। विशेषकर उनका जो समझदार हैं और अथपूण सम्मति दे सकते हैं, क्याकि आपकी सफलता के दौर म वे आपका सम्मान करेंग और आपत्ति काल म आपको उनसे किसी प्रकार का भय अथवा आशका नहा होगी। दूसरी ओर यदि वे सामन्त जान-बूझकर और अपनी महत्त्वाकाक्षा के वश मे होकर आपके प्रभाव स मुक्त रहते हैं, ता यह स्पष्ट है कि वे आपकी अपेक्षा अपन हितो के प्रति अधिक सजग है। इस प्रकार के सामन्तो के मुकाबले के लिए शासक को प्रस्तुत रहना चाहिए। उनको उन्ह अपना घाषित शत्रु ही समझना चाहिए, क्याकि आपत्ति काल मे वे लोग सदैव उनकी बरबादी म सहायक होग।

प्रजाजनो द्वारा शासक के पद पर बैठाए गए व्यक्ति को उनकी मैत्री के लिए प्रयास करना चाहिए और यह काम मुश्किल नही होता, क्याकि प्रजा केवल शासकीय दमन चक्र से मुक्त रहना चाहती है, लेकिन जो व्यक्ति जनता की इच्छा के विरुद्ध और साम तो की सहायता से शासक बनता है, उसे सबसे पहले प्रजा का अनुमोदन प्राप्त करने की कोशिश करना चाहिए। यदि वह प्रजा का (सामन्तो के शोषण और दमन के विरुद्ध) सुरक्षा का आश्वासन द सके, ता यह काम काफी आसान है। इससे अनिष्ट की आशका नही रहती। वह उपकार करने लग, तो लोग उसके प्रति और भी अधिक कृतज्ञता अनुभव करते हैं। अत प्रजा क्षण-भर मे अपन चुन हुए शासक स भी अधिक इस शासक के अनुकूल हो उठती है। प्रजाजना को प्रसन्न करने के कई तरीके हो सकत हैं। परिस्थिति के अनुसार भिन्न भिन्न तरीके अपनाए जा सकते हैं, इसलिए कोई जड व धन

अथवा नियम नही बताए जा सकते और मैं उनकी यहा चर्चा भी नही करूगा। मैं निष्कर्ष रूप मे इतना ही कहना चाहूगा कि शासक के लिए प्रजा को मित्र बनाए रखना जरूरी होता है, वना आपत्तिकाल मे उसके पास कोई चारा नही रह जाएगा।

स्पार्टा का शासक पूरे यूनान का और रोम की विजयी सेना का मुकाबला कर सका और उनके मुकाबले म अपनी एव अपने राज्य की रक्षा कर सका। इसके लिए उसे केवल यही करना पडा कि खतरे के समय उसने अपने कुछेक शासितो के विरुद्ध कार्यवाही की। यदि जनता उसके विरुद्ध होती, तो यह सक्षिप्त सी कार्यवाही काफी न होती। 'जनता की नीव पर (शासन का) महल बनाने वाले दलदल मे महल खडे कर रहे हैं, जसे पुरातन तक देकर किसी को भी मेरी इस धारणा का खण्डन नहीं करना चाहिए।

यदि कोई सामान्य नागरिक अपनी सत्ता का आधार जनता को बना लेता है और यह बात सदा के लिए सत्य मान लेता है कि जब भी उस पर शत्रु-पक्ष अथवा अपने शासनाधिकारियो की ओर से कोई विपत्ति आ पडेगी तो जनता उसे बचा लेगी तब यह बात सही हो सकती है। (इस मामले मे वह अक्सर देखगा कि उसकी धारणा गलत थी रोम मे ग्राग्ची और फ्लारेंस म ज्योर्जियो स्काली का भी तो यही हश्र हुआ था।) लेकिन यदि कोई ऐसा शासक अपनी सत्ता का आधार जनता को बनाता है जो नेतत्व कर सकता है और साहसी है जो आपत्ति काल मे घबराता नही है, जो सावधानी बरतने से नहा चूकता और जो अपन निजी गुणो और अपने द्वारा स्थापित परम्पराओ के बल पर लोगो की वफादारी जीत सकता है, तो जनता उसे कभी लज्जित या पराजित नही होने देगी ऐसा शासक अपनी सत्ता को सदव सुरक्षित पाएगा।

जब कभी सीमित शासकीय सत्ता के दायरे से निकलकर कोई राज्य निरकुशता के दायरे म जाने लगता है, तो राज्यो मे, रियासतो मे प्राय सकट खडा हो जाता है। निरकुशता की दिशा मे कदम उठाने वाले शासक या तो सीधे शासन करते हैं अथवा अपने शासनाधिकारियो के माध्यम से। शासनाधिकारियो के माध्यम से शासन करने वाले शासको की स्थिति

१०

किसी राज्य की शक्ति का अनुमान कैसे हो ?

इस प्रकार की रियासतो या राज्यो की विशेषताओं की जाच करते समय हमे एक और बात का ध्यान रखना चाहिए और वह यह कि किसी शासक की शक्ति क्या इतनी है कि वह आवश्यकता पडने पर एकाकी आत्मनिर्भर होकर सत्तारूढ बना रह सके ? अथवा क्या उसे सदैव किसी दूसरे की सहायता और सरक्षण की आवश्यकता पडेगी ? इस मुद्दे को और अधिक स्पष्ट करने के लिए मेरा कहना यह है कि मेरे खयाल से वही शासक एकाकी और आत्मनिर्भर बने रह सकते है जिनके पास आक्रमणकारी शत्रु की सेना के मुकाबले के लिए बराबर की सेना भरती करने लायक जनशक्ति अथवा धन होता है। इसी प्रकार से उन शासको को सदैव दूसरा का सरक्षण प्राप्त करना चाहिए, जो शत्रु के मुकाबले मे अकेले मदान मे नही डट सकते और पीछे हटकर अपने किले की दीवारो की आड मे रहकर आत्मरक्षा के लिए विवश हो जाते हैं।

मैं पहले मामले पर पहले ही चर्चा कर चुका हू और बाद मे भी इस विषय मे मुझे जो कुछ सूझेगा मैं वही कहूगा। जहा तक दूसरे मामले का सवाल है इतना ही कहा जा सकता है कि ऐसे शासको को आसपास के प्रदेशो अथवा राज्यो की चिन्ता न करके अपने-अपने नगरो की किलेबन्दी कर लेनी चाहिए। यदि कोई शासक अपने नगर की किलेबन्दी भली भाति कर लेता है और मेरे पूर्व कथनानुसार अपने प्रशासन की व्यवस्था कर लेता है, तो शत्रु उस पर हमला करते समय बहुत सावधान होगा। जिस काम मे असफलता की सम्भावनाए स्पष्ट हो, उस काम को लोग हाथ डालना

पसन्द नहीं करते और स्पष्ट है कि किसी जनप्रिय शासक द्वारा सुदृढ किए गए किलेबन्द नगर पर हमला करना आसान काम नहीं होता।

जर्मन नगर असीमित स्वतन्त्रता का उपभोग करते हैं। कुछ सीमित प्रदेश पर ही उनका अधिकार होता है और वे सम्राट की आज्ञा का पालन तभी करते हैं, जब वे ऐसा करना चाहते हैं। ये नगर-राज्य न सम्राट से डरते हैं और न ही किसी पड़ोसी शक्ति से, क्योंकि इन नगरों की किलेबन्दी इस प्रकार से कर ली गई है कि वहां के नागरिक जानते हैं कि उनको ध्वस्त करने के लिए किया गया सैनिक अभियान काफी लम्बा चलेगा। ऐसा इसलिए है कि इन तमाम नगरों के चारों ओर बड़ी ऊंची-ऊंची दीवारें और अच्छी-अच्छी खाइयां बनाई गई हैं। उनके पास पर्याप्त तोपखाना है और वहां भोजन, पेय जल और ईंधन का इतना भण्डार सदैव तैयार रखा जाता है कि साल भर तक सारी प्रजा का काम चल सके।

इसके अतिरिक्त हर जर्मन नगर में सार्वजनिक हानि उठाए बगैर जनसामान्य के लिए भोजन वस्त्र की व्यवस्था करते समय एक वर्ष के लिए ऐसे काम धन्धों का भी जाल बुन लिया जाता है, जिनसे सामान्य नागरिक को आजीविका का साधन मिल जाता है एवं नगर के दैनन्दिन जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति उस काम से होती रहती है। यहां सैनिक अभ्यास को सदैव सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है और इसकी व्यवस्था कई एक कानूनों के अन्तर्गत कई एक संस्थाओं के द्वारा की जाती है।

इसलिए भली भांति सुरक्षित किए गए किसी नगर के शासक पर यदि प्रजा उससे घृणा नहीं करती है, तो हमला नहीं किया जा सकता फिर भी यदि कोई हमला कर ही बैठे तो उसे शीघ्र ही तिरस्कृत एवं अपमानित होकर अपना घेरा उठा लेना पड़ेगा, क्योंकि कोई भी आक्रमणकारी अपनी सेना को लिए हुए साल भर तक शिविर डाले पड़ा नहीं रह सकता। घटनाक्रम इतना चंचल होता है कि साल भर तक निर्विघ्न घेरा नहीं डाला जा सकता।

यह आपत्ति सहज ही उठाई जा सकती है कि यदि लोगों का सामान किले की दीवारों के बाहर पड़ा हो और शत्रु उसे आग लगा दे शायद लोग भीतर बैठे नहीं रह सकेंगे एवं घेरे की ... [illegible]

उनका सम्पत्ति प्रेम उन्हें शासक के प्रति अपना दायित्व भूल जाने के लिए बाध्य कर देगा।

इस आपत्ति के प्रति मेरा जवाब यह है कि कोई भी दुस्साहसी और शक्तिसम्पन्न शासक इस प्रकार की कठिनाइयों पर विजय पा सकता है। वह कभी जनता को यह आशा बंधा सकता है कि उनके द्वारा सहे जा रहे कष्ट बहुत दिनों तक नहीं रहेंगे। और कभी उन्हें शत्रु की क्रूरता का भय दिखला सकता है। वह बहुत मुहफट किस्म के लोगों के विरुद्ध प्रभावकारी कार्यवाही भी कर सकता है। इसके अतिरिक्त शत्रु जब भी आएगा वह ग्रामीण क्षेत्रों को लूटता और आगजनी करके जलाता हुआ ही आएगा और वह यह काम तब करेगा, जब इस शासक के प्रजाजन नगर की रक्षा के लिए उत्साह में भरे हुए होंगे। इसलिए शासक के लिए चिन्ता का कारण और भी कम हो जाता है, क्योंकि इस उत्साह के मरते मरते धन-सम्पत्ति की हानि हो चुकी होगी और हो चुका नुकसान ला-इलाज होगा।

इसलिए प्रजाजन शासक के और भी निकट आ जायेंगे क्योंकि नगर की रक्षा के दौर में घर-बार जल जाने और खेती बाड़ी उजड़ जाने के बाद शासकों और शासितों के बीच परस्पर उपकार और सौहार्द्र का बन्धन और भी गहरा हो जायेगा। मानव का स्वभाव ही ऐसा है कि वह किसी का लाभ पहुंचाकर भी उतना ही उपकृत अनुभव करता है, जितना किसी से लाभ उठाकर। इसलिए इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए बुद्धिमान शासक के लिए शत्रु के घेरे के दौरान अपने प्रजाजनों के उत्साह और स्वामि भक्ति को तब तक प्रेरित किये रखना असम्भव नहीं होना चाहिए जब तक कि उसके पास रसद के भण्डार और प्रतिरक्षा के साधन हैं।

११

धर्मगुरुओ की रियासते

अब धमगुरुआ द्वारा शासित राज्यो की रियासता की
जाती है और यहा पर शासक के समक्ष जा भी कठिनाइया आ
शासक के सत्तारूढ होने से पहल ही आती है क्योकि इस प्र
रियासतो को जीता तो पराक्रम और भाग्य के बल पर जाता है,
उनको अपने अधीन बनाय रखने के लिए इनम से किसी भी गु
आवश्यकता नही पडती।

वस्तुत इन पर धार्मिक परम्पराओ के बल पर शासन किया ज
है और य परम्पराए भी ऐसी प्रबल होती हैं कि शासक जस चाहे रहे
जी चाहे करे, व ही उसके राज्य शासन की रक्षा करता हैं। धम गुरु
ऐसे शासक हाते हैं जो राज्य तो करते हैं मगर जिन्हे राज्य की प्रतिरक्ष
नही करनी पडती जिनके पास प्रजा होती है मगर वे उस पर शासन नह
करते और क्योकि उन्हे अपने राज्यो की प्रतिरक्षा नही करनी पडती
अतएव वे वहा से हटाय भी नही जा सकते और उनकी प्रजा पर क्योकि
शासन करने वाला कोई नही होता अतएव वे उसक विषय मे निश्चिन्त
भी रहते हैं, और वे अपने शासक को अपदस्थ करके न कभी किसी अन्य को
गद्दी पर बठा सकते हैं और न ही इसकी आशा करते है। इसलिए यही
कुछ ऐसे राज्य हैं, जो सचमुच सुरक्षित भी हैं और भरे-पूरे भी।

लेकिन क्योकि इनका नियन्त्रण ऐसी शक्तियो के हाथ मे होता है
जिनका बोध मानव को नही हो सकता इसलिए मैं उनके विषय म बहस
नही करूगा। वे उच्चतर कोटि के राज्य होते हैं और इनका शासन ईश्वर
चलाता है, इसलिए कोई उद्दण्ड और दम्भी व्यक्ति ही इन्हे अपनी बहस
का विषय बनायगा।

फिर भी यदि कोई मुझसे यह पूछे कि पोप ने कैसे इतनी व्यापक सांसारिक सत्ता और शक्ति बटोर ली है, इतनी कि जहां अलेग्जाण्डर के समय तक अधिकारसम्पन्न इतालवी महाराजा और स्वयं को महाराजा कहने वाले लोग ही नहीं बल्कि हर सामन्त, जागीरदार और निम्नतम श्रेणी का अधिकारी, इसकी (पोप की सम्पत्ति की, सत्ता की)* उपेक्षा कर सकता था उसे नगण्य समझता था वहां आज फ्रांस के शहंशाह भी इसके समक्ष कांपते हैं और आज पोप के अगुआ फ्रांस के शाह को इटली से खदेड़ सकते हैं वेनिस के शासकों को बर्बाद कर सकते हैं तो मैं इसके इतिहास को दुहरा लेना कोई अनुचित काम नहीं समझूंगा, यद्यपि सत्ता के संग्रह की यह कहानी सर्वविदित है।

फ्रांस के शहंशाह चार्ल्स के हमले से पहले, इटली का शासन पोप, वेनिस नेपल्स और फ्लारेंस वालों, मीलान के ड्यूक आदि के हाथों में था। इन शक्तियों के समक्ष मुख्यतः दो ही ध्येय थे—एक तो यह कि कोई विदेशी आक्रान्ता इटली पर आक्रमण न करने पाये—दूसरे यह कि शक्ति सम्पन्नों की इस मण्डली में से कोई एक शासक सत्ता का विस्तार न कर ले। जिन लोगों पर विशेष रूप से नजर रखी जाती थी, वे थे पोप और वेनिस वाले। वेनिसवालों को नियन्त्रण में रखने के लिए शेष सभी शासकों का एक जुट होना जरूरी था जैसा कि फरारा के मामले में हुआ। यही नहीं, पोप को अपनी सीमाओं से बांधे रखने के लिए रोम के जागीरदारों का प्रयोग किया गया था।

ये जागीरदार ओर्सिनी और कोलोना नामक दो गुटों में बंटे हुए थे, अतएव इन दोनों पक्षों के बीच मतभेद का गजायदा हमेशा बनी रहती थी, और पोप के ऐन सामने शस्त्र धारण करके इन गुटों ने पोप की सत्ता को कमजोर और असुरक्षित बना रखा था। यद्यपि यदा-कदा सिक्सटस जैसा

* अपने शासन का क्षेत्रीय विस्तार करने की इच्छा से प्रेरित होकर वेनिस के शासकों ने १४८२ में फरारा के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी थी। तब वेनिस के विरुद्ध सिक्सटस चतुर्थ नेपल्स फ्लारेंस और मीलान ने मिलकर मोर्चा बांध लिया था।

दुस्साहसी पोप भी सत्तारूढ हो जाता था, लेकिन उस जैसे शासक भी इस झमेले से जान नही छुडा पाते थे, चाहे वे अपनी सारी सम्पत्ति और सारे राजनय को प्रयोग मे ले आयें। यह स्थिति पोप का शासन काल छोटा होने के कारण होती थी। इसलिए किसी भी पोप को औसत दस वर्ष के शासन काल मे इनमे से किसी एक गुट को कुचलने का समय नही मिल पाता था और फिर मान लीजिए कि कोई एक पोप उदाहरणत , कोलाना गुट को नष्ट भी कर दे, तो इस बीच किसी दूसरे पोप का उदभव हो जाता था, जो ओर्सिनी का विरोधी होता था। वह कोलोना को पूर्वस्थिति प्रदान कर देता था, मगर ओर्सिनी को नष्ट करने का समय उसके पास भी नही होता था।

इसका अर्थ यह हुआ कि पोप की भौमिक अथवा सासारिक शक्ति और सत्ता का इटली म सम्मान करने वाला कोई नही था लेकिन तभी अलेग्ज़ान्देर षष्ठ का शासन काल प्रारम्भ हुआ और किसी अन्य पोप की अपेक्षा कही अधिक उसने यह सिद्ध कर दिया कि पोप अपने धन और सशस्त्र सेवाओ के बल पर बहुत कुछ कर सकता है। ड्यूक वैलेन्तीनो उसका उपकरण बन गया और फ्रासीसी हमला उसके लिए अवसर बन-कर आया और इन्ही के बल पर उसने वह सब कर दिखाया जिसकी चर्चा हम ड्यूक के कायकलापो के क्रम म कर आये है। यद्यपि उसका लक्ष्य चच का नही, ड्यूक का उद्भव ही था, फिर भी उसने जो कुछ किया उससे चर्च की महत्ता बढ़ी, और उसकी मृत्यु के बाद जब ड्यूक बर्बाद हो चुका था, चच को उसकी पसीने की कमाई उसकी महनत का फल उत्तराधिकार म मिला।

इसके बाद पोप जूलियस का उद्भव हुआ। उसके समय तक चच पहले ही व्यापक सत्ता का अधिकारी बन चुका था। रोम के जागीरदारो का नाश हो चुका था और रोमान्या पर चच का झण्डा फहरा रहा था, अलेग्ज़ान्दर की ही प्रबलता के कारण (ओर्सिनी और कोलोना) गुट समाप्त हो चुके थे। यही नही, उसे सम्पत्ति बटोरने का एक ऐसा साधन भी उपलब्ध हो गया, जिसका उपयोग अलेग्ज़ान्देर से पूर्व किसी ने नही किया था। जूलियस ने इन सबका इस्तेमाल जारी ही नही रखा,

प्रयोग मे सुधार भी किया।

उसने स्वय के लिए बोलोना को जीतने का और वेनिसवालो को कुचलने का फसला किया। साथ-साथ उसने फ्रांसीसियो को इटली से बाहर खदेड़ने की भी योजना बनाई। वह अपने इन सभी आयोजनों म सफल हुआ और क्योकि उसने यह सब चर्च के उद्भव के लिए किया था, किसी व्यक्तिविशेष के लाभाथ नहीं, अतएव उसके ये सभी अभियान उसके यश और कीर्ति के कारण बने। उसने ओर्सिनी तथा कोलोना गुटों को जिस स्थिति मे पाया था, उन्हें वसा ही रहने दिया यद्यपि इन गुटो में कुछेक नेता ऐसे भी थे, जो झमट खड़े करने की कला मे दक्ष थे। दो बातों ने उनको रोक रखा—एक थी चच की महत्ता, जिसकी बढती हुई शक्ति से वे आतकित हो उठे थ और दूसरे उनके बीच मे विद्रोह की लहरें पैदा करने वाले कार्डिनल उनके साथ नहीं थे।

जब इन गुटो के बीच उनके कार्डिनल मौजूद होते हैं तो ये रोम मे और अन्यत्र भी पारस्परिक झगड़े-झमटो को जन्म देते रहते हैं, और य सामन्त-जागीरदार एक दूसरे की मदद के लिए अनिवायत आते ही हैं। इस प्रकार धर्मोपदेशकों की निजी महत्त्वाकाक्षाओ के कारण सामन्तो जागीरदारो के बीच द्वन्द्व और विवाद खड़े होते रहते हैं।

जब परम पावन पोप लियो सत्तारूढ हुए, तो पोप का राज्य बड़ी मजबूत स्थिति मे था और हमे आशा है कि उनके पूवजो द्वारा तलवार के बल पर स्थापित की गयी यह महत्ता एव यह प्रबलता उनकी सज्जनता और उनके अनेक अन्य गुणो का सहारा पाकर और भी महान् एव सम्मान का विषय बन जायेगी।

१२

सैन्य-सगठन और किराये के सैनिक

प्रारम्भ में अनुगणित रियासतो या राज्यो की विशेपताओ की चर्चा करने के बाद और किसी हद तक उनकी समृद्धि एव असफलता के कारणों की परिगणना करने के बाद और उनकी प्राप्ति एव उनपर अधिकार बनाये रखने के अधिकतर तरीको को समझाने के बाद अब मुझे मोटे तौर पर इन भिन्न भिन्न तरीको का विश्लेपण करना है, जिनका सहारा लेकर वे राज्य स्वय को आक्रमण अथवा प्रतिरक्षा के लिए सगठित कर सकते है।

हम पहले कह चुके है कि राजा को राज्य की नीव मजबूत डालनी चाहिए वरना उसपर कभी भी विपत्ति आ सकती है। नय और पुराने सकलित सभी प्रकार के राज्यो की मजबूत नीव का आधार होते है अच्छे कानून और अच्छा सैन्य सगठन और क्योकि अच्छे सैन्य बल के बगर आप अच्छे कानून भी नही बना सकते एव जहा कही सैन्य बल अच्छा है, वहा कानून भी अच्छे ही बनते हैं इसलिए मैं कानूनो की चर्चा न करके शस्त्रधारी सैन्य की ही चर्चा करूगा।

कोई भी शासक अपनी प्रतिरक्षा का आधार या तो अपनी सेना को बना सकता है या किराये के सनिको को अथवा सहायक सैन्य सगठन को अथवा मिले-जुले सभी प्रकार के सैन्य को। किराये के सैनिक और सहायक सनिक कोटि के सगठन बेकार भी होत हैं और खतरनाक भी। अपने राज्य की रक्षा का आधार भाडे के सैनिको को बनाने वाला शासक न तो अपने शासन को सुरक्षित ही बना पायगा और न ही स्थायी, के इन सनिको मे ऐक्य नही होता। वे सत्ता के भूखे होते हैं। उनमे नहीं होता और वफादारी का भी अभाव होता है। वे शूरवीर होते हैं एव शत्रु के समक्ष कायर। उन्हें ईश्वर

होता और अपने साथियो, सहमानवो मे उन्हें आस्था नही होती। वे जब तक युद्ध के मैदान मे नही जाते, तभी तक पराजित भी नहीं होते। शान्ति काल मे ये आपको लूटते हैं, और युद्ध काल मे शत्रु आपको लूटता है। इस सबका कारण यह है कि उन्हे मिलने वाले स्वल्प वेतन के अतिरिक्त युद्ध के मैदान मे लडाने वाला और कोई प्रलोभन या कारण नही होता और यह वेतन इतना काफी नही होता कि वे आपके लिए अपने प्राण होम देने के लिए तैयार हो जायें। जब आप युद्ध नही कर रहे हैं, तब वे आपकी सेना में नौकरी करने के लिए सदा तैयार मिलेंगे, मगर युद्ध की घडी आने पर वे या तो आपको छोडकर भाग जायेंगे या बिखर जायेंगे। मुझे इस मुद्दे पर ज्यादा बहस करने की जरूरत नही होनी चाहिए, क्योंकि इटली की वर्तमान बरबादी का कारण वर्षों तक भाडे के सैनिको पर निर्भर प्रतिरक्षा व्यवस्था के अतिरिक्त कुछ भी नही है। यद्यपि कई बार कुछेक शासको ने इन भाडे के सनिको से काफी लाभ भी उठाया है और दूसरे पक्ष के भाडे के सैनिको के मुकाबले मे हमारे पक्ष के भाडे के सनिक वीर भी सिद्ध हुए हैं, लेकिन जब विदेशी शत्रुओ से पाला पडा तो उनकी बहादुरी का भेद खुल गया।

यही कारण था कि फ्रास के शहशाह चार्ल्स ने इटली पर अपनी छावनी मे ठहरे हुए सैनिक अफसरो के ही बल पर विजय पाई (अर्थात उसे लडना ही नही पडा)[1] और जो कोई भी इटली की इस पराजय का कारण हमारे अपने पाप बताता है सच कहता है, लेकिन ये पाप वे नही थे, जिनके विषय मे कहने वाला[2] सोच रहा था, बल्कि वे थे, जिनकी चर्चा मैंने की है क्योंकि ये पाप शासको ने किये थे, अतएव शासका को ही उनका फल भोगना पडा।

मैं किराये के सैनिको के इस्तेमाल से निकलने वाले खतरनाक परिणामो को और भी स्पष्ट कर देना चाहता हू। इन भाडे के सनिको

---

१ मैकियावेली न इसके लिए जो शब्दावली (Col gesso) इस्तेमाल की है उसका अर्थ होता है खडिया के एक टकडे से।

२ तात्पर्य सवानरोला स है।

के सेनापति या तो युद्ध की कला मे पारगत होगे या अनाडी। यदि वे युद्ध कला म पारगत हैं, तो आप उनपर भरोसा नही कर सकते, क्योंकि वे अपनी ही धाक बैठाने के फेर में होते हैं। इसके लिए या तो वे अपने स्वामी को, आपको अथवा आपके शत्रु का आपकी आकाक्षाओ और आयोजनो से भी अधिक विवश करेंगे। और यदि उनका सेनापति पराक्रम-हीन है तो भी आपकी बरबादी की पूरी-पूरी सम्भावना होती है।

यदि कोई व्यक्ति यह कहना चाहे कि यह बात किसी भी सशस्त्र सेना के बारे म कही जा सकती है, तो मैं यह कहूगा कि सशस्त्र सेनाओ का नियन्त्रण या तो किसी शासक के हाथ म होना चाहिए या लोकतन्त्री सरकार के। शासक को व्यक्तिगत रूप स सेना की कमान सभालनी चाहिए और सैनिको का नेतत्व करना चाहिए। लोकतन्त्री सरकार को अपने ही किसी नागरिक को सेनापति पद पर तैनात करना चाहिए और यदि इस प्रकार से तैनात किया हुआ सेनापति अयोग्य सिद्ध हो तो उसे हटा दिया जाना चाहिए। इसके विपरीत यदि वह सेनापति योग्य सिद्ध होता है, तो उसके अधिकार को ससदीय कानूनो के बल पर सीमित किया जाना चाहिए।

अनुभव से यही सिद्ध हाता है कि ठोस सफलता या तो शासको को मिलती है अथवा शस्त्र शक्ति से सम्पन्न लोकतन्त्र को। भाडे के सनिको से तो घाटा ही घाटा होता है और भाडे के सनिको के बल पर जीने वाले लोकतन्त्र की अपेक्षा अपने नागरिको के ही बीच से सगठित सनिक शक्ति वाले लोकतन्त्र के गुलाम बनाय जाने की सम्भावना कही कम होती है।

रोम और स्पार्टा सशस्त्र थे और कई शताब्दियो तक स्वतन्त्र बने रहे। स्विस लोग शक्तिसम्पन्न हैं और पूणतया स्वतन्त्र भी। पुरातन काल म भाडे के सैनिको पर निभरता का एक नमूना कार्थेगिनिया है। रोमनो के साथ प्रथम युद्ध के समाप्त होने पर, यद्यपि कार्थेगिनिया के अपने ही नागरिक सभी अधिकारी पदो पर आरूढ थे फिर भी भाडे के सनिको ने इस लोकतन्त्री राज्य को लगभग गुलाम ही बना लिया था।

इपामिनोण्डास की मत्यु के बाद थीबा-वासियो ने मक्दूनिया को सेनापति नियुक्त कर दिया और जब वह एक युद्ध ज

उसने थीबा-वासियो की स्वतन्त्रता भी छीन ली। ड्यूक फिलिप्पो की मृत्यु के बाद, मीलान वालो ने वेनिस वालो के विरुद्ध अभियान मे अपनी सेनाओ के नेतृत्व के लिए फ्रासेस्को स्फोर्जा को नियुक्त किया और जब उसने कारावेग्गियो के युद्ध मे वेनिस वाला को पराजित कर दिया, तो स्वय मीलान वासियो को ही अपने अधीन करने के लिए वह शत्रु पक्ष के साथ जा मिला। उसका पिता स्फोर्जा भी नेपल्स की सम्राज्ञी जोअन्ना के यहा नौकरी करता था, एक दिन वह बिना किसी पूर्व सूचना अथवा चेतावनी के उसे असहाय छोडकर चल दिया। परिणामत अपना राज्य बचाने के लिए उसे विवश होकर अरागन के शाह की कृपाकाक्षिणी बनना पडा।

यह ठीक है कि अतीत काल मे फ्लारेंस तथा वेनिस वाले अपनी सत्ता के विस्तार के लिए भाडे के सैनिकों का इस्तेमाल कर चुके हैं और इन भाडे के सैनिकों के सेनापति अपने मालिका की रक्षा के लिए बिना राज्य पर कोई दखल जमाये लड भी चुके हैं, लेकिन इस सम्बन्ध मे मुझे इतना ही कहना है कि फ्लारेंस वाले इस मामले मे सौभाग्यशाली थे। हम कुछेक ऐसे अच्छे सेनापतियो को ही लें जो उन्हे परेशान कर सकते थे। इनमे से एक सैनिक दृष्टि से असफल रहा दूसरे की योजनाए पूरी नही होने दी गयी और एक अन्य को अपनी महत्त्वाकाक्षा की दिशा बदलनी पडी। गियोवानी एक्युतो सैनिक दृष्टि से विफल हुआ और इसीलिए उसकी स्वामिभक्ति की परीक्षा नही हो सकी, लेकिन इतनी बात सभी लोग मानेंगे कि यदि वह युद्धभूमि मे सफल हो जाता, तो फ्लारेंस वासी उसके अधिकार मे होते। स्फोर्जाओ को सदैव ब्रेक्चेश्चो का विरोध सहना पडा और इस प्रकार से ये दोनो पक्ष एक-दूसरे पर अकुश रखे रहे। फ्रासेस्को ने अपनी महत्त्वाकाक्षा को लोम्बार्दी की ओर मोड दिया। ब्रचियो ने चर्च और नेपल्स के राज्य की ओर मुह किया।

लेकिन आइये देखें कि इससे कुछ ही देर पहले क्या हुआ था। फ्लारेंस वासियो न एक बडे चतुर व्यक्ति पॉलो वितेल्ली को अपना सेनापति नियुक्त किया। वितेल्ली ने बडे निम्न पद से कायकारी जीवन शुरू किया और धीरे धीरे अपनी साख उसने काफी बढा ली। यदि वह पीसा को जीत लेता, तो फ्लारेंस वासियो के पास उसकी इच्छाओ का अनुमोदन करने के

सिवाय कोई चारा न रह जाता, क्योंकि यदि वह उनके शत्रुओं से जा मिलता तो वे उसके मुकाबले में असहाय हो जाते और उसे अपना सेना भोगी बनाये रखने का परिणाम यह होता कि वे उसके आदेशों का पालन करने को बाध्य होते।

यदि वेनिस के विस्तार का अध्ययन किया जाए तो हम देखेंगे कि वेनिसवासियों ने मुख्य भूमि पर सैनिक अभियान करने से पहले जब अपनी सेनाओं को लेकर युद्ध लड़े, तब तक वे सुरक्षित भी रहे और उन्होंने यश एवं कीर्ति भी अर्जित की। अपने ही कुलीन जनों और नागरिकों की सेना को लेकर उन्होंने सर्वाधिक पराक्रम दिखाया, लेकिन जब उन्होंने मुख्य भूमि पर अपना अभियान शुरू किया, तो उनका पराक्रम जाता रहा और वे भी इटली की सैन्य परम्परा के अनुगामी बनकर रह गये। शुरू-शुरू में जब मुख्य भूमि के कुछ प्रदेशों पर उन्होंने अधिकार किया तो उनके समक्ष अपने सेनापतियों से भयभीत होने का कोई कारण नहीं था, क्योंकि अभी उनके उपनिवेश सीमित ही थे और उनकी साख काफ़ी अच्छी थी, लेकिन जब इन उपनिवेशों का विस्तार हुआ और जब कार्माग्नोला उनका सेनापति था, तब उनको अपने तौर-तरीकों के ग़लत होने का अहसास हुआ।

उन्होंने कार्माग्नोला के पराक्रम और युद्ध कौशल को देखा था और उसी के नेतृत्व में वे लोग मीलान के ड्यूक को हरा चुके थे। फिर उन्होंने देखा कि वह युद्ध के संचालन में उत्साहहीन होता जा रहा है और उन्हें लगा कि अब वह उनके पक्ष के लिए और कोई युद्ध नहीं जीत सकेगा। लेकिन वे उसे अपदस्थ नहीं कर सकते थे, क्योंकि ऐसा करने से जीता हुआ प्रदेश खो जाने की आशंका थी। इसलिए सुरक्षा की दृष्टि से वे उसकी हत्या करने के लिए विवश हो गये।

इसके बाद उन्होंने अपने सेनापतियों के रूप में बर्गामो के बार्तोलोमिऊ, सान् सेवरिनो के रॉबर्टो, पितिग्लियानो के काउण्ट और इसी प्रकार के अन्य लोगों को नियुक्त किया। और जब सेना की कमान इन लोगों के हाथों में थी तो वेनिस वालों को यह चिन्ता नहीं थी कि वे नये प्रदेश जीत सकेंगे या नहीं, बल्कि यह चिन्ता थी कि पहले जीते गये प्रदेश भी उनके हाथों में बने रह सकेंगे या नहीं? वैला के युद्ध में भी यही स्थिति थी। जिस

प्रदेश को जीतने में उन्हें ८०० वर्ष तक निरन्तर परिश्रम करना पड़ा था, उसे वे एक ही दिन की लड़ाई में खो बैठे।

भाड़े के सैनिकों से विजय तो बहुत धीरे-धीरे, बड़े विलम्ब से और वह भी मामूली-सी मिलती है, लेकिन पराजय नितान्त आकस्मिक और चौंकाने वाली होती है। अब चूंकि ये दृष्टान्त मुझे इटली में ले आए हैं और इटली में बरसों से भाड़े के सैनिकों का भी दबदबा चला आ रहा है मैं उनके विषय में और भी विवरण के साथ विवेचन करना चाहूंगा। यदि उनके उद्गम और विकास को स्पष्ट कर दिया जाए, तो उनकी बुराइयों का निराकरण अपेक्षाकृत आसान हो जाएगा।

आपको यह बात भली भांति समझ लेनी चाहिए कि हाल के वर्षों में जब से इटली ने साम्राज्य की ओर मुंह फेरना शुरू किया और चर्च की सांसारिक सत्ता ऊंची उठती चली गयी, तब से ही देश कई राज्यों में बट चला है। हुआ यह कि कई ऐसे नगरों में जहां सामन्तों-जागीरदारों ने सम्राट के समर्थन के बल पर जनता को दबा रखा था, विद्रोह हुए और चर्च ने अपनी सांसारिक सत्ता बढ़ाने के लिए इन विद्रोहों का समर्थन किया। कुछेक अन्य नगरों में कोई एक नागरिक शासक बन गया। इसलिए लगभग पूरा इटली पोप के अधिकार तले आ गया एवं कुछेक लोकतन्त्र खड़े हो गए। इन नये शासकों, पादरियों और नागरिकों को सैनिक मामला का कुछ भी अनुभव नहीं था। अतएव इन्होंने किराये पर विदेशी सैनिकों की भरती शुरू कर दी। इस प्रकार की ख्याति पाने वालों में सर्वप्रथम था—रोमान्या का अल्बरिगो दा कोनियो। उसकी परम्परा का ही अनुसरण करने वालों में ब्रचियो और स्फोर्ज़ा भी थे, जो अपने समय में इटली भर के मालिक थे। इसके बाद किराये के सैनिकों की जो परम्परा चली, वह हमारे समय तक चली आ रही है और इन भाड़े के सैनिकों के पराक्रम का ही परिणाम है कि इटली को चार्ल्स ने रौंदा है, लुई ने लूटा है, फर्डिनेण्ड ने उसपर हमला किया और स्विट्ज़रलैण्ड वालों ने उसे अपमानित किया है। भाड़े के इन सैनिकों की यह नीति ही थी कि पहले तो वे तोपखाने के सैनिक महत्त्व की ओर से ध्यान बटा लेते थे और अपनी महत्ता बढ़ाते चले जाते थे। पैसे के लिए सिपाहीगीरी करने वाले इन राज्यहीन लोगों की

महत्वाकाक्षा अल्पसख्यक तोपखाने का नेतृत्व करके पूरी नही होती थी और बहुसख्यक सैनिको को वे रसद और वेतन नही दे सकते थे। इसलिए ये लोग घुडसवार दस्तो का गठन करते थे एव इस प्रकार से सम्मान एव आजीविका पा जाते थे, यद्यपि इस रूप में उनकी सख्या बहुत अधिक होना जरूरी नही होता था।

स्थिति यह हो गयी कि लगभग २० हजार सनिको की सेना मे अधिक-से-अधिक दो हजार सनिक तोपखाने मे शामिल होते थे। इसके अतिरिक्त भाडे के इन सैनिको की तमाम चेष्टाए भय से मुक्त होने और कठोर परिश्रम से बचने मे केंद्रित थी। हाथापाई के दौरान ये लोग प्राणो की बाजी नही लगाते थे। युद्धबन्दी बनाया करते थे और इन बन्दियो की मुक्ति के लिए धन नही मागा करते थ। वे छावनिया पर कभी रात म हमला नही करते थे और घिर जाने पर कभी छापा नही मारते थे। अपने शिविरो के आसपास खाइया खोदकर अथवा बाड लगाकर किलेबन्दी करने की उन्होने कभी चिन्ता नही की। यही नही शीतकाल म व कभी अभियान नही करते थे। उनकी अपनी सैनिक आचार-सहिता म ये सब बातें क्षम्य थीं और जसा कि मैंने पहले कहा था वे लोग इस नीति का अनुसरण इसलिए करते थे कि वे परिश्रम और खतरे से बच सकें। इस सबका परिणाम यह हुआ कि इन लोगो ने इटली को गुलामी के कठघरे मे ला खडा किया और उसे अपमानित कराया।

सहायक, मिले-जुले और स्थानीय सैन्य दल

एक अन्य प्रकार की निरुपयोगी सेना होती है, सहायक सेना। यह तब खड़ी होती है, जब आप किसी शक्तिसम्पन्न राज्य से अपनी प्रतिरक्षा एवं सहायता के लिए सैनिक सहायता की मांग करते हैं। पोप जूलियस ने कुछ समय पहले ऐसा किया था। फरारा-अभियान में भाड़े के सैनिकों ने जो निराशाजनक स्थिति खड़ी कर दी थी उसे देखते हुए पोप सहायक सेना की ओर उन्मुख हुए और उन्होंने स्पेन के फर्डिनेण्ड के साथ मिलकर उसके सैनिक और सलाहकार बुला लिए।

अपने-आप में ये सहायतार्थ आने वाली सेनाएं उपयोगी एवं विश्वनीय हो सकती हैं, लेकिन उन्हें अपनी सहायतार्थ निमन्त्रण देनेवाले के लिए वे हमेशा बरबादी का कारण बनती हैं। यदि वे पराजित हो जाएं, तो आप अधर में टंगे रह जाते हैं और अगर जीत जाएं तो आप उनकी मुट्ठी में बन्द होते हैं। पुरातन इतिहास इस प्रकार के उदाहरणों से भरा पड़ा है, लेकिन मैं पोप जूलियस द्वितीय द्वारा खड़े किए गए उदाहरण को ही प्रस्तुत करके सन्तोष कर लूंगा। फरारा को प्राप्त करने की धुन में, जो उसने अपने-आप को एक विदेशी के हाथों में डाल दिया, इससे ज्यादा गलत कार्यवाही वह कुछ नहीं कर सकता था, लेकिन यह उसका सौभाग्य ही था कि इसके साथ ही कुछ और भी ऐसा घटित हुआ, जिससे वह बोए हुए कांटों की फसल काटने की यातना से बच गया। जब उसकी सहायक सेनाओं को रवेन्ना के स्थान पर खदेड़ दिया गया, तो स्विस लोग मैदान में आ गए और उन्होंने विजेता सेनाओं को मार भगाया और इस प्रकार सभी को आश्चर्य-

चकित करते हुए और स्वय भी इस सौभाग्य से चौंधियाये हुए, पोप जूलियस महोदय बन्दी जीवन से बच गए। शत्रु भाग खड़ा हुआ, सो वह उन्हें नही पकड सका क्योकि सहायतार्थ आये सैन्य दल अभियान मे पराजित हुए थे, अतएव वे उनके दबाव मे आने से बच गए।

फ्लारेंस वालो के पास अपने कोई सैनिक दस्ते थे ही नही, इसलिए उन्होंने पीसा को जीतने के लिए दस हजार फ्रासीसी सैनिक भाड़े पर लिए और इस प्रकार से उन्होंने जो खतरा उठाया, वह उनके तमाम विपत्ति काल मे सबसे बडा खतरा था। कुस्तुनतुनिया के सम्राट ने अपने पड़ोसी राज्य का झटका सहने के लिए दस हजार तुर्क सैनिक यूनान भेजे, मगर जब युद्ध समाप्त हो गया तो उन सैनिको ने यूनान छोडने से इनकार कर दिया और यही से यूनान पर नास्तिको का अधिकार जमना शुरू हो गया।* इसीलिए जो कोई व्यक्ति सैनिक विफलता का मुह देखना चाहता हो उसी को इस प्रकार की सेना का इस्तेमाल करना चाहिए, क्योंकि ये सहायतार्थ आये सैनिक दस्ते भाड़े के सैनिको से ज्यादा खतरनाक होते हैं। ये सहायक दस्ते प्राणघाती होते हैं। वे सगठित सैन्य का अग होते हैं और वह सैन्य किसी अन्य की आज्ञा का पालन करता है। भाड़े के सैनिको को आपको हानि पहुचाने मे समय लगता है और अवसर की तलाश रहती है, क्योंकि वे सगठित और ठोस सेना का रूप नही ले पाते। वे आप ही के बल पर खड़े होते हैं और आप ही के वेतनभोगी होते हैं। भाड़े के सैनिको का नेतृत्व भी आप ही के द्वारा नियुक्त किसी सेनापति के हाथों में होता है और व्यक्ति इतनी जल्दी इतनी अधिक मान्यता और अधिकार नही बटोर सकता कि आपको हानि पहुचा सके। सक्षेपत भाड़े के सैनिको की कायरता खतरनाक होती है और सहायक सैनिको की वीरता।

* बिजन्तिया के सम्राट कण्टाक्यूजन्स जान षष्ठ (ईस्वी सन् १२६२ १३८३) ने उस गृहयुद्ध मे भाग लिया। गृहयुद्ध १३४७ मे तब समाप्त हुआ जब उसने तुर्कों की सहायता से कुस्तुनतुनिया पर अधिकार कर लिया और तब जान पचम से उसका समझौता हुआ। वह जान पचम का अभिभावक शासक रह चुका था। १३५२ में फिर गृहयुद्ध छिड गया और जान षष्ठ ने फिर से तुर्को की सहायता ली। अन्तत उसने राज्य त्याग दिया।

इसलिए बुद्धिमान शासक हमेशा सहायक सेनाओं को छोडकर अपने ही सैनिक दस्तो को काम मे लाते हैं। वे अन्य सेनाओ की सहायता से युद्ध जीतने के बजाय, अपनी सेनाआ के बल पर युद्ध हारना बेहतर समझते हैं। उनका विश्वास होता है कि उधार मांगे हुए शस्त्रबल से कभी सच्ची विजय नही पायी जा सकती।

यहां मुझे सीजर बोर्गिया और उसके व्यवहार को उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत करते हुए रचमात्र भी झिझक नही होगी। ड्यूक ने रामान्या पर आक्रमण के लिए सहायक सनिको का इस्तेमाल किया। वह वहा पर फ्रांसीसी सनिक दस्तो को लेकर गया था। इनकी सहायता से उसने इमोला तथा फार्ली पर अधिकार कर लिया। तभी वह इस निष्कर्ष पर पहुचा कि सहायक सेनाएं खतरे मे खाली नही हैं और उसने भाडे के सनिक दस्तो की भरती शुरू कर दी। ओर्सिनी और वितेल्ली के सनिको को भरती करते समय उसने समझा कि इसमे खतरा कुछ कम है।

इनका इस्तेमाल करते हुए उसने इनका व्यवहार भी सन्दिग्ध पाया। वे उसे स्वामिद्रोही और खतरनाक भी लगे, अतएव उसने उनसे भी पिण्ड छुडाया और अपनी निजी सेना का गठन कर लिया। कोई भी व्यक्ति ड्यूक की फ्रांसीसी सैनिको पर निर्भरता के युग का और फिर ओर्सिनी तथा वितेल्ली पर उसकी निर्भरता के जमाने का तथा अन्तत निजी सेना के बल पर किए गए विजयाभियानो का अध्ययन करके इन भिन्न भिन्न प्रकार की सेनाओ की साख और विश्वसनीयता का अन्दाज लगा सकता है। वह हर स्तर पर पूर्वापेक्षी अधिक महत्त्वपूर्ण और अधिक दूरदर्शी एव अनुभव सम्पन्न होता चला गया और उसे चारो ओर से वास्तविक सम्मान तभी मिला, जब लोगो ने देख लिया कि वह अपनी सेनाओ का एकमात्र मुखिया है।

मैं अर्वाचीन इतालवी दृष्टान्तो की ओर से विमुख नहीं होना चाहता था, फिर भी मैं सिराक्यूज के हायरो की उपेक्षा भी नही करना चाहता। मैं उसकी चर्चा पहले भी कर चुका हू। जैसा कि मैंने बताया था, जब सिराक्यूज वासियो ने उसे अपनी सेना का कमाण्डर नियुक्त किया, तभी उसने महसूस कर लिया कि भाडे के सनिक दस्ते बेकार होते हैं। वे भी

हो चुके ये पुड़सार अब यह समझने लगे हैं कि परदेसी फौजों के बगर वे कभी युद्ध जीत ही नहीं सकते। यही कारण है कि फ्रांसीसी सनिक स्विस सैनिकों का मुकाबला नहीं कर सकते और स्विस सनिकों की सहायता के बगैर किसी का मुकाबला भी नहीं कर सकते।

इस प्रकार फ्रांस ने कुछ भाड़े के सनिक दस्तों का और कुछ नागरिक सेना का मिला-जुला प्रयोग किया है। यह मिश्रण पूणत सहायक सेना अथवा पूणत भाड़े के सैनिक दस्तों के आधार पर गठित सेना से कहीं बेहतर है और पूणतया नागरिक सना से कहीं निम्नतर। फ्रांस का उदाहरण अपने आप म ही काफी होना चाहिए क्योंकि यदि वहा चार्ल्स के द्वारा बनाई गई व्यवस्था का निर्वाह अथवा विकास किया गया होता, तो वह देश अजेय हो जाता, लेकिन मानव इतना अदूरदर्शी प्राणी होता है कि वह भोजन करते समय स्वादिष्ट खाना खाता है और यह नहीं जानता कि वह विषैला भोजन है। इस बात को मैंने शरीर को क्षीण करने वाले ज्वरों की चर्चा करते समय उठाया था।

जो शासक बुराइयों के अंकुर फूटते ही उनका पता नहीं पा सकता, वह बुद्धि-विवेक से हीन है, लेकिन कुछेक शासक ऐसे होते हैं जो इसका पता पाने की योग्यता से सम्पन्न होते हैं। यदि हम रोमन साम्राज्य के पतन का प्रारम्भ देखें, तो पता चलेगा कि इस पतन का सूत्रपात गोथों को भाड़े के सैनिकों के रूप म भरती से ही हुआ था। इस अल्प-से बीज से ही रोमन साम्राज्य की शक्ति क्षीण होने लगी थी और रोमनों के खोये पराक्रम के उत्तराधिकारी बने गोथ।

इसलिए निष्कष रूप में मैं कहना चाहूंगा कि जब तक कोई राज्य अपनी सेना नहीं रखता, तब तक वह कभी सुरक्षित नहीं हो सकता, बल्कि विपत्ति काल में उसकी रक्षा के लिए शौर्य और स्वामिभक्ति का कोई भण्डार नहीं होने के कारण उसे भाग्य के भरोसे रहना पड़ता है। बुद्धिमान लोग सदैव यही कहते और मानते आये हैं "उस सत्ता की ख्याति से बढ़कर कमजोर और चचल चीज़ कोई नहीं हो सकती, जो अपने सैन्यबल पर आधारित नहीं है।'

अपनी सेना वही होती है, जो अपने प्रजाजनों अथवा लोकतन्त्री नाग-

रिकों अथवा अपने आश्रितो मे से भरती की गई हो। अन्य सभी प्रकार की सेना या तो भाड़े की सेना होती है या सहायक सेना। मैंने ऊपर जिन चार शासकों की चर्चा की है, उनके द्वारा प्रस्तुत उदाहरणो से अपनी निजी सेना के गठन का तरीका समझ लेना कुछ कठिन नही होगा। और यदि कोई व्यक्ति सिकन्दर महान के पिता फिलिप तथा अन्य अनेक लोकतन्त्रो एव शासको द्वारा अपने-आप को सशस्त्र करने एव सगठित किए जाने की विधियों को समझ सके तो वह भी अपनी सेना के गठन का काम आसान पायगा। मैं स्वेच्छया इन शासकों द्वारा स्थापित परम्पराओ की दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता के आगे सिर झुकाता हू।

१४

शासक अपनी देश-रक्षक सेना का गठन कैसे करे ?

एक शासक को युद्ध की कला युद्ध का आयोजन-सगठन और उसके लिए आवश्यक अनुशासन सीखने के अतिरिक्त किसी बात की चिन्ता नही करनी चाहिए। किसी शासक से युद्ध कला के अतिरिक्त किसी अन्य कला अथवा ज्ञान की अपेक्षा ही नही की जाती और यह कला इतनी उपयोगी है कि उत्तराधिकारी शासको का अपना शासन बनाये रखने मे मदद तो करती ही है यह सामान्य नागरिक को शासक बन जाने मे भी सहायता पहुचाती है। दूसरी ओर हम यह भी देखते हैं कि शस्त्रबल के गठन की चिन्ता छोडकर अपने भोग विलास की चिन्ता करने वाले शासक शीघ्र ही अपदस्थ कर दिये जाते हैं। अपना राज्य गवाने का सर्वोपरि कारण है युद्धकला की उपेक्षा और किसी राज्य को जीतने का पहला तरीका है युद्ध कला मे दक्षता।

सशस्त्र होने के कारण ही फ्रासेस्को स्फार्जा एक सामान्य नागरिक के स्थान से उठकर मीलान का ड्यूक बन गया। उसके बेटे राज्यपद की कठिनाइयो से जी चुराने के कारण ही ड्यूक पद से उतारकर सामान्य नागरिक बना दिए गए। अगर आप निहत्थे हैं, तो आप अभागे हैं, क्योकि अन्य कई बातो के अतिरिक्त जनता आपसे नफरत भी करती है और जसा कि मैं आगे चलकर स्पष्ट कहूगा यह एक ऐसा कलक है, जिससे हर शासक को बचना चाहिए। किसी निहत्थे और सशस्त्र आदमी के बीच कोई तुलना हो ही नहीं सकती। कोई शस्त्रधारी व्यक्ति किसी शस्त्रहीन प्राणी का आज्ञाकारी अनुचर होगा अथवा कोई शस्त्रहीन व्यक्ति अपने

शस्त्रधारी नौकर चाकरो के हाथो सुरक्षित रह सकेगा, यह बात सोचना ही गलत है।

इस बाद वाली स्थिति मे दोनो पक्षो के बीच एक ओर सन्देह होगा और दूसरी ओर अवहेलना। इससे सहयोग असम्भव हो जाएगा। इसलिए युद्धकला को न समझनेवाला शासक अन्य अनेक विपदाओ को आमन्त्रित करने के अतिरिक्त न तो अपने सिपाहियो पर विश्वास कर सकता है और न ही उनसे सम्मान पा सकता है।

इसलिए उसे सैनिक अभ्यास की ओर से कभी मुह नही मोडना चाहिए। वस्तुत उसे शान्ति काल मे युद्ध काल की अपेक्षा इस दिशा मे अधिक ध्यान देना चाहिए। ये सैनिक अभ्यास भौतिक भी हो सकते हैं और मानसिक भी। जहा तक भौतिक अभ्यासो का सवाल है उसे न केवल अपने सैनिको को स्वस्थ, सगठित और सुप्रशिक्षित रखना चाहिए बल्कि उसे स्वय भी हमेशा शिकार पर जाते रहना और इस प्रकार से अपने शरीर को कष्ट सहने वाला बनाए रहना चाहिए। अपने भ्रमण से भूगोल का व्यावहारिक ज्ञान अर्जित करते रहना चाहिए। पर्वतो के ढलान कैसे हैं? घाटियो के मुहाने कैसे हैं? मैदानो का फैलाव कैसा है?—यह सब उसे सीखना चाहिए। उसे नदियो और दलदलो का अध्ययन करना चाहिए और इस सबके लिए कठोर प्रयास करना चाहिए।

इस प्रकार का ज्ञान दो प्रकार से काम मे आता है प्रथमत स्थानीय भौगोलिक स्थिति का स्पष्ट ज्ञान होने पर वह अपनी प्रतिरक्षा व्यवस्था का गठन भली भाति कर सकेगा। दूसरे स्थानीय परिस्थितियों का उसका ज्ञान एव बोध किसी भी ऐसी नयी बस्ती की विशेषताओ को समझने मे सहायक होगा, जिसका परिचय उसके लिए आवश्यक हो। उदाहरणार्थ—टस्कनी के पर्वतो, घाटियो, मैदानो, दलदलो और नदियो मे कई ऐसी बातें हैं जो अन्य प्रान्तो के पर्वतो, घाटियो, दलदलो एव नदियो मे भी मौजूद हैं। इसलिए एक प्रान्त की भौगोलिक अवस्थाओ का पता होने पर व्यक्ति दूसरे प्रान्तो का भौगोलिक अध्ययन आसानी से कर सकता है। जो शासक यह नही कर सकता, वह कभी अच्छा सेनापति नही बन सकता। यह भौगोलिक योग्यता उसे शत्रु का पता लगाने मे मदद दे सकती है,

शिविर स्थल का निर्धारण करने मे सहायक हो सकती है। अभियान के समय अपनी सेना का नेतृत्व करना सिखा सकती है। युद्धस्थल म उसकी व्यूह रचना मे मदद दे सकती है, किसी नगर पर घेरा डालना सिखा सकती है। और दूसरो के ऊपर उसे लाभ पहुचा सकती है।

इकियनो के नेता फिलोपोमेन की इतिहासज्ञा ने अन्य कई बातो के अतिरिक्त, इस बात के लिए भी तारीफ की है कि वह शान्ति काल में भी सैनिक व्यूह रचना के अतिरिक्त अन्य किसी बात की चिन्ता नहीं करता था। जब वह अपने मित्रो के साथ राजधानी से बाहर घूमने फिरने जाता था, तो जहा-तहा रुककर उनसे बहस करने लगता था। यदि शत्रु उस पहाड़ी के ऊपर खड़ा हो और हम अपनी सेना के स थ यहा खड़े हो तो हममे से कौन लाभकर स्थिति मे होगा ? अपनी पक्तियों को भग किए बगैर शत्रु को आप कसे उलझाएगे ? यदि हम पीछे हटना चाहें ता कसे और क्या कायवाही करेंगे ? अगर शत्रु पीछे हट जाए ता हमारे पास उसका पीछा करने का सर्वोत्तम तरीका क्या होगा ?

और इसी प्रकार से मित्रों के साथ सैर-सपाटा करते हुए ही वह उन तमाम परिस्थितियो और सम्भावनाओ की व्याख्या करता चला जाता था, जो किसी सेना पर पड सकती हैं। वह उनके मत अभिमत भी सुनता था, अपनी बात भी कहता था और काय-कारण सम्बन्ध की स्थापना के द्वारा अपनी बात स्पष्ट करता था। इस प्रकार की निरन्तर मन्त्रणा के परिणाम स्वरूप अपनी सेनाओ का नेतृत्व करते समय वह हर सकट का सामना करने म समथ होता था।

जहा तक बौद्धिक प्रशिक्षण का सवाल है शासक को महान व्यक्तियो के युद्धकालीन कायकलापो का अध्ययन करके, उनकी जय पराजय के कारणो को जानने के लिए, इतिहास का वाचन करना चाहिए, जिससे वह पराजय से बच सके और सवत्र जयी हो सके। मुख्यत उसे इतिहास का अध्ययन इसीलिए करना चाहिए कि महान व्यक्तियो का वह भी अनुकरण कर सके। उन्होंने भी किसी प्रशसित और सम्मानित ऐतिहासिक व्यक्ति को अपना आदश बनाया था और उसके कृत्यो एव तौर-तरीका को अपने सामने रखकर उनका अनुकरण किया था। कहा जाता है कि सिकन्दर ने

एकिलीज़ का अनुकरण किया था। सीजर ने सिकन्दर का अनुकरण किया और स्किपियो ने साइरस का और जो कोई भी व्यक्ति जेनोफ़न की लिखी हुई साइरस की जीवनी पढ़ेगा वही समझ सकेगा कि स्किपियो द्वारा अर्जित कीर्ति का कितना श्रेय साइरस के प्रति उसकी आस्था को दिया जा सकता है और किस सीमा तक स्किपियो के उच्चतर नैतिक अनुशासन, उसका सौजन्य, उसकी मानवीयता और उदारता जेनोफ़न द्वारा वर्णित, साइरस के चरित्र से मेल खाते हैं।

१५

शासकों की निन्दा या स्तुति क्यों की जाती है ?

अब हमें यह देखना है कि किसी शासक को अपने शासितों अथवा मित्रों के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिए। मैं जानता हूं कि इस विषय पर पहले भी बहुत कुछ लिखा जा चुका है और मैं समझता हूं कि इस सम्बन्ध में मेरा कुछ कहना धृष्टता नहीं मानी जाएगी, क्योंकि विशेषकर इस विषय की चर्चा करते समय, मैं कुछ मौलिक नियमों का निर्धारण करता हूं, क्योंकि मैं कुछ ऐसा ही कहना चाहता हूं जो जिज्ञासु व्यक्ति के लिए व्यावहारिक रूप से लाभकर हो सके, इसलिए मैंने बात को ऐसे ही ढंग से पेश करने का इरादा किया है जो उसका यथार्थ रूप है। उनके कल्पित रूप को मैं पेश नहीं कर रहा हूं।

कई लोगों ने निरस्तित्व लोकतन्त्रों की और शासनों की स्वप्निल शृंखला बना रखी है। आदर्श जीवन एवं दैनिक जीवन के बीच की खाई इतनी बड़ी है कि आदर्श के फेर में यथार्थ व्यावहारिक जीवन की उपेक्षा करने वाला व्यक्ति आत्मरक्षा की बजाय आत्मनाश की राह पर चल निकलता है। सच्चाई तो यह है कि बहुत से दुराचारियों के बीच फंसकर सदैव सदाचार का ही पालन करने वाला व्यक्ति निश्चित रूप से मुसीबत में पड़ जाता है, इसलिए जो शासक अपना शासन बनाए रखना चाहता है, उसे सदाचारी न बनने की 'कला' भी सीखनी ही चाहिए और आवश्यकतानुसार उसका उपयोग करने या न करने की निर्णय-बुद्धि भी प्राप्त करनी चाहिए।

इसलिए काल्पनिक मुद्दों को अलग छोड़कर और केवल उन्हीं चीजों

की चर्चा करते हुए, जिनका सचमुच कुछ अस्तित्व है, मेरा कहना यह है कि जब कभी भी किसी व्यक्ति की (विशेषकर शासकों की क्योंकि उनकी ओर लोगों की नजर ज्यादा लगी रहती है) चर्चा होती है, उनके विभिन्न गुणों अथवा अवगुणों की वजह से ही उनकी निन्दा या स्तुति की जाती है। उदाहरणार्थ कुछेक को उदार कहा जाता है और अन्यों को कृपण, (मैं दूसरी श्रेणी वालों को 'लोभी' न कहकर उन्हें टस्कन विशेषण 'कृपण' से अभिहित कर रहा हूं, क्योंकि जो व्यक्ति अपने स्वामित्व को व्यय करते हुए क्षुद्रहृदयता का परिचय देता है, उसे हम 'कृपण' कहते हैं जो व्यक्ति अन्यों के स्वामित्व को लूटने को उद्यत रहता है, उसे 'लोभी')[1]। कुछ लोगों को परोपकारी समझा जाता है, कुछ दूसरों को झपट्टू, कुछेक व्यक्ति क्रूर माने जाते हैं, कुछेक सहानुभूति से आपूरित, किसी एक को वफादार समझा जाता है, किसी दूसरे को द्रोही। कोई व्यक्ति स्त्रैण एवं कायर के रूप में विख्यात होता है और कोई व्यक्ति दुस्साहसी एवं प्रचण्ड, कोई व्यक्ति सौम्य और शिष्ट होता है, कोई दम्भी, कोई व्यक्ति लम्पट होता है, और कोई नितान्त निष्कलंक, कोई व्यक्ति सीधा और निश्छल होता है एवं कोई धूर्त एवं चालबाज, एक व्यक्ति जिद्दी होता है, दूसरा लचीले स्वभाव का, एक व्यक्ति गम्भीरचित्त होता है, दूसरा उथला एवं चपलस्वभाव, एक व्यक्ति धर्मप्राण होता है, दूसरा शंकालु स्वभाव का। मैं यह जानता हूं कि हर व्यक्ति इस बात से सहमत होगा कि मेरे द्वारा गिनाई गई सभी अच्छी बातों को अपने चरित्र में धारण करने वाला शासक सभी जगह प्रशंसा का पात्र होगा।

लेकिन मानव स्वभाव ही ऐसा है कि शासक में ये सभी गुण हो ही नहीं सकते, बल्कि वे लोग सदैव इन गुणों का प्रदर्शन कर ही नहीं सकते, इसलिए शासक को इतना सजग और बुद्धिमान होना चाहिए कि वह उन दुर्गुणों के कारण होने वाली बदनामी से बचे, जिनके कारण राज्य ही खो जाने का भय बना रहता हो। उसे उन तमाम अवगुणों से भी बचना ही

१ मैकियावेली ने कृपण के लिए इतालवी शब्द मिजरो तथा 'लोभी' के लिए एवारो लिया है।

चाहिए जो इतने खतरनाक नहीं होते, लेकिन यदि इनसे बचना सम्भव न हो तो कोई विशेष चिन्ता की बात भी नहीं। दूसरी ओर उसे उन तमाम अवगुणों का कलंक अपने माथे पर लेने से झिझकना भी नहीं चाहिए, जो राज्य की रक्षा के लिए आवश्यक बन चुके हों। मैं यह बात इसलिए कह रहा हूँ कि हर बात को देखते हुए शासक देखेगा कि प्रत्यक्षतः गुण नजर आने वाली कई बातें व्यवहारतः उसे बरबाद कर सकती हैं, जबकि कई दुष्टतापूर्ण लगने वाली बातें उसकी सुरक्षा और समृद्धि का आधार हैं।

१६

उदारता बनाम कृपणता

मैंने ऊपर जिन गुणों का जिक्र किया है, उनमें से पहले को ही लें। मेरी धारणा है कि उदारता के लिए प्रख्यात होना अच्छा है, लेकिन यदि शासकीय कार्यवाहियों के पीछे की मूलभूत प्रेरणा उदारता के लिए ख्याति की इच्छा ही हुई, तो मुसीबत खड़ी हो जायेगी। बात यह है कि यदि आपकी उदारता सदिच्छा एवं ईमानदारी से प्रेरित है, तो उसकी ओर किसी का ध्यान तक नहीं जायेगा और आप कृपणता की कुख्याति से बच नहीं पायेंगे, इसलिए यदि आप अपनी उदारता के लिए प्रसिद्ध होना चाहते हैं, तो आपको पूरे आडम्बर के साथ अतिव्ययी होना पड़ेगा। और अतिव्ययी शासक शीघ्र ही अपने सभी साधनों को लुटा बैठेगा। अन्ततः अपनी प्रसिद्धि को बनाये रखने के लिए वह अपनी प्रजा पर अतिरिक्त बोझ डालने के लिए शोषणकारी कर लगाने के लिए और धनोपार्जन का हर सम्भव तरीका आजमाने के लिए, विवश हो जायेगा। इससे उसकी प्रजा उससे घृणा करने लगेगी और प्रजाजनों की दरिद्रता के लिए जिम्मेदार होने के कारण उसके प्रति तिरस्कार का भाव अपना लेगी। परिणामतः अनेक को आघात पहुंचाकर कुछेक का उपकार करने वाली उसकी इस उदारता के कारण वह छोटे से छोटे झटके के सामने भी काप उठेगा तथा एक ही बार कोई बड़ा खतरा उत्पन्न होने पर उसकी विपदा बन जायेगी। जब वह इस सत्य को समझेगा और अपनी मूल स्थिति को लौट चलने की कोशिश करेगा तो तुरन्त ही कृपणता के लिए बदनाम हो जायेगा।

जब कोई भी शासक अपने जीवन और शासन के हितों को आघात पहुंचाये बगैर इतनी उदारता नहीं बरत सकता कि प्रजा उसकी वाह-वाह करने लगे तो बुद्धिमत्ता इसी में है कि कृपणता के लिए फैलती हुई अपनी

बदनामी की चिन्ता ही न करे। समय पाकर, जब लोग यह देखेंगे कि शासक की मितव्ययिता के कारण उसका वर्तमान राजस्व ही प्रशासनिक व्ययभार वहन करने के लिए काफी सिद्ध हो रहा है और वह प्रजा पर नया बोझ डाले बगैर ही नये-नये उद्योग और अभियान चला सकता है, तो वे स्वयं ही उसकी मौलिक उदारता की दाद देने लगेंगे। इस प्रकार से वह उन लोगों के समक्ष अपनी उदारता का सिक्का जमा लेगा, जिनसे वह कुछ लेता नहीं है और ऐसे लोग असंख्य होंगे और उन लोगों की नजरों में कृपण सिद्ध होगा, जिनको वह कुछ देता नहीं है और ऐसे लोग कुछेक ही होते हैं।

हमारे अपने युग में ऐसे शासकों ने अनेक महान् कार्य कर दिखाये हैं, जो अपनी कृपणता के लिए विख्यात रहे हैं और दूसरे शासक बरबाद हो गये हैं। पोप जूलियस द्वितीय ने पोप-पद जीतने के लिए अपनी उदारता का सिक्का जमाया, लेकिन बाद में अपने युद्धों का व्ययभार वहन करने के लिए उसने इस सिक्के को जमाये रखने की कोई कोशिश नहीं की। फ्रांस के वर्तमान शासक ने प्रजा पर किसी प्रकार का अतिरिक्त करभार डाले बगैर कई एक लड़ाइयां लड़ीं, क्योंकि उसकी दीर्घकालिक मितव्ययिता इन युद्धों का व्ययभार वहन करने में उसके काम आयी। यदि स्पेन के वर्तमान शाह अपनी उदारता के लिए विख्यात होते तो वह इतनी सफलता से इतने सारे नये उद्योगों-अभियानों को शुरू और पूरा न कर पाते।

इसलिए यदि कोई शासक अपने शासितों को लूटने के लिए बाध्य नहीं होता, यदि वह अपनी और अपने राज्य की रक्षा करने में समर्थ है, यदि वह दरिद्रता एवं शर्मिन्दगी के गर्त में नहीं गिर जाता, यदि वह लोलुपता की नीति अपनाने के लिए विवश नहीं हो जाता, तो उसे कृपण कहलाये जाने की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। उसकी कृपणता एक ऐसा अवगुण है, जिसके बल पर उसका शासन बना हुआ है।

किसी किसी व्यक्ति को आपत्ति हो सकती है। सीजर अपनी उदारता के बल पर ही सत्तारूढ़ हुआ था और अन्य भी कई लोग अपने उदार व्यवहार एवं तदर्थ ख्याति ही के कारण उच्चतम पदों तक पहुंच सके। इस

आपत्ति के प्रति मेरा जवाब यह है या तो आप शासक हैं अथवा शासक बनने वाले हैं। अगर आप शासक हैं, तो अपनी उदारता की कीमत आप ही को चुकानी पडेगी। अगर आप शासक बनने वाले हैं, तो आपको अपनी उदारता के लिए विख्यात होना ही चाहिए।

सीज़र उन लोगो मे से एक था, जो रोम पर अपना शासन स्थापित करना चाहते थे, लेकिन शासन की स्थापना के बाद यदि वह जीवित रहता और अपने व्ययभार को कम नही करता, तो सत्ता से उसका पतन निश्चित था।

फिर भी कोई व्यक्ति उलटकर कह सकता है कि दुनिया मे ऐसे भी शासक हुए हैं, जो अपने सैनिक अभियानो मे भी असाधारण रूप से सफल रहे हैं और जो अपनी चरम उदारता के लिए भी विख्यात रहे हैं। इसके लिए मेरा उत्तर है कि शासक वही कुछ दूसरो को देता है, जो उसका अपना होता है अथवा उसके शासितो का होता है अथवा वह दूसरा की ही सम्पत्ति दान करता रह सकता है। अपनी अथवा प्रजाजनो की धन सम्पत्ति का दान करते समय उसे मितव्ययी होना चाहिए। दूसरो की सम्पत्ति दान दते समय उसे अपनी उदारता पूरे पैमाने पर दिखानी चाहिए। अपनी सेनाओ को लेकर विजयाभियान पर निकला हुआ शासक, जो लूट मार पर जीवन यापन करता है, जो धमकाकर धन सम्पत्ति ऐंठता है, वह शत्रु की सम्पत्ति का वितरण कर रहा होता है और उसे खुले हाथो दान देना ही चाहिए, अन्यथा सैनिक उसके पीछे पीछे नही चलेंगे। आप सीज़र, साइरस और सिकन्दर की तरह, उस धन-सम्पत्ति का वितरण उदारतापूर्वक कर सकते हैं, जो आपके प्रजाजनो की नही है। अजनबियो के स्वामित्व के बटवारे से अपने राज्य मे आपकी साख पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पडता, बल्कि इससे यह साख बढती ही है। आपको आघात तभी पहुचता है जब आप अपना माल लुटाते हैं।

उदारता से बढकर आत्म पराजयी चीज़ कोई नही इसे व्यवहार मे लाते-लाते आप इसे बरतने में असमर्थ हो जाते हैं और आप या तो दरिद्रता और वितृष्णा के शिकार हो जाते हैं अथवा दरिद्रता से बचने की चेष्टा मे घृणा एव लोलुपता के शिकजे मे आ जाते हैं। एक शासक को सबसे ज्यादा

बदनामी की चिन्ता ही न करे। समय पाकर, जब लोग यह देखेंगे कि शासक की मितव्ययिता के कारण उसका वर्तमान राजस्व ही प्रशासनिक व्ययभार वहन करने के लिए काफी सिद्ध हो रहा है और वह प्रजा पर नया बोझ डाले बगैर ही नये-नये उद्योग और अभियान चला सकता है, तो वे स्वयं ही उसकी मौलिक उदारता की दाद देने लगेंगे। इस प्रकार से वह उन लोगों के समक्ष अपनी उदारता का सिक्का जमा लेगा, जिनसे वह कुछ लेता नहीं है और ऐसे लोग असंख्य होंगे और उन लोगों की नजरों में कृपण सिद्ध होगा, जिनको वह कुछ देता नहीं है और ऐसे लोग कुछेक ही होते हैं।

हमारे अपने युग में ऐसे शासकों ने अनेक महान कार्य कर दिखाये हैं, जो अपनी कृपणता के लिए विख्यात रहे हैं और दूसरे शासक बरबाद हो गये हैं। पोप जूलियस द्वितीय ने पोप-पद जीतने के लिए अपनी उदारता का सिक्का जमाया, लेकिन बाद में अपने युद्धों का व्ययभार वहन करने के लिए उसने इस सिक्के को जमाये रखने की कोई कोशिश नहीं की। फ्रांस के वर्तमान शासक ने प्रजा पर किसी प्रकार का अतिरिक्त करभार डाले बगैर कई एक लड़ाइयां लड़ीं, क्योंकि उसकी दीर्घकालिक मितव्ययिता इन युद्धों का व्ययभार वहन करने में उसके काम आयी। यदि स्पेन के वर्तमान शाह अपनी उदारता के लिए विख्यात होते तो वह इतनी सफलता से इतने सारे नये उद्योगों-अभियानों को शुरू और पूरा न कर पाते।

इसलिए यदि कोई शासक अपने शासितों को लूटने के लिए बाध्य नहीं होता, यदि वह अपनी और अपने राज्य की रक्षा करने में समर्थ है, यदि वह दरिद्रता एवं शर्मिन्दगी के गर्त में नहीं गिर जाता, यदि वह लोलुपता की नीति अपनाने के लिए विवश नहीं हो जाता, तो उसे कृपण कहलाये जाने की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। उसकी कृपणता एक ऐसा अवगुण है, जिसके बल पर उसका शासन बना हुआ है।

किसी किसी व्यक्ति को आपत्ति हो सकती है। सीजर अपनी उदारता के बल पर ही सत्तारूढ़ हुआ था और अन्य भी कई लोग अपने उदार व्यवहार एवं तदर्थ ख्याति ही के कारण उच्चतम पदों तक पहुंच सके। इस

आपत्ति के प्रति मेरा जवाब यह है कि या तो आप शासक हैं अथवा शासक बनने वाले हैं। अगर आप शासक हैं, तो अपनी उदारता की कीमत आप ही को चुकानी पड़ेगी। अगर आप शासक बनने वाले हैं, तो आपको अपनी उदारता के लिए विख्यात होना ही चाहिए।

सीज़र उन लोगों में से एक था, जो रोम पर अपना शासन स्थापित करना चाहते थे, लेकिन शासन की स्थापना के बाद यदि वह जीवित रहता और अपने व्ययभार को कम नहीं करता, तो सत्ता से उसका पतन निश्चित था।

फिर भी कोई व्यक्ति उलटकर कह सकता है कि दुनिया में ऐसे भी शासक हुए हैं जो अपने सैनिक अभियानों में भी असाधारण रूप से सफल रहे हैं और जो अपनी परम उदारता के लिए भी विख्यात रहे हैं। इसके लिए मेरा उत्तर है कि शासक वही कुछ दूसरों को देता है जो उसका अपना होता है अथवा उसके शासितों का होता है अथवा वह दूसरों की ही सम्पत्ति दान करता रह सकता है। अपनी अथवा प्रजाजनों की धन सम्पत्ति का दान करते समय उसे मितव्ययी होना चाहिए। दूसरों की सम्पत्ति दान देते समय उसे अपनी उदारता पूरे पैमाने पर दिखानी चाहिए। अपनी सेनाओं को लेकर विजयाभियान पर निकला हुआ शासक, जो लूट मार पर जीवन-यापन करता है जो बलपूर्वक धन-सम्पत्ति ऐंठता है, वह शत्रु की सम्पत्ति का वितरण कर रहा होता है और उसे खुले हाथों दान देना ही चाहिए अन्यथा सैनिक उसके पीछे-पीछे नहीं चलेंगे। आप सीज़र, साइरस और सिकन्दर की तरह उस धन-सम्पत्ति का वितरण उदारतापूर्वक कर सकते हैं जो आपके प्रजाजनों की नहीं है। अजनबियों के स्वामित्व के पदार्थ दे देने से राजा की ख्याति पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता, बल्कि इससे यह मान बढ़ता ही है। आपको आघात तभी पहुँचता है जब आप अपना माल लुटाते हैं।

उदारता से बढ़कर आत्म पराजयी चीज कोई नहीं। इसे व्यवहार में लाते-लाते आप इसे बरतने के साधन ही गंवा बैठते हैं और या तो दरिद्रता और तिरस्कार के शिकार हो जाते हैं अथवा दरिद्रता से बचने की चेष्टा में घृणा एवं लोलुपता के शिकंजे में आ जाते हैं। एक शासक को

जिस चीज से बचने की जरूरत है वह है तिरस्कार एव घृणा और आपकी उदारता इन्ही दोनो के जबडा मे आपको धकेलती है। इसलिए कृपण होने की कुप्रसिद्धि सह लेना बेहतर है क्योकि इससे आप कलकित भले ही हो, घृणा के पात्र नही बनते। लोलुपता और उसके परिणामस्वरूप मिलने वाली घृणा एव तिरस्कार के लिए पायी गयी बदनामी के बल पर उदारता का ढिंढोरा पीटते रहना ठीक नही।

आवश्यकता से प्रेरित कटु यथार्थ और मेरे राज्य का नयापन,
मुझे यह सब करने
और सर्वत्र अपनी सीमाओं की रक्षा करने
के लिए बाध्य करता है।

[ऐनीड १,५६३]

फिर भी शासक को हर कार्यवाही धैर्यपूर्वक करनी चाहिए और ध्यान रखना चाहिए कि वह अपने साये से ही न डरने लगे। उसके व्यवहार का नियमन मानवीय करुणा तथा विवेक के बल पर होना चाहिए, जिससे बहुत अधिक आत्मविश्वास उसे जल्दबाज न बना दे और बहुत अधिक अविश्वास उसके अस्तित्व को ही असह्य न बना सके।

इससे यह सवाल उठता है कि प्रजा का प्यार पाना बेहतर है या उसके भय का विषय बनना? अथवा इसकी उल्टी बात ठीक है? उत्तर में कहा जा सकता है कि शासक तो दोनों ही बातें चाहता है, लेकिन दोनों बातों को एक साथ मिलाना कठिन होता है। इसलिए यदि आप जनता की प्रीति और भय दोनों नहीं पा सकते, तो प्रजा के भय का ही विषय होना बेहतर है। लोगों के विषय में एक बात सामान्य रूप से कही जा सकती है—वे कृतघ्न, अस्थिर चित्त, झूठे और मक्कार होते हैं। वे खतरों से बचना चाहते हैं और धन के लोभी होते हैं। जब आप उनका भला करेंगे, तो वे आपके होंगे, उस स्थिति में वे लोग आपके लिए अपना खून बहा देंगे, अपनी जमीन जायदाद का, जान तक का खतरा उठाने को तैयार हो जायेंगे। अपने बच्चों को कुर्बान कर देंगे, लेकिन तभी तक, जब तक कि खतरा दूर है, लेकिन जब खतरा सामने आयेगा तो वे आपके विरोधी बन जायेंगे।

जो भी शासक वायदों पर पूर्णतया निर्भर करने लगता है और अन्य कोई सजगतामूलक कार्यवाही नहीं करता, वह अपनी बरबादी को अवश्यम्भावी बना रहा है। जो मैत्री महानता और उदार चेतना के बजाय धन की थैलियों से खरीदी जाती है, वह बहुत दिनों तक नहीं चलती और उसका लाभ कुछ नहीं होता। लोग जिसे प्यार करते हैं, उसे आघात पहुंचाते हुए चिन्तित नहीं होते। जिससे डरते हैं, उसे चोट पहुंचाते हुए घबराते हैं। प्यार का बन्धन ही ऐसा होता है कि लोग जब अपना लाभ देखते

हैं, तभी उसे भग कर देते हैं, लेकिन भय का बन्धन दण्ड के भय से मज बूत होता रहता है और यह दण्ड सदैव प्रभावकारी होता है।

लेकिन शासक को, यदि वह प्रजा का प्यार नही पा सकता तो, अपना आतक उसी सीमा तक फैलाना चाहिए, जिस सीमा तक पहुचकर वह घृणा का पात्र न बन जाये। घृणा के अभाव मे भी भय की स्थापना हो सकती है और यदि शासक अपने शासितो तथा नागरिको की धन-सम्पत्ति एव उनकी स्त्रियो को अपने स्वामित्व अथवा भोग का विषय नही बनाता तो वह घणा से सदव बचा रह सकता है। इसके बावजूद, यदि कभी किसी का प्राणहरण आवश्यक हो जाता है, तो वह तभी करना चाहिए, जबकि उसका कुछ स्पष्ट कारण हो, औचित्य हो, लेकिन सबसे बढकर शासक को अन्य लोगो की सम्पत्ति के लोभ से बचना चाहिए, क्योकि लोग अपने पिता की मृत्यु की बात अपनी पैतृक सम्पत्ति के छिन जाने की बात की तुलना मे जल्दी भूल जाते हैं। किसी की सम्पत्ति छीन लेने का बहाना कभी भी खोजा जा सकता है और लूट खसोट के बल पर जीने वाले शासक के लिए अन्यों की सम्पत्ति को हडपने के बहाने ढूढना सदा सम्भव रहता है। इसके विपरीत किसी के प्राणहरण का बहाना खोजना अपेक्षाकृत कठिन काम है और उन बहानो का निर्वाह और भी कठिन।

लेकिन जब शासक किसी विशाल सैन्य का नेतृत्व कर रहा हो और सनिक अभियान पर हो तो उसे क्रूरता-सम्बन्धी अपनी ख्याति की चिन्ता नही करनी चाहिए, क्योकि इस प्रकार की धाक जमाये बगैर वह अपनी सेना को एकता के सूत्र मे बाधकर और अनुशासित नहा रख सकेगा।

हनीबल की प्रशसनीय उपलब्धिया मे से एक यह भी है यद्यपि उसन एव विशाल सेना की कमान सम्भाल रखी थी, जिसम अगणित जातियो और धर्मों के लोग थे और यह सना विदेशो मे अभियान भी करती रही तब भी उस सेना म कभी कोई मतभेद नही हुआ। चाह व्यवस्था ठीक रही हो या गलत। न तो सेनाओ मे आपस मे कभी झगडा झझट हुआ और न ही सेनापतियो के विरुद्ध विद्रोह। इस सारे ऐक्य, अनुशासन और सगठन का सारा श्रेय उसकी अमानवीय क्रूरता को है। उसके अन्य अगणित गुणों के साथ मिलकर इसी विशेषता ने उसे अपने सभी सैनिको के भय का

विषय एवं सम्मान का पात्र बनाया। यदि वह क्रूर न होता, तो उसके अन्य गुण व्यर्थ हो गए होते। इतिहासज्ञों ने, इस बात की ओर कोई ध्यान न देकर, एक ओर उसकी उपलब्धियों की प्रशंसा की है और उन उपलब्धियों की कारणरूपी इस विशेषता की निन्दा।

स्किपियो अपने युग का तथा तमाम ज्ञातव्य इतिहास का भी अद्वितीय व्यक्तित्व था। उसे देखकर यह सिद्ध किया जा सकता है कि (क्रूरता के बगैर) उसके अन्य गुण व्यर्थ हो गए होते। उसकी सेना ने स्पेन में उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया था और इसका एकमात्र कारण उसकी अतिरिक्त उदारता थी, जिससे उसके सैनिक आवश्यकता से अधिक आजाद होते चले गए। फेबियस मक्सिमस ने सीनेट में उसकी इस उदारता के लिए निन्दा की और उसे रोमन सेनाओं को भ्रष्ट करने के लिए उत्तरदायी ठहराया, फिर जब स्किपियो के एक अफसर ने लोक्री को लूटा तो स्किपियो ने न तो अपने अफसरों को सन्तुष्ट किया और न ही इस अफसर को आज्ञा के उल्लंघन के लिए दण्डित किया और यह सब सिर्फ इसीलिए हुआ कि वह स्वभाव से अत्यन्त उदार था।

कुछ सीनेटरों ने स्किपियो के व्यवहार का औचित्य सिद्ध करने के लिए बहस की और यह तक पेश किया कि कुछ लोग होते ही ऐसे हैं, जो स्वयं तो गलतियां करने से बचे रह सकते हैं मगर दूसरों की गलतियों को सुधार नहीं सकते, लेकिन यदि स्किपियो अपने सेनापतित्व काल में अपने इस उदार स्वभाव के अनुसार ही चलता रहता, तो उसकी कीर्ति और ख्याति समाप्त हो गई होती। जब वह सीनेट के आदेशानुसार कार्य करता रहा, तो उसका यह घातक गुण न केवल छिपा रहा, बल्कि उसके यश का भी कारण बना।

अतएव प्रजा के स्नेह का पात्र अथवा भय का विषय होने के इस सवाल को लेकर मैं इसी निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि बुद्धिमान शासक को उसी का भरोसा रखना चाहिए जो उसके बस में हो, जो उसके बस में नहीं, उसका भरोसा नहीं करना चाहिए क्योंकि लोग प्यार तभी करते हैं, जब वे प्यार करना चाहते हैं लेकिन डरते तब हैं, जबकि शासक उन्हें डराना चाहता है। जैसा कि मैंने पहले कहा था, उसे केवल घृणा का पात्र होने से बचना चाहिए।

१८

शासक अपने वचन का पालन कैसे करे ?

इस बात को सभी महसूस करते हैं कि शासक के लिए अपने वचन का पालन करना और अपने व्यवहार में कपटी होने की अपेक्षा स्पष्टवादी होना एक प्रशंसनीय गुण है, फिर भी समकालीन इतिहास इस बात का गवाह है कि उन्हीं शासकों की उपलब्धियां महान् रही हैं जिन्होंने बड़े ऊपरी मन से वचन दिए, जिन्हें प्रजाजनों को भुलावे में डाले रखने की कला ज्ञात थी और जो अन्तत: ईमानदारी से अपने सिद्धान्तों का पालन करने वाले लोगों पर विजयी हुए हैं।

इसलिए आपको यह बात भली-भांति समझ लेनी चाहिए कि संघर्ष के दो ही तरीके हैं: एक विधि-विहित और दूसरा बल प्रयोग का। पहला तरीका मानव स्वभाव के अनुकूल है और दूसरा पशुओं के लिए उचित, लेकिन क्योंकि पहला तरीका अक्सर अपर्याप्त सिद्ध होता है, इसलिए व्यक्ति को दूसरे तरीके का भी प्रयोग करने के लिए प्रस्तुत होना ही चाहिए। इस प्रकार शासक में पशु और मानव, दोनों की प्रकृति के समुचित प्रयोग का विवेक होना चाहिए।

पुरातन लेखक शासकों को यह बात एक रूपक के माध्यम से समझाया करते थे। एकिलीज तथा अन्य अनेक पुरातन युगीन शासकों को अश्व प्राण (Centaur) चिरॉन के पास लालन पालन के लिए भेज दिया गया, जिससे कि वह उन्हें अपने ढंग से प्रशिक्षण दे सके। इन महान् शासकों के आदिगुरु का आधा शरीर मानव का और आधा पशु का दर्शाने से यही है कि शासक को दोनों के स्वभाव के अनुसार व्यवहार

पारगत होना चाहिए, वरना उसका अस्तित्व भी खतरे मे पड जाएगा।

अब जब कि शासक को पाशविक व्यवहार भी सीखना ही पडता है, उसे इसका प्रशिक्षण लोमडी और शेर से लेना चाहिए, क्योकि शेर बिछाए गए जाल के मुकाबले मे असहाय होता है एव लोमडी भेडियो के मुकाबले मे असहाय होती है। इसलिए फन्दो को पहचानने के लिए व्यक्ति को लोमडी होना चाहिए और भेडियो को डराकर भगाने के लिए सिंह। जो लोग केवल सिंहो की तरह व्यवहार करते हैं, वच मूख होते हैं।

इसलिए निष्कष यही निकलता है कि कोई भी बुद्धिमान शासक किसी ऐसे वचन का निर्वाह नही कर सकता और न ही उसे करना चाहिए, जिससे उसे नुकसान होता हो और जब उस वचन को पूरा करने के बाध्यकारी कारण समाप्त हो चुके हो। यदि सभी लोग भले होते तो यह उपदेश ठीक नही होता, लेकिन सामान्यत मनुष्य इतने नीच स्वभाव का प्राणी है कि वह आपके प्रति अपने वचन का निर्वाह नही करता। अतएव आपको भी उसके प्रति अपने वचन का पालन नही करना चाहिए और अपनी बदनीयती को मनभावन रगो मे रगने के लिए आवश्यक बहानो की कोई कमी कभी भी किसी शासक के पास नही हो सकती।

शासको द्वारा सन्धियो और समझौतो को अपनी बदनीयती द्वारा अवध और अथहीन बनाए जाने के असख्य उदाहरण दिए जा सकते हैं। जो शासक लोमडी के स्वभाव को सफलतापूवक अपना लेते हैं वे ही सबसे अच्छे रहते हैं, लेकिन फिर भी व्यक्ति को अपनी कायवाहियो को उपयुक्त रग मे प्रस्तुत करने की और झूठे एव मक्कार होने की कला का ज्ञाता होना चाहिए। मनुष्य मात्र इतना भोला, परिस्थितियो का ऐसा शिकार, होता है कि ठग को हमेशा कोई-न कोई ऐसा प्राणी मिल जाएगा, जो ठगे जाने के लिए तैयार होगा।

एक ऐसा ताज़ा उदाहरण है जिसे मैं छोडना नही चाहता। अलेग्जान्दर षष्ठ सदव लोगो को ठगता रहता था और ठगने की ही बात सोचता रहता था। उसे अपनी ठगी के जाल मे फसने वाले लोग हमेशा मिल जाते थे। उससे अधिक प्रभावपूण ढग से शपथ खाने वाला, और किसी बात की सच्चाई की कसम खाकर अड जाने वाला दूसरा कोई

आदमी नही था, फिर भी उसकी धोखाधडी सदैव वाछित फल ही देती थी, क्योकि वह इस कला मे पारगत था ।

इसलिए मैंने ऊपर जिन गुणो की परिगणना की है, किसी शासक मे उन सब गुणा का होना जरूरी नही है, लेकिन शासक मे उन गुणो के होने का आभास जरूर होना चाहिए। मैं तो यहा तक कहना चाहता हू कि यदि उसम ये गुण हों और वह उनके अनुसार व्यवहार करता हो, तो वह उन्हें विनाशकारी पाएगा। हा, वह इन गुणो का मुखौटा ही पहन हुए है, तो ये गुण उसके काम आएगे। उसे करुणहृदय, प्रतिज्ञा का पालन करने वाला, छल छद्म मे पर और समर्पित व्यक्तित्व का स्वामी नजर आना चाहिए और वस्तुत उस ऐसा होना भी चाहिए, लेकिन उसके इस गुणाधार स्वभाव का सयोजन ऐसा होना चाहिए कि आवश्यकता पडने पर वह इन गुणो के विपरीत भी व्यवहार कर सके।

आपको यह बात जरूर समझ लेनी चाहिए कि कोई भी शासक, विशेषकर नया शासक उन तमाम गुणो को अपना नही सकता, जिनके कारण उसके गुणवान होने की प्रसिद्धि होती है, क्योकि अपने राज्यशासन को बनाए रखने के लिए उसे प्राय विश्वासघात करना पडता है। करुणा एव दयालुता का परित्याग करना पडता है, धम के विरुद्ध काम करना पडता है। इसलिए उसका स्वभाव लचीला होना चाहिए, जो परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार ढाला जा सके। जैसा कि मैं पहले कह चुका हू, यदि हा सके तो उसे सत्यपथ से मुह नही मोडना चाहिए लेकिन आवश्यकता पडने पर उसे कुपथ पर चलने मे भी सक्षम होना चाहिए।

तो एक शासक को इतना सजग होना चाहिए कि वह एक शब्द भी ऐसा न कहे जो मर द्वारा परिगणित पाचा गुणो से प्रेरित मालूम न हो। उस देखने और सुनने वाले लोगो को यही लगना चाहिए कि वह करुण-हृदय, सज्जन, दृढ प्रतिज्ञ, ईमानदार दयालु एव धमप्राण व्यक्ति है और इस अतिम गुण का मुखौटा पहनना सबसे ज्यादा जरूरी है। लोग प्राय हाथा से नही, आखो से चीजो की परख करते हैं। सभी लोग आपको देख तो सकते है, मगर आपके निकट सम्पक मे आने की सुविधा कुछेक लोगों को ही प्राप्त होती है। इसलिए हर व्यक्ति आपके मुखौटो को दे

सकता है, आपके यथार्थ स्वरूप को अनुभव करने वाले कुछेक ही लोग होते हैं और ये कुछेक लोग उन तमाम लोगों का निषेध या खण्डन करने का साहस नहीं कर सकते, जिन्हें सत्ता की सारी महत्ता का समर्थन प्राप्त है। जब किसी की शिकायत सुनने वाला कोई न्यायालय नहीं होता, तो लोगों की, विशेषकर शासकों की कार्यवाहियों की सार्थकता उनके परिणामों के ही आधार पर जांची जाती है। इसलिए शासक को अपना राज्य जीतने तथा अपना शासन बनाए रखने की दिशा में सक्रिय होना चाहिए तभी उसके तौर-तरीकों को सदैव सम्मानजनक समझा जाएगा और सर्वत्र उनकी प्रशंसा की जाएगी। जनसामान्य सदैव मुखौटा तथा परिणामों से प्रभावित होता है। इस सन्दर्भ में केवल जनसामान्य की ही चिन्ता की जा सकती है। राज्य द्वारा समर्थित इन बहुसंख्यकों के मुकाबले में अल्पसंख्यकों के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता।

एक समकालीन शासक, जिसका नाम न लेना ही बेहतर होगा, शान्ति और सत्य के सिवाय और किसी बात का उपदेश नहीं देता।* और वह इन दोनों का कट्टर दुश्मन है। यदि वह इन दोनों गुणों में से किसी एक का भी आदर या व्यवहार करता तो अब तक कई बार अपनी साख और अपना राज्य खो चुका होता।

---

* एरागन के फर्डिनेण्ड से तात्पर्य है।

१६

अवहेलना और घृणा से बचने की आवश्यकता

परिगणित गुणो मे से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण गुण की चर्चा करने के बाद, अब मैं अन्य गुणो की चर्चा सक्षेप मे करना चाहता हू। जैसा कि मैं पहले ही समझा चुका हू कि शासक को हर उस चीज़ से बचने के लिए कटिबद्ध रहना चाहिए, जो उसे (प्रजाजनो की) अवहेलना और घृणा का पात्र बना सकती है। जब तक वह ऐसा करता रहेगा, तब तक वह अपना कर्त्तव्य पूरा करता रहेगा और मेरे द्वारा परिगणित अन्य अवगुणो के लिए निन्दा का भागी होते हुए भी किसी प्रकार का खतरा नही उठाएगा। जैसा कि मैं कह चुका हू, वह यदि अन्यो की सम्पत्ति के प्रति लोलुपता और आक्रमण का रुख अपनाएगा और अपने प्रजाजनो की स्त्रियो के प्रति लालची निगाह उठाएगा तो सबसे ज्यादा घृणा का पात्र बनेगा। उसे इन अवगुणो से बचना चाहिए। जब तक वह अपने प्रजाजनो के अधिकाश की सम्पत्ति और सम्मान को नही लूटता तब तक वे सन्तुष्ट रहते हैं। उस हालत मे उसे कुछेक लोगो की हलचलो से ही निपटना होता है और उनसे कई प्रकार से और बडी आसानी से निपटा जा सकता है।

यदि वह अस्थिर चित्त, ओछे स्वभाव का स्त्रैण, कायर और सकल्प हीन होने के नाते विख्यात है तो लोग उसकी अवहेलना करेंगे। शासक को इस प्रकार की ख्याति से ऐसे ही बचना चाहिए जैसे प्लेग की महामारी से बचा जाता है और उसे अपने व्यवहार मे गरिमा, साहस, सयम और सबलता का प्रदर्शन करना चाहिए। अपने शासितो के आपसी निपटारा करते समय उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि ~ अपरिवर्तनीय हो और उसके प्रति जनसामान्य की धारणा ~

वता है, आपके यथार्थ स्वरूप को अनुभव करने वाले कुछेक ही लोग होते हैं और ये कुछेक लोग उन तमाम लोगों का निषेध या खण्डन करने का साहस नहीं कर सकते, जिन्हें सत्ता की सारी महत्ता का समर्थन प्राप्त है। जब किसी की शिकायत सुनने वाला कोई न्यायालय नहीं होता, तो लोगों की, विशेषकर शासकों की कार्यवाहियों की सार्थकता उनके परिणामों के ही आधार पर जाँची जाती है। इसलिए शासक को अपना राज्य जीतने तथा अपना शासन बनाए रखने की दिशा में सक्रिय होना चाहिए तभी उसके तौर-तरीकों को सदैव सम्मानजनक समझा जाएगा और सर्वत्र उनकी प्रशंसा की जाएगी। जनसामान्य सदैव मुखौटों तथा परिणामों से प्रभावित होता है। इस सन्दर्भ में केवल जनसामान्य की ही चिन्ता की जा सकती है। राज्य द्वारा समर्थित इन बहुसंख्यकों के मुकाबले में अल्पसंख्यकों के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता।

एक समकालीन शासक, जिसका नाम न लेना ही बेहतर होगा, शान्ति और सत्य के सिवाय और किसी बात का उपदेश नहीं देता।* और वह इन दोनों का कट्टर दुश्मन है। यदि वह इन दोनों गुणों में से किसी एक का भी आदर या व्यवहार करता तो अब तक कई बार अपनी साख और अपना राज्य खो चुका होता।

---

* एरागन के फर्डिनण्ड से तात्पर्य है।

१६

अवहेलना और घृणा से बचने की आवश्यकता

परिगणित गुणो म से सर्वाधिक महत्त्वपूण गुण की चर्चा करने के बाद, अब मैं अन्य गुणा की चर्चा सक्षेप मे करना चाहता हू। जैसा कि मैं पहले ही समझा चुका हू कि शासक को हर उस चीज़ से बचने के लिए कटिबद्ध रहना चाहिए, जो उसे (प्रजाजनो की) अवहेलना और घृणा का पात्र बना सकती है। जब तक वह ऐसा करता रहेगा, तब तक वह अपना कत्तव्य पूरा करता रहगा और मेरे द्वारा परिगणित अन्य अवगुणा के लिए निन्दा का भागी होते हुए भी किसी प्रकार का खतरा नही उठाएगा। जैसा कि मैं कह चुका हूं, वह यदि अन्यो की सम्पत्ति के प्रति लोलुपता और आक्रमण का रुख अपनाएगा और अपने प्रजाजना की स्त्रियो के प्रति लालची निगाहें उठाएगा तो सबसे ज्यादा घृणा का पात्र बनगा। उसे इन अवगुणो से बचना चाहिए। जब तक वह अपने प्रजाजनो के अधिकारा की सम्पत्ति और सम्मान को नही लूटता, तब तक वे सन्तुष्ट रहते हैं। उस हालत मे उसे कुछेक लोगो की हलचला से ही निपटना होता है और उनसे कई प्रकार से और बडी आसानी से निपटा जा सकता है।

यदि वह अस्थिर चित्त, ओछे स्वभाव का, स्त्रण, कायर और सकल्प हीन होने के नाते विख्यात है तो लोग उसकी अवहेलना करेंगे। शासक को इस प्रकार की ख्याति से ऐसे ही बचना चाहिए जसे प्लेग की महामारी से बचा जाता है और उसे अपने व्यवहार मे गरिमा, साहस, सयम और सबलता का प्रदशन करना चाहिए। अपने शासितो के आपसी झगडा का निपटारा करते समय उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि उसका निणय अपरिवतनीय हो और उसके प्रति जनसामान्य की धारणा ऐसी होनी

चाहिए कि कोई व्यक्ति कभी उसको धोखा देने या छलने की कल्पना भी न कर सके।

जो शासक इस प्रकार की धारणा अपने विषय में (जनसामान्य के मन मे) बठा देता है वह बहुत अधिक सम्मान का पात्र बन जाता है। अत्यधिक सम्मानित व्यक्ति के विरुद्ध षड्यन्त्र रचना अथवा खुला आक्रमण करना कठिन होता है।

शासक को दो चीज़ो से डरना चाहिए। शासितो द्वारा राज्य के भीतर की जाने वाली ध्वसात्मक कार्यवाही से और विदेशी शक्तियो द्वारा किए जाने वाले आक्रमण से। आक्रमण से बचने के लिए उसके पास अच्छी और समर्थ सेना का होना और अच्छे मित्रो का होना आवश्यक है और अगर उसके पास प्रबल सेना है तो उसके मित्र सदैव अच्छे होगे। यदि विदेशी शक्तियो के साथ सम्बन्ध अच्छे होगे तो राज्य के घरेलू मामले भी सुचारु रूप से चलते रहेगे यदि वे पहले ही षडयन्त्र द्वारा खराब न कर दिए गए हो।

यदि किसी शासक ने मेरी राय के अनुसार जीवन-यापन किया है और उसी के अनुकूल अपने प्रशासन की व्यवस्था की है और अगर वह स्वय ही घुटने नही टेक देता है तो विदेश मे अराजकता फैलने पर भी वह अपने राज्य के विरुद्ध किए गए हर हमले का मुकाबला कर सकेगा। ठीक वसे ही, जैसे स्पार्टा के नेबिस ने किया था। अब जहा तक उसके प्रजाजनो का सवाल है, विदेशो मे किसी प्रकार की गडबडी न होने पर शासक को सबसे अधिक चिन्ता अपने विरुद्ध किए जाने वाले गुप्त षड्यन्त्रो की होनी चाहिए। यदि वह घृणा का पात्र बनने से बचा रहता है और जनता को सन्तुष्ट रखता है तो वह षडयन्त्रो से भी अपने आप को बचा सकता है। जैसा कि मैं पहले कह चुका हू, यह नितान्त आवश्यक है।

आन्तरिक षडयन्त्रो के विरुद्ध शासक द्वारा की जाने वाला विरोधियो मे सबसे सशक्त व्यवस्था यही हो सकती है कि शासक जनता की घृणा से बचे। ऐसा इसलिए कि षडयन्त्रकारी सदैव यही समझता है कि वह शासक की हत्या करके प्रजा को सन्तुष्ट कर रहा है, लेकिन यदि उसे यह ध्यान हो कि इससे प्रजा का रोष उमड पडेगा, तो वह कभी भी अपनी

योजना को कार्यान्वित नही कर सकेगा, क्योकि षड्यन्त्रकारी के मार्ग मे असख्य बाधाए हुआ करती हैं। अनुभव से यह सिद्ध होता है कि षड्यन्त्र तो कई रच जाते हैं, मगर उनमे लक्ष्य प्राप्ति मे सफल कुछेक ही होते हैं। इसका कारण यह है कि षड्यन्त्रकारी को अन्य कई लोगो की भी सहायता अपेक्षित होती है और सहायक वही लोग हो सकते है, जो उसकी धारणा के अनुसार, असन्तुष्ट होते है, लेकिन जसे ही वह (षड्यन्त्रकारी) किसी असन्तुष्ट व्यक्ति के सामने अपने मन की बात कहता है उसे (असन्तुष्ट व्यक्ति को) तुष्टि का साधन मिल जाता है क्योकि असन्तुष्ट व्यक्ति को यह विश्वास हो जाता है कि अब वह अपनी सारी जानकारी के बल पर अपने मन की मुरादें पूरी कर सकता है।

यह देखते हुए कि सूचना मात्र शासक को देकर काफी लाभ उठाया जा सकता है, जबकि दूसरा (षड्यन्त्रकारी के द्वारा प्रस्तावित) विकल्प अत्यन्त खतरनाक एव सफलता की दृष्टि से सदिग्ध है कोई असाधारण मित्र अथवा शासक का नितान्त निर्मम एव कट्टर शत्रु ही आपका साथ (षड्यन्त्र के कार्यान्वयन मे) देगा।

सक्षेप मे कहू तो यह कि षड्यन्त्रकारी के पक्ष मे भय ईर्ष्या और दण्डित होने की विकराल सम्भावना होती है। शासक के पक्ष मे प्रशासन की गरिमा, कानून के बन्धन उसके मित्रो के साधन और शासन के सभी स्रोत उसकी रक्षा के लिए तनात होते हैं। इस सबमे प्रजा की सदभावना भी मिला दीजिए तो शासक के विरुद्ध षड्यन्त्र करने की बात ही अचिन्तनीय हो उठती है क्योकि जहा सामान्य स्थिति म षड्यन्त्रकारी को षड्यन्त्र की सफलता से पहले ही दण्ड का भय होता है वहा इस स्थिति मे उसे सफलता के बाद भी दण्ड का भय होता है क्योकि प्रजा भी उसी की विरोधी होती है। वह अपना अपराध कर बैठेगा और प्रजा के आक्रोश के कारण कही शरण नही पा सकेगा।

मैं इसके असख्य उदाहरण प्रस्तुत कर सकता हू, लेकिन केवल एक ही दृष्टान्त देकर मैं सन्तुष्ट हो जाऊगा। घटना हमसे एकाध ही पीढी पहले की है। कैन्नेस्ची ने बोलोना के शासक वर्तमान एनीबल के पितामह एनीबल बेन्तिवोग्ली के विरुद्ध षड्यन्त्र किया और उनकी हत्या कर दी।

उनका उत्तराधिकारी केवल गियोवानी बच रहा जो अभी नवजात शिशु ही था। इस हत्याकाण्ड के तुरंत बाद प्रजा ने जोश खाया और कैनेदची वंश का सफाया कर दिया। जनता के इस आक्रोश के पीछे उस समय बेंतिवोग्ली घराने के लिए व्याप्त सम्भावना का ही बल था, यह सदभावना इतनी अधिक थी कि एन्नीबेल के देहावसान के बाद बोलोना म उस परिवार का एक भी सदस्य ऐसा नही बचा जो गद्दी सभाल सके। बोलोना के नागरिक एक ऐसे व्यक्ति की खोज म फ्लारेंस गय जिसके बारे म सुना गया था कि वह अभी तक एक लोहार का पुत्र समझा जाता है लेकिन वास्तव मे बेंतिवोग्ली है। उन्होने नगर का शासन उसे सौंप दिया और वह व्यक्ति उस दिन तक शासन करता रहा जिस दिन तक गियोवानी स्वय गद्दी सम्हालने लायक नही हो गया।

इसलिए मैं तो इसी निष्कर्ष पर पहुचता हू कि यदि शासक को प्रजा की सदभावना प्राप्त हो तो उसे षड्यन्त्रो की चिन्ता नही करनी चाहिए, लेकिन अगर प्रजा उसके विरुद्ध हो और उससे घृणा करती हो तो उसे हर व्यक्ति से, हर चीज से डरना चाहिए। सुसगठित राज्य एव बुद्धिमान शासक हमेशा यही कोशिश करते हैं कि उनके सामन्त उनसे भडकें नही और प्रजा उनसे सन्तुष्ट एव प्रसन्न रहे। किसी भी शासक के समक्ष यह सर्वोपरि कर्त्तव्य होना चाहिए।

हमारे अपने युग के सुसगठित एव सुशासित राज्यो मे से एक फ्रास है। उसमे अगणित अमूल्य परपराए हैं जिनपर शासन की स्वायत्तता और सुरक्षा निर्भर करती है। इनमे से सर्व प्रथम है—ससद और उसकी सत्ता। फ्रासीसी साम्राज्य के सस्थापक ने शक्तिसम्पन्नो की महत्त्वाकाक्षा और अविनय को ध्यान मे रखते हुए उनके मुह मे हड्डी देकर उन्हे नियन्त्रण मे रखना जरूरी समझा। दूसरी ओर वह प्रजाजनो को भी आश्वस्त रखना चाहता था जो सामन्तो से डरते एव उनसे घृणा करते थे। वह शासक की हैसियत से इस सारी कटुता का दायित्व अपने ऊपर नही लेना चाहता था, क्योंकि वह न तो सामन्तो के साथ पक्षपात के लिए प्रजा की नजरो मे खटकना चाहता था और न ही प्रजा के साथ दयालुता बरतने के लिए सामन्तो की धृष्टता का शिकार होना चाहता था।

इसलिए उसने सामन्तो के दमन एव दीनो के साथ पक्षपात करने के लिए एक स्वतन्त्र अभिकरण स्थापित कर दिया, जो दानो के बीच मे शासक को लाय ही नहीं। इससे अच्छी और इससे अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण कोई परम्परा हो ही नही सकती थी, जो राज्य को भी सुरक्षित रख सके और राजा को भी।

इसी से एक और महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाला जा सकता है। वह यह कि शासको को तमाम अप्रिय कानूनो तथा निर्णयो का क्रियान्वयन दूसरो के हाथो मे सौंप देना चाहिए और उपकार करने के साधन अपने हाथ मे रखने चाहिए। मैं फिर कहता हू कि शासक को सामन्तो का सम्मान करना चाहिए। लेकिन प्रजाजनो की घृणा भी नही अर्जित करनी चाहिए।

रोमन सम्राटो के जीवन-मरण की परिस्थितियो के कई एक अध्येता शायद यह सोच लें कि इन सम्राटो के कृतित्व से ही मेरे कथन का खण्डन हो जाता है। कुछेक शासक जो निरन्तर शुद्धतावादी जीवन बिताते रहे हैं और जिनमें चरित्रबल भी बहुत था, इन गुणो के बावजूद, अपदस्थ कर दिए गए अथवा इनमे से कई एक को ता उन्ही के अपने अनुचरो ने षड्यन्त्र करके मार डाला।

मैं इन आपत्तियो का उत्तर देने के लिए, इनमे से कुछेक सम्राटो के चरित्रों को चर्चा का विषय बनाऊगा और यह सिद्ध करूगा कि उनके पतन के भी कारण वही थे जो मैंने गिनाए हैं। मैं उदाहरण भी ऐसे ही प्रस्तुत करूगा जो इस युग के अध्येताओं के सुपरिचित हैं। मैं अपनी परिगणना और विवेचन को उन्ही सम्राटो तक सीमित रखूगा जो दार्शनिक मार्कस से लेकर मक्सिमाइनस तक के दौर म गद्दी पर बैठे थे। ये शासक थे—मार्कस आरेलियस, उसका बेटा कॉमोडस, पर्टिनैक्स, जूलियन, सेवेरस, उसका बेटा कैराकाला, मक्रिनस, हेलियोगेबालस, अलेग्ज़ान्देर, और मक्सिमाइनस।*

---

* इन शासकों के मकियावेली द्वारा प्रस्तुत जीवन वृत्तान्त हेरोडियन लिखित मार्कस आरेलियस के देहान्त से गोर्डियन तृतीय के सत्तारूढ़ होने तक के रोमन साम्राज्य के इतिहास पर आधारित है। यहां वर्णित अनेक घटनाए हेरोडियन के जीवन काल में ही घटित हुई थीं। मकियावेली ने निश्चय ही हेरोडियन लिखित इतिहास के १४९३ ई० में कवि और मार्सिलो द मेडिची के मित्र पोलिज़ियानो द्वारा प्रकाशित लातीनी अनुवाद का प्रयोग किया होगा। मूल कृति यूनानी भाषा में लिखी गई थी।

यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि जहाँ अन्य शासकों को सामन्तो की महत्त्वाकांक्षा और प्रजाजनो की अविनय से निबटना पड़ता है, वहाँ रोमन सम्राटों को एक तीसरी कठिनाई का भी सामना करना पड़ा। उन्हें अपने सिपाहियों की क्रूरता और लोलुपता से भी निबटना होता था।

यह एक कठिन काम था और इसी के कारण कइयों का पतन भी हुआ क्योंकि प्रजाजनो और सिपाहियों को एक साथ सन्तुष्ट करना कठिन था। प्रजाजन शान्तिप्रिय होते थे, अतएव ऐसे ही शासक को पसन्द करते थे, जो नित्य नये बखेड़े खड़े न करता रहे। सिपाही युद्धप्रिय शासक को ही प्यार करते थे, क्योंकि वह दुस्साहसी, क्रूर और लूट-पाट का शौकीन होता था। सिपाही चाहते थे कि शासक प्रजाजनो पर इन अवगुणों से युक्त व्यवहार करे, जिससे उन्हें अधिक वेतन मिल सके और वे स्वयं अपनी लोलुपता और क्रूरता का खुलकर उपयोग कर सकें। परिणामतः वे सम्राट, जिनमें सिपाहियो एवं प्रजाजनो को एक साथ नियन्त्रण में रखने के लिए आवश्यक स्वाभाविक अधिकार और साख नहीं होती थी, मुसीबत में पड़ जाते थे। इनमें से अधिकांश, विशेषकर नये-नये सत्ताधारी, जब इन दोनो परस्पर विरोधी तत्त्वों को सन्तुष्ट करने की आवश्यकता महसूस करते थे, तो प्रायः सिपाहियों को रिझाते रहते थे और प्रजाजनों को आघात पहुचाने में नहीं झिझकते थे।

यह नीति उनके लिए आवश्यक थी। शासक किसी न किसी वर्ग की घृणा के पात्र बन ही जाते हैं इसलिए उनकी पहली चेष्टा यही होती है कि वे एक साथ सभी वर्गों के सभी लोगों की घृणा के पात्र न बन जाएं। जब सभी वर्गों की सामूहिक घृणा से बचना असम्भव नज़र आता है, तो वे सर्वाधिक शक्तिसम्पन्न वर्गों की घृणा से बचने की हर सम्भव चेष्टा करते हैं। इसलिए वे शासक, जो नये होने के कारण असाधारण सहायता-समर्थन के आकांक्षी होते थे प्रजाजनो की अपेक्षा अपने सिपाहियों का साथ देने के लिए आसानी से तैयार हो जाते थे। इसके बावजूद, चाहे वे सैनिकों की नज़र में अपनी साख जमाए रखने की कला नहीं जानते थे, उन्हें इस नीति से लाभ ही हुआ।

अतएव, उल्लिखित कारणों से हुआ यह कि मार्कस आरेलियस, पर्टिनेक्स और अलेग्ज़ान्देर जो सबके सब बिना झगड़े झंझट के जीवनयापन करते रहे, जो न्याय प्रिय थे, क्रूरता से घृणा करते थे करुणामय और शिष्ट स्वभाव वाले थे, सभी का अन्त दुखद ही हुआ। इनमें से एकमात्र अपवाद मार्कस था जो अपने जीवनकाल में और उसके बाद भी सम्मान का पात्र बना रहा, क्योंकि राज्य उसे उत्तराधिकार में मिला था। उसके लिए उसे न अपने सिपाहियों का आभार मानने की आवश्यकता थी और न ही प्रजाजनों के सामने झुकने की।

मार्कस एक व्यक्ति की हैसियत से कई गुणों का भण्डार था और इन गुणों के कारण वह सभी के सम्मान का पात्र बन गया था, इसलिए वह आजीवन सैनिकों तथा अपने प्रजाजनों को सफलतापूर्वक नियन्त्रण में रख सका। उसे कभी किसी की घृणा अथवा अवहेलना नहीं भोगनी पड़ी।

लेकिन पर्टिनेक्स अपने शासनकाल के प्रारम्भ में संकट में पड़ गया। उसे सिपाहियों की इच्छा के विपरीत सम्राट बनाया गया था। ये सिपाही कामोडस के नेतृत्व में स्वच्छन्द जीवन बिताने के आदी हो चुके थे इसलिए पर्टिनेक्स ने उनके ऊपर जो शिष्टता का बोझ डालना चाहा उसे वे बरदाश्त नहीं कर सके। इसलिए सम्राट स्वयं उनकी घृणा का पात्र बन गया और अपने बुढ़ापे के कारण उनकी अवहेलना का शिकार भी।

और यहां इस बात की ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि बुरे कामों से ही नहीं अच्छे कामों के कारण भी लोगों की घृणा का पात्र बन सकता था। इसलिए जैसा कि मैं कह चुका हूं अपना शासन बनाए रखने का इच्छुक शासक बुराई करने के लिए विवश हो जाता है क्योंकि जब शासन की निरन्तरता का आधार बनने वाले लोग भ्रष्ट होते हैं—चाहे वे प्रजाजनों हों, सिपाही हों अथवा सामन्त गण—तो शासक को भी भ्रष्टाचार के ही तरीकों में उन्हें सन्तुष्ट करना पड़ता है। और उस अवस्था में सत्कार्य आपके शत्रु होते हैं।

आइये, अलेग्ज़ान्देर को ले लें। उसे कई बातों का श्रेय है। कहा जाता है कि वह इतना अच्छा व्यक्ति था कि उसने

के शासनकाल म कभी भी किसी व्यक्ति को मुकदमा चलाये बगैर फांसी पर नही चढ़ाया। इसके बावजूद वह प्रजा की अवहेलना का शिकार हो गया। उसकी सेनाओ ने उसके विरुद्ध षडयन्त्र किया और उसे मार डाला क्योंकि उसे स्त्रैण समझा जाता था, क्योंकि वह अपनी मा की आज्ञानुसार शासनकाय करता था।

इसके विरोधाभास के रूप मे कामोडस, सेवेरस, एन्तोनिनस कैराकाला और मैक्सिमाइनस की चर्चा की जाये, तो आप पायेंगे कि वे लोग चरम कोटि के लालुप और क्रूर शासक थे। ऐसा कोई कुकर्म नही है जो उन्होंने अपने सैनिको को प्रसन्न करने के लिए अपनी प्रजा के विरुद्ध नही किया और सेवरस के अतिरिक्त इन सभी शासको का अन्त दुखद हुआ। सेवेरस इतना पराक्रमी शासक था कि सनिको की मैत्री बनाये रखकर भी, और जनता पर कठोर शासन करता हुआ भी वह अन्त तक सफलतापूवक सत्तारूढ रहा। ऐसा इसलिए हुआ कि उसके सैनिक उसके पराक्रम से इतने प्रभावित थे और प्रजा इतनी आतकित थी कि सैनिक उसके प्रति आदर से आपूरित और सन्तुष्ट रहते थे और प्रजाजन आश्चयचकित एव किकत्तव्यविमूढ होकर रह जाते थे।

इसका कारण यह था कि नये शासक की हैसियत से सेवेरस की उपलब्धिया सचमुच असाधारण एव चकाचौंध करने वाली थी। मैं यह दिखाना चाहता हू कि वह लोमडी तथा सिंह दोनो की भूमिकाए निभाने की कला म पारगत था और जैसा कि मैं कह चुका हू, नये शासक को इन दोनो के स्वभाव का अनुकरण करने योग्य होना चाहिए।

सेवेरस सम्राट जूलियन के आलसी स्वभाव से परिचित था। स्लावोनिया मे अपने अधीन काम करने वाली सनाओ को उसने रोम पर धावा बोलने के लिए और पर्टिनेक्स का बदला लेने के लिए तैयार कर लिया। पर्टिनेक्स को प्रीटोरियाई गारद के जवानो ने मौत के घाट उतारा था। इसी प्रतिशोध का बहाना लेकर और सम्राट् बनने की अपनी महत्वाकाक्षा का कोई भी सकेत दिए बगैर उसने सेना को रोम की ओर कूच करा दिया और अभी इटली वालो को उसके कूच का पता भी नही चला था कि वह वहां जा पहुचा। उसको सिर पर आया देखकर सीनेट ने भयाक्रान्त सदस्यो

ने उसे सम्राट पद के लिए चुन लिया और जूलियन की हत्या कर दी।

इस शुरुआत के बाद, पूरे राज्य का स्वामी बनने के लिए उसके मार्ग मे दो बाधाए रह गयी। एक बाधा एशिया म थी जहा एशियाटिक सेना के कमाण्डर पेसेनियस नाइजर ने स्वय को सम्राट् घोषित कर दिया था। दूसरी बाधा पश्चिम मे थी जहा अल्बिनस सम्राट बनने की अभिलाषा सजोये बैठा था। दोनो को एक साथ शत्रु बना लेना खतरनाक था—इसी बात को समझते हुए सेवेरस न अल्बिनस को धोखा देने और नाइजर पर आक्रमण करने का फैसला कर लिया। उसने अल्बिनस को लिखा कि यद्यपि सीनेट ने उसे सम्राट चुना है, फिर भी वह इस सम्मान म उसे साझी-दार बनाना चाहता है। उसने अल्बिनस को 'सीजर' का सम्मान प्रेषित किया और, सीनेट मे प्रस्ताव पारित करवाकर उसे सह सम्राट बना दिया। अल्बिनस इस धोखे म आ गया।

लेकिन जसे ही एक बार सेवेरस ने नाइजर को पराजित करके उसकी हत्या कर दी और पूर्वी क्षेत्र पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया, वह रोम की ओर पलटा। वहा पहुचकर उसने सीनेट मे शिकायत की कि अल्बिनस ने उसके प्रति कृतघ्नता का बरताव किया है और उसको धोखे से मार डालने का षडयन्त्र किया है। सेवेरस ने कहा कि इसी कुचेष्टा के कारण उस पर सैनिक अभियान करना और अल्बिनस को उसकी कृतघ्नता का दण्ड देना ज़रूरी हो गया है। इसके बाद उसने फ्रास म उस पर धावा बोल दिया और उसका राज्य ही नही, उसके प्राण भी ले लिये।

सेवेरस के कृत्यो का सावधानी से अध्ययन करने वाला हर व्यक्ति यह पायेगा कि एक ओर उसमे क्रुद्ध सिंह की-सी विशेताए थीं और दूसरी ओर चतुर लोमडी जसे गुण और यह भी कि सभी लोग उसका सम्मान करते थे, सभी लोग उससे प्यार भी करते थे, जबकि उसके सिपाही उससे घृणा नही करते थे। अब यदि एक नौसिखिया शासक सेवेरस जितनी बडी सत्ता का नियन्त्रण और निर्वाह करने की योग्यता रखता है, तो यह कोई चमत्कारिक उपलब्धि नही मानी जानी चाहिए। कारण यह था कि एक ओर उसकी लूट-पाट ने प्रजा के मन मे उसके प्रति जो घृणा पैदा कर रखी थी, उससे उसको रक्षा वह व्यापक प्रतिष्ठा करती रही, जो उसके प्रति

सबके मन म व्याप्त थी।

उसका बेटा एन्तोनिनस कैराकाला भी अत्यत गुणवान व्यक्ति था। उसके गुणो स प्रजा चमत्कृत थी और सैनिक उससे प्यार करते थे। स्वभावत वह सैनिक था कठोर परिश्रम कर सकता था और किसी प्रकार का भी कोमल व्यवहार उसे नापसन्द था—चाहे वह भोजन कर रहा हो अथवा सरकारी काम-काज मे लगा हो। इसी कारण स उसके सनिक स्वभावत उस पर समर्पित थे। इसके बावजूद उसकी भयावह एव अपूव विकरालता एव क्रूरता के कारण (असख्य व्यक्तियो की हत्या के अतिरिक्त, बहुसख्य रोमनो तथा सिकन्दरिया के तमाम नागरिको को भी उसने मौत के घाट उतारा था) सर्वत्र सभी लोग उससे घणा करने लगे थे। उसके निकटतम सहयोगी और कमचारी भी उससे भयभीत रहने लगे। परिणामत उसी के सनिकों न उसे एक बार घर लिया और एक सेंचुरियन ने उसकी हत्या कर दी।

यहा ध्यान देने की बात यह है कि यदि कोई उन्मत्त कट्टरपथी व्यक्ति शासक की हत्या का प्रयास करता है ता उसकी मार से कोई शासक नही बच सकता, क्योकि जो व्यक्ति स्वय मृत्यु स नही डरता, वह कुछ भी कर सकता है। वह शासक को भी मार सकता है, लकिन किसी भी शासक को इस सम्भावना से डरने की अधिक आवश्यकता नही है, क्योंकि ऐसी हत्याए बहुत कम होती हैं फिर भी शासक को सदव यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी ऐसे व्यक्ति को किसी प्रकार का गम्भीर आघात या हानि न पहुचाये जो राज काज के सिलसिले म उसके निकट ही बना रहता हो। एन्तोनिनस से इसी नुक्ते पर भूल हो गयी। जिस सेंचुरियन ने उसकी हत्या की एन्तोनिनस ने उसके भाई को अपमानित एव लाछित करके मौत के घाट उतारा था। उसके बाद वह इस सेंचरियन को लगातार धमकिया देता रहा और इसे अपने अगरक्षक दस्ते मे भी बनाये रहा। इस प्रकार के अविवेकपूण व्यवहार का परिणाम उसके लिए सकट का ही कारण बन सकता था और अन्तत ऐसा ही हुआ भी।

लेकिन आइये, कामोडस की ओर बढें। साम्राज्य का शासन चलाना उसके लिए एकदम आसान था, क्योकि मार्कस आरेलियस का बेटा होने के

नाते साम्राज्य उसे विरासत में मिला था। उन केवल अपने पिता के पद-चिह्नों पर चलने की आवश्यकता थी। इतना भर न वह अपने सैनिकों एवं प्रजाजनों को सन्तुष्ट रख सकता था, लेकिन वह क्रूर और पाशविक प्रकृति का स्वामी था। अतएव जनता को लूटने खसोटने के लिए उसने सिपाहियों को रिझाना शुरू किया। सिपाही इससे दुराचारी और व्यसनी हो गए। दूसरी ओर वह अपनी मर्यादा और गरिमा को ही भूल बैठा। वह प्राय मल्लों और तलवारबाजों से लड़ने के लिए अखाड़े में उतर आया था और अपनी राजकीय मर्यादा के विरुद्ध अन्य भी कई काम करता था। परिणामत सिपाही उसकी उपेक्षा करने लगे। इसलिए एक ओर प्रजा उससे घृणा करती थी, दूसरी ओर सिपाही उसकी अवहेलना करने लगे थे। अन्तत वह एक ऐसे षड्यन्त्र का शिकार हुआ जो उसके प्राण ले बैठा।

अब हमें मक्सिमाइनस के चरित्र का अध्ययन करना है। वह बड़ा युद्ध प्रिय व्यक्ति था और अलेग्जान्देर की स्त्रैणता से तंग आए हुए सिपाहियों ने उसे अलेग्जान्देर की मृत्यु के बाद सम्राट पद के लिए चुन लिया। वह बहुत दिनों तक शासन नहीं कर सका क्योंकि उसकी दो हरकतें उसे लोगों की घृणा और अवहेलना का पात्र बना गयीं। पहली बात यह कि वह बड़े निम्न वर्ग का था। किसी जमाने में थ्रेस में वह गड़रिया रह चुका था और हर व्यक्ति को यह बात पता थी। अतएव वह सबकी नजरों से गिर गया। दूसरे यह कि सिंहासनारूढ होते ही उसने रोम जाकर स्वयं को सम्राट घोषित कराने की औपचारिकता की उपेक्षा कर दी फिर अपने राज्याधिकारियों के माध्यम से उसने रोम में तथा साम्राज्य के अन्य अनेक हिस्सों में अनेक प्रकार के अत्याचार करवाये। अत जनता उसे बर्बर समझने लगी।

इस प्रकार उसके निम्न वंशी होने के कारण सर्वत्र उसके प्रति तिरस्कार व्याप्त फैल गया और उसकी क्रूरता के भय के परिणामस्वरूप लोग उससे घृणा करने लगे। सबसे पहले अफ्रीका में विद्रोह हुआ और फिर रोम के नागरिकों की मन्द पाकर सीनेट ने विद्रोह कर दिया। पूरे इटली में उसके विरुद्ध षड्यन्त्र होने लगे। इस षडयन्त्र में उसके अपने सैनिक शामिल हो गए। ये सैनिक एक्विलेया पर घेरा डाले हुए थे। मगर उस नगर दुर्ग पर अधिकार पाना उन्हें असम्भव लग रहा था। अन्तत सम्राट की क्रूरता से

तंग आकर वे उसी पर पलट पडे। जब उन्होने देखा कि सम्राट के अनेकों शत्रु बन चुके हैं, उनके मन से उसका भय और आतंक जाता रहा और उन्होंने उसकी हत्या कर डाली।

मैं हेलियोगे बालस अथवा मैक्सिमस अथवा जूलियन की चर्चा नही करना चाहता, क्योंकि वे सभी की व्यापक घृणा के पात्र थे। अतएव बहुत दिनो तक शासन नही कर सके। इसके विपरीत मैं यही कहकर अपना वक्तव्य समाप्त करूंगा कि हमारे समकालीन शासकों को सिपाहियो को तुष्ट करने के लिए की जाने वाली असाधारण और कष्टकर कार्यवाहियों का झंझट इतना नही करना पडता। उन्हें सिपाहियो का कुछ तो ध्यान रखना ही पड़ता है लेकिन इसके बावजूद यह समस्या जल्दी ही निपट जाती है क्योंकि आधुनिक शासकों के पास रोमन साम्राज्य की सेनाओं की तरह से गठित स्थायी सेनाएं नही होती, जो विजित प्रदेशो के प्रशासन एवं सरकार का स्थायी अंग बन चुकी हो। इसलिए यदि रोमन काल में प्रजाजनो की अपेक्षा सैनिकों की मांगें पूरी करना आवश्यक होता था, तो केवल इसी लिए कि प्रजाजनो की अपेक्षा सैनिकों के हाथो में अधिक अधिकार होते थे।

हमारे अपने युग मे तुर्क सम्राट एवं सुलतान* के अतिरिक्त हर शासक के लिए सिपाहियों की अपेक्षा प्रजाजनो को तुष्ट करना आवश्यक है, क्योंकि नागरिकों के हाथो मे अधिक अधिकार हैं। मैंने तुर्क सम्राट को अपवादस्वरूप प्रस्तुत किया है क्योंकि उसके पास स्थायी तौर पर बारह हजार सिपाहियों का तोपखाना और पन्द्रह हजार घुडसवार सेना रहती है और यह विशाल सेना उसके साम्राज्य की सुरक्षा तथा सुदृढता के लिए आवश्यक है। इसलिए उसे इन सैनिकों की वफादारी के अलावा हर दूसरी बात की उपेक्षा करनी पडती है। इसी प्रकार सुलतान का भी शासन उसके सैनिकों के अधिकार मे है। अतएव प्रजा की परवाह न करते हुए भी उसे सैनिको की वफादारी की चिंता करनी पडती है।

---

* मैकियावेली के युग में तुर्क सम्राट था सलीम प्रथम और सुलतान से उसका अभिप्राय मिस्र के शासक से है।

आपको इस बात की ओर ध्यान देना चाहिए कि सुलतान का राज्य अन्य तमाम राज्यों से कुछ भिन्न है। यह बहुत कुछ पोप के साम्राज्य की तरह है। न तो उसे उत्तराधिकारी साम्राज्य कहा जा सकता है और न ही निजी सम्पत्ति। यहां भूतपूर्व शासक की सन्तान को सिंहासनारूढ़ नहीं कराया जाता, बल्कि अधिकारसम्पन्न व्यक्तियों द्वारा निर्वाचित व्यक्ति ही सम्राट् बनता है। यह व्यवस्था बहुत पुरानी है। अतएव इसे नवोदित राज्य नहीं कहा जा सकता। यहां नये राज्यों के सामने आने वाली सामान्य कठिनाइयां कभी खड़ी नहीं होतीं। यद्यपि शासक नया होता है, राज्य की परम्पराएं पुरानी होती हैं और उनकी रचना ही इस प्रकार से की गई है कि नवनिर्वाचित शासक को उत्तराधिकारी सम्राट की तरह से स्वीकार किया जा सकता है।

लेकिन आइए हम अपने मूल विषय की ओर लौटें। मेरा कहना यह है कि मेरी बात को समझने वाला हर व्यक्ति यह महसूस करेगा कि उल्लिखित सम्राटों का पतन या तो घृणा के कारण हुआ या अवहेलना के कारण। वह व्यक्ति यह भी समझ सकेगा कि अलग-अलग रास्ते अपनाते हुए भी इन शासकों में से एक का अंत सुखद हुआ और अन्य सभी का दुःखद। नये-नये शासक होने के नाते, पर्टिनेक्स और अलेक्जान्डर के लिए मार्कस आरेलियस की नकल करने की चेष्टा बेकार और विनाशकारी थी, क्योंकि मार्कस आरेलियस उत्तराधिकार के अन्तर्गत शासनारूढ़ हुआ था। इसी प्रकार कैराकाला, कामोडस और मैक्सिमिनस आदि के लिए सेवेरस की नकल करना घातक सिद्ध हुआ, क्योंकि उसका अनुकरण करने के लिए आवश्यक पराक्रम उनके व्यक्तित्व में नहीं था।

इसलिए किसी नये राज्य में सत्तारूढ़ होने वाला नया शासक न तो मार्कस आरेलियस का अनुकरण कर सकता है और न ही सेवेरस के पद-चिह्नों पर चल सकता है, बल्कि उसे सेवेरस के चरित्र से वही विशेषताएं ग्रहण करनी चाहिए, जो उसके राज्य की स्थापना के लिए आवश्यक हों और मार्कस आरेलियस के चरित्र में से ये गुण अपनाने चाहिए जो उसके शासन को बनाए रखने के लिए सहायक हो सकें और जो राज्य को दृढ़ता-पूर्वक स्थापित करने के बाद उसकी कीर्ति का विस्तार करें।

२०

दुर्ग तथा अन्य सुरक्षा-उपकरणों की उपयोगिता

अपने राज्यो पर अधिकार बनाए रखने लिए कुछेक शासक अपन शासितो को नि शस्त्र कर लेते है, कुछ अपने शासित नगरो को बाट देते हैं, कुछ शासक जान बूझकर अपन प्रति शत्रुता का वातावरण पदा करते हैं, कुछ अन्य शासक उन लोगो का मन जीतन का प्रयास करते हैं, जो प्रारम्भिक स्तर पर सन्दिग्ध रहे हैं, कुछ शासक दुग बनवाते है और कुछ शासक उन्हे मटियामेट कर देते हैं।

इनमे से किसी भी नीति पर कोई निर्णायक टिप्पणी करना असम्भव है। जिन राज्यो मे ये विशिष्ट नीतिया अपनायी गई हैं उनकी विशिष्ट परिस्थितियों का अध्ययन करन के बाद ही कुछ कहा जा सकता है, फिर भी मैं यथासम्भव साधारण तौर पर इस विषय पर चर्चा करूगा।

कभी भी किसी नये शासक ने अपने शासितो को नि शस्त्र नही किया है बल्कि कई बार नि शस्त्र शासितो को शस्त्र दिए गए हैं। यह इसलिए क्योकि शासितो को शस्त्र देने का अर्थ स्वय को सशस्त्र बनाना ही होता है। इससे सदिग्ध व्यक्ति वफादार दोस्त बन जाता है और पहले से ही वफादार चले आ रहे नागरिक मात्र प्रजाजन के दर्जे से उठकर आपके पक्के पक्षधर हो जाते है।

फिर राज्य भर के हर नागरिक को शस्त्र देना व्यवहारत सम्भव नही होता लेकिन जिनको आप यह विशेषाधिकार प्रदान करते हैं, उनकी मदद मे शेष नागरिको पर कठोर नियन्त्रण करना सहज हो जाता है और जब यह भेद-भाव शासितो की समझ मे आ जाएगा, तब ये शस्त्रधर

शासित आपके प्रति और भी उत्तरदायी हो उठेंगे। शेष लोग भी यह समझ कर कि अधिक खतरा उठाने वालो तथा अधिक उत्तरदायित्व का निर्वाह करने वालो के लिए शासक द्वारा अधिक उपकृत किया जाना, पुरस्कृत किया जाना अनिवार्य है, आपको क्षमा कर देंगे, लेकिन जैसे ही आप अपने शासितो को नि शस्त्र करने लगते हैं, वैसे ही आप अपनी कायरता अथवा सन्देह को अभिव्यक्त करते हुए उनके प्रति अपना अविश्वास प्रकट करते हैं और उन्हें नाराज कर लेते हैं। अब चाहे आप कायरता वश ऐसा करें अथवा सन्देहवश, उनकी घृणा के पात्र तो बन ही जाते हैं।

अब स्थिति यह हो जाती है कि आप बहुत दिनो तक नि शस्त्र बने रहने का खतरा तो उठा नही सकते, अतएव आप भाडे के सैनिको का आश्रय लेते हैं और इनका हाल मैं पहले ही बयान कर चुका हू। अगर ये भाडे के सैनिक विश्वसनीय भी हो तो इतने विश्वसनीय कभी नही हो सकते कि सामर्थ्यवान शत्रु के मुकाबले मे आपकी रक्षा कर सकें अथवा आपके अविश्वास के पात्र शासितो के षडयन्त्रो से आपको बचा सकें। इसीलिए मैंने कहा कि नये राज्य में आया नया शासक सदैव अपने शासितो को शस्त्र देता है और इस प्रकार के उदाहरणो से इतिहास अटा पड़ा है।

लेकिन जब कोई शासक अपने मूल प्रदेश मे किसी नव विजित प्रदेश को जोडता है, तब उसे अवश्य ही अपने नये शासितों को नि शस्त्र कर देना चाहिए। इस नियम का अपवाद केवल ऐसे व्यक्ति बनाए जाने चाहिए, जिन्होंने विजयाभियान के दौरान नये शासक का साथ दिया हो। यही नहीं इन अपवादो को भी समय और अवसर पाकर कमजोर और स्त्रैण बनाया जाना चाहिए और ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि आपके द्वारा शासित सारे प्रदेशों एव उपनिवेशो में आपके अपने सिपाही ही सशस्त्र रह जायें।

हमारे बुद्धिसम्पन्न समझे जाने वाले विद्वानो एव पूवजो को अक्सर यह कहते सुना गया था कि पिस्तोया को गुटो के द्वारा और पीसी को दुर्गों के बल पर नियन्त्रण म रखना आवश्यक था, इसलिए वे अपने शासित नगरों मे फूट के बीज बोया करते थे, जिससे उनका आसानी से शासन किया जा सके।

उन दिनो इटली मे एक प्रकार का स्थायित्व विद्यमान था, स्थिरता थी, अतएव यह सलाह निस्सदेह बुद्धिमत्तापूर्ण मानी जाती थी, लेकिन मेरा खयाल है कि अब यह सिद्धात आज की दुनिया मे ठीक नही होगा। मैं यह विश्वास ही नही कर सकता कि असन्तोष और फूट के बीज बोने से कभी भी कोई भलाई हो सकती है। इसके विपरीत इस प्रकार की फूट के शिकार हुए नगरो का शत्रु का हमला होने पर अनिवार्यत तुरन्त पतन हो जाता है। कमज़ोर पक्ष सदव शत्रु से जा मिलेगा तथा दूसरा पक्ष उनका मुकाबला नही कर सकेगा।

मेरा विचार है कि मेरे द्वारा उल्लिखित बातो से ही प्रभावित होकर वैनिस के शासको मे अपने शासित नगरो म गुएल्फ तथा गिबेलाइन गुटो को पालना शुरू किया था।[1] यद्यपि इन शासको ने इन गुटो के बीच कभी भी रक्तपात नही होने दिया, फिर भी वे इस मनमुटाव को बढ़ावा देते रहते थे, जिससे आपसी मतभेदो म ही उलझे हुए नागरिक कभी भी उनके विरुद्ध एकता के सूत्र मे न बध सकें।

लेकिन जसा कि हम देख चुके हैं कि घटनाए इन शासको की योजना के अनुसार नही चली—जब वेनिस के शासको को वैला के मैदान मे खदेडा गया तो एक गुट ने साहस बटोरकर उनसे पूरा राज्य छीन लिया। इसलिए इस प्रकार के साधनो को अपनाने वाले शासक को कायर समझा जाता है। किसी भी शक्ति-सम्पन्न और दृढ शासन म इस प्रकार की प्रतिद्वद्विताओ को कभी सिर नही उठाने दिया जाता। इनसे शासक को केवल शान्तिकाल मे लाभ पहुच सकता है क्योकि वह इन्ही के बल पर अपने शासितो पर आसानी से नियन्त्रण रख सकता है, लेकिन युद्धकाल में इस

---

१ ये नाम शायद राजमुकुट की प्राप्ति के लिए चली वेल्फ़ तथा वाइबलिगेन परिवारों की आपसी प्रतिद्वद्विता से गढ़ गए हैं। इटली के मध्ययुगीन इतिहास में उपले तौर पर पोप (गएल्फ़) तथा सम्राट (गिबेलाइन) के समर्थकों को इन्हीं नामो से अभिहित किया जाता था। स्थानीय एवं पारिवारिक द्वन्द्वों के कारण सारा मामला और भी उलझ-सा गया लेकिन गिबेलाइन लोग अपेक्षाकृत कुलीन एव सनिक परम्परा वाले होते थे और गुएल्फ़ लोग उद्योग व्यापार के धनी होते थे।

नीति की कमजोरियां प्रकट हो जाती हैं।

इसमे सन्देह नही कि किसी शासक की महानता, कठिनाइयो तथा विरोधियो पर विजय पाने की उसकी क्षमता पर निभर करती है। इस-लिए भाग्य जब किसी नये शासक की महत्ता का महल बनाने पर आता है और नये शासक को उत्तराधिकार मे सत्ता पाने वाले शासक की अपेक्षा अपनी धाग जमाने की आवश्यकता बहुत अधिक होती है, तो उसके लिए शत्रु ढूढ निकालता है और उन्हे उससे भिड जाने के लिए प्रेरित करता है, जिससे उस शासक को उनपर विजय पाने का बहाना मिल जाये और इस प्रकार उसे उस सीढी पर चढने का अवसर मिल जाए, जो शत्रु ने उसे उप-लब्ध करा दी है। यही कारण है कि बहुत-से लोगो का यह विश्वास है कि बुद्धिमान शासक को अवसर मिलते ही, बडी चतुराई से, अपने प्रति कुछ विरोध के बीज बोने चाहिए, जिससे कि इस विरोधी मोर्चे को जीतकर वह अपनी प्रतिष्ठा बढा सके।

प्राय शासको का, विशेषकर नये शासको का, यह अनुभव रहा है कि उनके शासनकाल के प्रारम्भ मे सदिग्ध नजर आने वाले लोग उस समय विश्वसनीय मित्र नजर आने वाले लोगो की अपेक्षा अधिक वफादार एव उपयोगी सिद्ध होते हैं। सिएना के शासक पेण्डोलफो पत्रुची ने अपना शासन अन्यो की अपेक्षा अपने सदिग्ध शासितो की सहायता से अधिक चलाया।

लेकिन यहा किसी भी प्रकार का सामान्य सिद्धान्त नही बनाया जा सकता क्योकि परिस्थितिया हर मामले मे भिन्न भिन्न होती हैं। मैं केवल इतना ही कहूगा कि ऐसे लोगो को अपनी ओर मिला लेने मे किसी शासक को कभी भी कठिनाई नही हो सकती जो प्रारम्भ मे उसके शत्रु रहे हों, लेकिन जिन्हें किसी के आश्रय की आवश्यकता हो और ऐसे लोग पूरी वफादारी से उसकी सेवा करने के लिए और भी अधिक विवश होते हैं, क्योंकि वे महसूस करते हैं कि शासक के मन में उनके प्रति प्रारम्भ मे बनी बुरी धारणाओं को अपने सत्कार्यों द्वारा मिटाना जरूरी है। इसीलिए शासक उन्हें अपने तथाकथित वफादार सेवकों की अपेक्षा—जो अपने आपको इतना सुरक्षित महसूस करते हैं कि उसके हितों का ध्यान नही करते, अधिक उपयोगी पाता है।

बात इसी विषय से सम्बद्ध है। इसलिए मैं नये प्रदेशों को जीतने वाले शासकों को याद दिला दूं कि यदि आपने तोड़फोड़ की कार्यवाहियों को प्रोत्साहन देकर नया प्रदेश जीता है, तो आपको अपने सहायकों के इरादों के बारे में भली भांति सोच-विचार कर लेना चाहिए। यदि इन सहायकों की कार्यवाहियों का आधार शासक के प्रति स्वाभाविक स्नेह नहीं है, बल्कि वर्तमान शासक के प्रति असन्तोष है, तो उसे उनकी मैत्री को अपने साथ बनाए रखने में काफी कष्ट होगा और कठिनाई भी क्योंकि अपना समय आने पर वह भी उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर पायेगा। यदि हम सावधानी से इसके कारणों की जांच करें और पुरातन एवं आधुनिक दृष्टांतों का अध्ययन करें तो हम पायेंगे कि शासक वर्तमान प्रशासन से असन्तुष्ट होकर उसके मित्र बनने वाले और उसके आक्रमण का समर्थन करने वाले लोगों की अपेक्षा उन लोगों की मैत्री आसानी से पा सकता है जो वर्तमान प्रशासन से सन्तुष्ट थे और विजेता का विरोध करते थे।

अपने विजित प्रदेशों पर अपनी पकड़ मजबूत बनाए रखने के लिए शासक लोग दुर्ग बनवाते रहे हैं। ये दुर्ग उनके विरुद्ध विद्रोह का षड्यन्त्र करने वाले लोगों की गतिविधियों का नियन्त्रण करने में और किसी आकस्मिक आक्रमण के मुकाबले के लिए शरणस्थली के रूप में सहायक होते हैं।

मैं इस नीति का समर्थन करता हूं, क्योंकि यह प्राचीन काल से ही व्यवहार में लायी जा रही है, फिर भी हमारे अपने युग में श्रीमन्त निकोलो वितेल्ली ने सित्ता दी कास्तेलो पर अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए ही वहां के दो दुर्गों को तहस-नहस कर दिया था। उर्बिनो के ड्यूक गाइदो बाल्दो सीज़र बोर्गिया द्वारा अपने उपनिवेश से खदेड़े जाने के बाद जब वहां लौटा तो उसने अपने विजित प्रदेश में अवस्थित तमाम किलों को धूल में मिला दिया। उसने यही सोचा था कि ऐसा करने से उसका राज्य उससे छीनना कठिन हो जायेगा। जब वे बोलोना की ओर लौटे तो बेन्तीवोग्ली ने भी इसी प्रकार की नीति का अनुसरण किया। इसलिए हम सहज ही देख सकते हैं कि दुर्गों की उपयोगिता अथवा उपयोगहीनता परिस्थितियों पर निर्भर करती है और यदि वे एक दिशा में लाभकर होते हैं तो

किसी दूसरी दिशा मे हानिकर भी हो सकते हैं।

इसी बात को इस प्रकार से कहा जा सकता है कि जो शासक विदेशी आक्रमण की अपेक्षा अपने ही शासितो से अधिक भयभीत रहता है, उसे दुर्ग बनवाने चाहिए। जो शासक आन्तरिक विद्रोह से ज्यादा बाहरी आक्रमण के प्रति चिन्तित हो उसे दुर्गों का विचार ही नही करना चाहिए। फ्रासेस्को स्फोर्जा द्वारा बनवाया गया मीलान का परकोटा स्फ़ोर्जा परिवार के विरुद्ध अव्यवस्था के किसी भी अन्य स्रोत की अपेक्षा यही अधिक विद्रोहो का स्रोत रहा है और बना रहेगा।

इसलिए सर्वोत्तम दुर्ग रचना यही हो सकती है कि शासक अपने शासितों की घृणा से बचे। यदि अपने किले बनवा रखे हैं और प्रजाजन आपसे घृणा करते हैं, तो ये दुर्ग आपकी रक्षा नही कर सकेंगे। एक बार अगर प्रजा ने आपके विरुद्ध शस्त्र उठा लिए तो उन्हें बाहर से मिलने वाली सहायता की कमी नहीं रहेगी।

हमारे अपने युग म फोर्ली की काउन्तेस के अतिरिक्त एक भी ऐसा उदाहरण नही है, जिसके मामले में किसी किले ने अपने शासक की सचमुच रक्षा की हो। हा, फ़ोर्ली को उसके प्रेमी काउण्ट जिरोलामो की हत्या के बाद प्रजा के आक्रमण के समय एक दुग मे ही शरण मिली थी। इसी दुर्ग मे रहकर वह मीलान से सहायता आने की प्रतीक्षा करती रही और अपना राज्य वापस लेने का मौका ढूढती रही। परिस्थितिया ऐसी विकट थी कि प्रजा को बाहर से सहायता ही नहीं मिल सकी।

लेकिन बाद मे उसके लिए भी किलो की कोई उपयोगिता न रही। सीज़र बोर्गिया ने जब उस पर आक्रमण किया और प्रजाजन जाकर आक्रान्ता से ही मिल गए, तो किले बेकार हो गए। इसलिए पहले ही की तरह बाद म भी उसके लिए किले बनवाने की अपेक्षा प्रजाजनो की शत्रुता से बचना ही सुरक्षा का बेहतर उपाय सिद्ध होता। अतएव सभी कुछ सोचने विचारने के बाद मैं उन सबकी प्रशसा करता हू, जो दुर्ग बनवाते हैं और जो दुर्ग नही बनवाते, लेकिन मैं हर उस व्यक्ति की निन्दा करूगा, जो प्रजा की घृणा के प्रति उपेक्षा भाव लेकर दुर्गों की क्षमता को अपनी आस्था का आधार बना लेता है।

२१

सम्मान प्राप्त करने के लिए शासक क्या करें ?

महान विजयाभियानो तथा निजी योग्यता के चौंकाने वाले प्रदर्शनो से बढ़कर शासक की प्रतिष्ठा बढाने का और कोई साधन नही हो सकता। हमारे अपने समय मे स्पेन के शहशाह एरागन के फर्डिनण्ड हैं। उसे एक नया शासक समझा जा सकता है, क्योकि पहले वह एक कमजोर राजा माना जाता था और उस मान्यता से उठकर उसने ईसाइ विश्व का प्रथम सम्राट होने की कीर्ति एव ख्याति अर्जित कर ली है। यदि आप उसकी उपलब्धियो का अध्ययन करें तो पायेंगे कि वे सब अभूतपूर्व एव तेजोमयी थी। अपने शासनकाल के प्रारम्भ मे उसने ग्रैनाडा पर आक्रमण किया और इसी अभियान से उसकी व्यापक सत्ता की नीव पड गयी। पहले तो बिना किसी विकर्षण मे फसे और बिना किसी हस्तक्षेप से भयभीत हुए उसने अभियान शुरू किया। उसने इसका सदुपयोग कास्तील के बैरनो की शक्तियो को उलझाये रखने के लिए किया, क्योकि युद्धक्षेत्र मे अपनी तमाम चेष्टाओ को और चेतना को केन्द्रित कर लेने के कारण इन बैरनो के पास देश के भीतर गडबडी पैदा करने का कोई अवसर ही नही रहा। इस प्रकार उन्हे देश के भीतर घट रहे घटनाक्रम की जानकारी दिए बगैर ही फर्डिनैण्ड ने अपनी प्रतिष्ठा बढा ली एव उनके ऊपर अपनी पकड मजबूत कर ली।

चर्च से एव प्रजाजना से प्राप्त धन के बल पर वह अपनी सेना को बनाए रखने मे समर्थ रहा और एक लम्बे युद्ध के कारण अपनी स्थायी सेना की मजबूत नीव भी उसने डाल ली। बाद मे वह इसी उपलब्धि के लिए विख्यात भी हुआ। यही नही भविष्य मे व्यापकतर अभियान करने के लिए धर्म की ही आड मे उसने एक क्रूर धार्मिक अभियान किया, जिसमे उसने

मोरिस्को लोगों को राज्य से खदेड दिया। इससे अधिक कारुणिक अथवा चौंकाने वाला कोई अभियान हो ही नही सकता।[1]

धर्म का ही लबादा ओढकर उसने अफ्रीका पर हमला किया, इटली पर कूच किया और हाल ही मे फ्रास पर भी धावा बोला है। इस प्रकार उसने सदैव महान् कार्यों की योजना बनायी है और उन्हे पूरा किया है। इससे उसके शासित सदैव आश्चर्यचकित तथा रोमाचित से रहते हैं। उन्हें सदव इन अभियानो के परिणामो की प्रतीक्षा रहती है और उसकी ये कार्यवाहिया एक निरन्तर शृखला की तरह चलती रहती हैं—कुछ इस प्रकार से कि उसने दो अभियानो के बीच चुपचाप शासक के विरुद्ध षड्यन्त्र करने का अवसर ही कभी प्रजा को नही दिया।

शासक को आन्तरिक प्रशासन-सम्बन्धी अपनी क्षमताओं का भी चमत्कारपूर्ण प्रदर्शन करते रहना चाहिए। ये क्षमताए ऐसी हो, जैसी मीलान के बर्नाबोने प्रदर्शित की थी। किसी नागरिक के सामान्य नागरिक जीवन मे किए गए अपवादात्मक रूप से अच्छे या बुरे काम के लिए उसे पुरस्कृत अथवा दण्डित कुछ ऐसे ढग से किया जाना चाहिए कि सारी घटना शासितों की चर्चा का विषय बन जाये। इन सबसे बढकर अपने हर कृत्य के माध्यम से शासक को अपनी प्रतिष्ठा असाधारण योग्यताओ से सम्पन्न एक महान् व्यक्ति के रूप मे स्थापित करनी चाहिए।

अपने-आप को सच्चा दोस्त या सच्चा दुश्मन होने अर्थात अपने-आप को किसी एक पक्ष का निर्भीक पक्षधर घोषित करने से भी प्रतिष्ठा बढती है। तटस्थता की अपेक्षा यह नीति सदैव अधिक लाभकर सिद्ध होगी। उदाहरणार्थ यदि आपकी पडोसी शक्तिया आपस मे गुत्थम-गुत्थ हो उठती हैं और उनमे से कोई एक जीत जाती है, तो आप खतरे मे हो भी सकते हैं और नही भी हो सकते। दोनो ही स्थितियो मे आपको अपने पक्ष की खुलकर घोषणा कर देने और जमकर लडने से लाभ रहेगा, क्योंकि

१ मैकियावेली सम्भवत ग्रैनाडा से १४ वर्ष से अधिक आयु के उन तमाम मुसलमानों के निकाले जाने की बात कर रहा है जिन्होंने ईसाइयत स्वीकार नहीं किया था। यह घटना ईस्वी सन् १५०२ की है। इसका श्रेय फर्डिनन्ड की बजाय इजाबेला को अधिक है। मूर लोग तो स्पेन से अन्तत १६१० में निकाले गए थे।

यदि इन शक्तियों की जय-पराजय आपकी सुरक्षा को प्रभावित करती है और आप अपना पक्ष घोषित नहीं करते, तो आप विजेता की कृपा पर निर्भर होंगे जबकि पराजित पक्ष आपकी दयनीय स्थिति पर हंसेगा और आपके पास किसी का संरक्षण पाने अथवा किसी के यहां शरण लेने का कोई औचित्य नहीं रह जाएगा। विजेता कभी संदिग्ध व्यक्तियों को मित्र नहीं बनाना चाहता, क्योंकि ये (तटस्थ रहने वाले) लोग कठिनाई की घड़ी में उसकी मदद नहीं करते। पराजित व्यक्ति भी आपका तिरस्कार कर देता है क्योंकि आप उसकी विपत्ति की घड़ी में सदल-बल उसकी सहायता करने नहीं गए थे।

एण्टियोकस इतोलियन लोगों के निमन्त्रण पर वहां से रोमनों को मार भगाने के लिए ही यूनान गया था। उसने अपने दूत रोमनों के मित्रों एकियनों के पास भेजे और उन्हें तटस्थ बने रहने के लिए प्रोत्साहन दिया। दूसरी ओर रोमनों ने एकियनों को अपनी ओर से लड़ने के लिए आमंत्रित करना शुरू किया। मामला एकियनों की परिषद में बहस के लिए उठाया गया इसी परिषद में एण्टियोकस का वह राजदूत भी मौजूद था, जो उन्हें तटस्थता के लिए प्रेरित कर रहा था। राजदूत की इस सलाह के जवाब में रोमन राज्याध्यक्ष ने कहा—"इस राजदूत की सलाह—कि आप युद्ध में हस्तक्षेप न करें, से ज्यादा अहितकर कोई बात आपके लिए नहीं हो सकती। आप न किसी की कृपा के पात्र बन सकेंगे और न ही सम्मान पा सकेंगे और फिर भी आप विजेता की लूट का हिस्सा होंगे।"

ऐसा हमेशा होता है कि आपके अमित्र आपको तटस्थ बने रहने की सलाह देते हैं और आपके हितैषी मित्र आपसे सशस्त्र सहायता की मांग करते हैं। अनिश्चय के शिकार शासक त्वरित खतरों से बचने के लिए हमेशा तटस्थता का रास्ता अपना लेते हैं और आम तौर पर मुसीबत में फंस जाते हैं लेकिन जब आप साहस करके किसी एक पक्ष के लिए अपने समर्थन की घोषणा कर देते हैं तो उस पक्ष के जीत जाने पर विजेता के बहुत शक्ति सम्पन्न होते हुए भी और आपके उसकी कृपा पर निर्भर होते हुए भी वह आपका अहसानमन्द होता है और अपने-आप को आपके प्रति मैत्री के बन्धन में जकड़ा हुआ पाता है और ऐसी स्थिति में भी आपके प्रति

कृतघ्नता का और कटुता का व्यवहार करे इतना सिद्धान्तहीन एव गिरा हुआ मैं इनसान को नहीं समझता।

फिर विजय का उत्साह भी कभी इतना अधिक नही होता कि विजेता किसी भी स्तर पर उचित-अनुचित का विशेषकर न्याय के आधारभूत सिद्धान्तो का ध्यान ही न रखे, लेकिन दूसरी ओर यदि आपके द्वारा समर्थित पक्ष पराजित हो जाता है, तो वह आपके सामने ढाल बनकर खडा हो जाएगा। वह यथासम्भव आपकी हर सहायता करेगा और इस प्रकार आप दोनो एक-दूसरे के ऐसे घनिष्ठ साझीदार बन जायेंगे कि हो सकता है, इस साझेदारी मे आप लोगो के भाग्य भी पलटा खा जायें।

अब पराजय की स्थिति में यदि दोनो युद्धरत पक्ष ऐसे हैं कि आपको विजेता से डरने की कोई ज़रूरत ही नही है, तो आपको और भी खुलकर किसी एक पक्ष के समर्थन की घोषणा कर देनी चाहिए। इस नीति को अपनाकर आप एक युद्धरत पक्ष की सहायता से दूसरे पक्ष को नष्ट कर देते हैं। यदि यह पक्ष बुद्धिसम्पन्न होता तो दूसरे युद्धरत पक्ष की सहायता स्वय कर रहा होता। यदि आपका पक्ष जीत जाता है तो आपका साथी आपकी कृपा पर निर्भर करेगा और आपकी सहायता के बगैर उसके लिए जीतना असम्भव होगा।

यहा इस बात की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए कि किसी भी शासक को किसी ऐसे आक्रमणकारी गुट मे शामिल नही होना चाहिए जिसका एक भी हिस्सेदार स्वय उससे ज्यादा शक्ति सम्पन्न हो। हा, जैसा कि मैं पहले कह चुका हू, विवशता की स्थिति की बात और है। यह सलाह इसलिए दी गयी है कि यदि आपका पक्ष जीत जाता है तो आप अपने से अधिक शक्ति-सम्पन्न साझीदार के गुलाम होकर रह जायेंगे और शासकों को किसी दूसरे की कृपा पर निर्भर करने की स्थिति से हर कीमत पर बचना चाहिए।

वेनिस वालो ने ड्यूक आव मीलान के विरुद्ध मोर्चा बाधने के लिए फ्रांस के साथ दोस्ती गांठ ली और यह दोस्ती उनकी बरबादी का कारण बन गयी जबकि वे इस साझेदारी से बच सकते थे। लेकिन जब इस प्रकार की साझेदारी अनिवार्य हो जाती है (जैसा कि पोप और स्पेन द्वारा

सोम्बार्दी पर किए गए आक्रमण के समय फ्लारेंस वालो के साथ हुआ) तो शासक को हर कीमत पर उल्लिखित कारणो को दृष्टिगत रखते हुए किसी एक पक्ष का समर्थन करना चाहिए।

फिर कभी भी किसी सरकार को यह नही सोचना चाहिए कि वह खतरो से साफ-साफ बच निकलने का रास्ता अपना सकती है। वस्तुत हर सम्भव कार्यवाही को किसी न किसी हद तक खतरनाक समझा जाना चाहिए। जीवन की धारा ही ऐसी है कि जब व्यक्ति किसी एक खतरे से बचने का प्रयास करता है तो किसी दूसरे खतरे की चपेट मे आ जाता है। बुद्धिमत्ता इसी मे होती है कि किसी विशेष खतरे की प्रकृति को व्यक्ति पहचान ले और न्यूनतम खतरे वाली कार्यवाही का रास्ता अपना ले।

शासक को प्रतिभासम्पन्न व्यक्तियो के प्रति प्रशसा का भाव भी दिखाना चाहिए, योग्य व्यक्तियो को सक्रिय रूप से प्रोत्साहन देना चाहिए और प्रमुख कारीगरो को सम्मानित करना चाहिए। इसी प्रकार उसे अपने नागरिको को अपने-अपने कार्य व्यापार का शान्तिपूर्वक निर्वाह करते के लिए प्रेरित करते एव प्रोत्साहन देते रहना चाहिए—चाहे वे नागरिक व्यापारी हो, खेतिहर हो अथवा किसी अन्य व्यवसाय पर अवलम्बित हो। न तो किसी नागरिक को अपनी सम्पत्ति बढाते समय उसके छिन जाने का भय होना चाहिए और न ही किसी उद्योगपति को किसी नये उद्योग को शुरूआत करते समय ऊचे करो से आतकित होकर अपना हाथ रोकना चाहिए। इसके विपरीत शासक को इस प्रकार के कार्य करने और अपने नगर या राज्य की समृद्धि बढ़ाने के इच्छुक व्यक्तियो को पुरस्कृत करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसके साथ-साथ साल-भर मे कभी उपयुक्त अवसर पाकर उसे उत्सवो, समारोह एव प्रदर्शनो के द्वारा प्रजा का मनो-रजन करना चाहिए।

फिर हर नगर सघा-समितियो तथा पारिवारिक समूहो मे बटा हुआ होता है। शासक को इनकी ओर ध्यान देना चाहिए। इनसे समय-समय पर मिलते-जुलते रहना चाहिए और इस प्रकार से सौजन्य एव उदारता का आदर्श स्थापित करते रहना चाहिए। इसके बावजूद हर समय अपने पद की मर्यादा, गरिमा का भी निर्वाह करना चाहिए, क्योकि उसके पास कभी भी किसी चीज की कमी महसूस नही की जानी चाहिए।

२२

शासक के निजी सेवक

शासक के लिए अपने मन्त्रियो का चुनाव कम महत्त्व का काम नही होता और इन मन्त्रियो की उपयोगिता शासक के अपने बुद्धि-चातुर्य पर निर्भर करती है। किसी भी शासक की बुद्धिमत्ता के बारे मे पहली धारणा उन व्यक्तियो की गुणवत्ता के आधार पर बनायी जाती है जिनसे वह घिरा रहता है। यदि वे सुयोग्य एव स्वामिभक्त लोग हैं तो राजा को हमेशा विवेकशील समझा जायेगा, क्योकि इससे यह सिद्ध होगा कि उसमे उनकी योग्यता की पहचान करने तथा उनकी वफादारी को जीतने की क्षमता है। यदि ये लोग ऐसे सुयोग्य एव स्वामिभक्त नही होगे, तो शासक की सदैव आलोचना की जाएगी, क्योकि उसके द्वारा किए गए मन्त्रियो के चुनाव मे ही उसकी प्रथम भूल का दिग्दर्शन हो जाएगा।

जो कोई भी सिएना के शासक पेण्डोल्फो पेत्रुची के मन्त्री के रूप मे एन्तोनियो दा विनाफ्रो को जानता था, इस बात को भली भाति समझ जाता था कि पेण्डोल्फो स्वय अत्यन्त बुद्धिमान एव सुयोग्य व्यक्ति है। बुद्धिमत्ता भी तीन प्रकार की होती है। एक प्रकार की बुद्धि वह होती जो समस्याओ को स्वयमेव समझ जाती है, दूसरे प्रकार की बुद्धि वह होती है जो दूसरों की समझ-बूझ की दाद देती रहती है, तीसरे प्रकार की बुद्धि न स्वय कुछ समझती है और दूसरे की समझ-बूझ को दाद देती है। प्रथम कोटि की बुद्धि श्रेष्ठ मानी जाती है, द्वितीय कोटि की बुद्धि अच्छी होती है। तृतीय कोटि की एकदम बेकार। इसलिए निष्कर्ष यह निकला कि पेण्डोल्फो में यदि प्रथम कोटि की बुद्धि नही थी, तो कम से कम दूसरे प्रकार की बुद्धि से वह सम्पन्न था। यदि किसी शासक मे इतनी निर्णय

बुद्धि है कि वह दूसरो की कथनी-करनी की अच्छाई-बुराई का फैसला कर लेता है तो वह स्वय सूक्ष्मबुद्धि न होते हुए भी अपने मन्त्रियो के कार्य-कलाप की भलाई-बुराई की जाच कर लेगा और तदनुसार प्रशसा अथवा आलोचना कर लेगा। इस प्रकार से मन्त्री कभी भी उसे ठगने या धोखा देने की बात नही सोच सकेंगे और भूल करते समय डरेंगे।

जहा किसी मन्त्री की योग्यता की जाच करने का सवाल है, मैं एक अचूक नुस्खा बताता हू। आप किसी मन्त्री को आपके हितो की अपेक्षा अपने हितो की अधिक चिन्ता करते हुए देखें, और अपने हर कार्य कलाप मे अपना लाभ ढूढते हुए पायें तो समझ लें कि ऐसा व्यक्ति कभी भी अच्छा मन्त्री नही होगा और आप उस पर कभी भरोसा नही कर सकेंगे। ऐसा इसलिए कहा जाता है कि शासकीय कार्यभार सम्हालने के लिए तनात व्यक्ति को कभी भी अपने हित की नही, बल्कि शासक के हित की बात सोचनी चाहिए। उसे शासक की समस्याओं का समाधान खोजने के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार की बात मे पडना ही नही चाहिए।

शासक को भी चाहिए कि वह अपने मन्त्रियो की सद्भावना अपने प्रति बनाये रखने के लिए उनके प्रति उदारता का बरताव करे, उन्हें सम्मानित करे, उन्हें समृद्धि प्रदान करे और उन्हें अपने प्रति कृतज्ञ बना ले। उनके साथ उत्तरदायित्वों तथा सम्मान में साझीदार बने। इस प्रकार मन्त्री शासक के ऊपर अपनी निर्भरता को महसूस करेगा और अपने पास समृद्धि और सम्मान का अतिरेक पाकर और अधिक की कामना नही करेगा। इतने अधिकार और सम्मान पाकर वह परिवर्तन की सभावना से ही डरने लगेगा। इसलिए जब शासक और उसके मन्त्रियो के बीच इस प्रकार के सम्बन्ध होंगे तो उन्हें एक-दूसरे पर विश्वास भी होगा। सम्बन्ध इसके विपरीत होने पर दोनो के ही लिए परिणाम घातक होंगे।

२३

चाटुकारो से कैसे बचें ?

एक ऐसा भी विषय है जिसे मैं छुए बिना नही छोड सकता । यह एक ऐसी ग़लती है जिसे करने से शासक लोग बडी मुश्किल से बच पाते हैं। यदि वे अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धि नही होते अथवा अपने मन्त्रियो का चुनाव सावधानी से नही करते तो वे अक्सर यह भूल कर जाते हैं। मैं चाटुकारो की चर्चा कर रहा हू जो हर राजदरबार मे मधु-मक्खियो की तरह भरे रहते है। लोग अपने-अपने काम मे खोये-खोये ही इतने खुश रहते हैं और अपने आप को ऐसे-ऐसे धोखे देते हैं कि उनके लिए इस चाटुकारिता की महामारी के जबडो से बचना बडा मुश्किल होना है और अगर वे इस बीमारी से बचने की चेष्टा करते हैं, तो लोगो के निरादर के शिकार हो जाते हैं।

ऐसा इसलिए होता है कि चाटुकारो से बचने का एकमात्र उपाय यही है कि आप प्रजा के मन मे यह धारणा बैठा दें कि आप सच्चाई का बुरा नही मानते, लेकिन यदि हर व्यक्ति आपके सामने सत्य भाषण की सुविधा पा जाता है, तो आपका सम्मान घटता है। अतएव एक चतुर शासक को मध्यम माग का अनुसरण करना चाहिए । उसे प्रशासन के लिए बुद्धिमान लोगो को चुनना चाहिए और केवल उन्ही को यह छूट देनी चाहिए कि वे उसके सामने सच बोल सकें और वह भी उन्ही मामलो मे, जिनके बारे मे वह उनकी राय मागे अन्य किसी विषय मे नही।

लेकिन उसे स्वय भी उनसे जमकर जिरह करनी चाहिए और उनकी बात बडे ध्यान से सुननी चाहिए। इसके बाद उसे स्वय अपना मत स्थिर करना चाहिए। यही नही, अपनी परिषदो और अपने हर सलाहकार के प्रति शासक का रुख ऐसा होना चाहिए कि वे इस बात को महसूस कर

सकें कि वे जितने स्पष्टवादी होंगे, उतने ही स्वीकार्य होते चले जायेंगे। इसके अतिरिक्त शासक को किसी भी बात पर अड़ना नहीं चाहिए। उसे एक बार तय कर ली गयी नीति को तुरन्त लागू करना चाहिए और उसका दृढ़ता से पालन करना चाहिए। जो शासक ऐसा नहीं करता उसे या तो चाटुकार लोग इधर-उधर धकेलते फिरेंगे अथवा वह स्वयं परस्पर विरोधी सलाह के चक्कर में पड़कर, वह बार-बार अपनी धारणाएं बदलता रहेगा। परिणामतः उसकी प्रतिष्ठा गिर जायेगी।

मैं इस तथ्य के दृष्टान्त के रूप में आधुनिक इतिहास की एक घटना प्रस्तुत करता हूं। वर्तमान सम्राट मक्सिमिलियान के सेवक बिशप लूका अपने महामहिम सम्राट के विषय में कहा करते थे कि वह न तो कभी किसी की सलाह लेते थे और न कभी अपना रास्ता ही खोज पाये। ऐसा इसलिए हुआ कि सम्राट ने मेरी सलाह के विरुद्ध कार्यवाही की थी। सम्राट् दुराव छिपाव करने वाला व्यक्ति है। वह किसी को भी अपनी योजनाओं के विषय में नहीं बताता और किसी की सलाह नहीं मानता। लेकिन जैसे ही वह अपनी योजनाओं को क्रियान्वित करता है और उनके बारे में सब लोग जान जाते हैं, तो उसके निकटस्थ लोग इन योजनाओं का विरोध करते हैं और तभी वह बड़ी आसानी से अपने लक्ष्य की ओर से मुंह मोड़ लेता है। परिणाम यह होता है कि वह एक दिन जो कुछ भी करता है, दूसरे दिन ही उसे मिटा देता है, जो कुछ वह चाहता है या जो योजनाएं वह बनाता है वे कभी स्पष्ट नहीं होती और उसके चिन्तन अथवा धारणाओं पर किसी प्रकार का भरोसा नहीं किया जा सकता।

इसलिए शासक को सदैव किसी न किसी की सलाह लेनी चाहिए, लेकिन उसे यह सलाह तभी लेनी चाहिए, जब वह स्वयं चाहे। दूसरों की इच्छाओं का अनुसरण करते हुए नहीं। वस्तुतः उसे उन तमाम लोगों को हतोत्साहित करना चाहिए, जो बिना मांगे किसी मामले में सलाह देने लगते हैं, फिर भी उसे निरन्तर सवाल पूछते रहना चाहिए और जिस बारे में वह सवाल पूछे, उसके बारे में कही गयी सच बात को उसे धैर्यपूर्वक सुनना भी चाहिए।

यही नहीं, यदि उसे ऐसा लगे कि कोई व्यक्ति किसी कारण से उससे

सच्चाई छिपा रहा है तो उसे उस पर अपना क्रोध भी दिखाना चाहिए। कई लोगों की यह धारणा है कि जो भी शासक लोगो पर अपने तीक्ष्ण बुद्धि होने की धाक बैठाता है, वह इसलिए नहीं कि वह सचमुच बुद्धिमान है, बल्कि इसलिए ऐसा करता है कि उसकी सलाहकार परिषदें अच्छी हैं, लेकिन सच्चाई यह नहीं है।

मैं इस सम्बन्ध में एक अचूक नियम का प्रतिपादन करता हूं। जो शासक स्वयं बुद्धिमान नहीं होता, उसे अच्छी सलाह भी नहीं दी जा सकती जब तक वह स्वयं को किसी ऐसे सलाहकार के हाथो मे नही सौंप देता जो उसके सारे राजकाज की देखभाल भी करता हो और स्वयं बहुत बुद्धिमान व्यक्ति हो। ऐसी स्थिति में भी उसे अच्छी सलाह तो दी जा सकती है लेकिन उसका शासन ज्यादा दिन नहीं चलेगा, क्योंकि उसकी ओर से शासन कार्य चलाने वाला व्यक्ति शीघ्र ही उसे राज्य से वंचित कर देगा।

लेकिन जो शासक स्वयं बुद्धिमान नही है, उसे एकाधिक सलाहकारों की सलाह लेते समय अपनी परिषदों मे कभी भी किसी मुद्दे पर मतैक्य नहीं मिलेगा और न ही वह उनके भिन्न-भिन्न मतो के बीच कभी कोई सामंजस्य स्थापित कर सकेगा। हर पार्षद अपने ही हितो को ध्यान मे रखकर सलाह देगा और शासक जान ही नहीं पायेगा कि उनकी भूल को कैसे सुधारा जाये अथवा कैसे उनकी बात समझी जाये। लोगो को जब तक ईमानदार होने और काम करने के लिए मजबूर नही किया जायेगा, तब तक वे हमेशा ऐसा ही करते रहेंगे और कोई सम्भावना ही नही रह जाती। इस निष्कर्ष यही रहा कि जहा से भी मिले, अच्छी सलाह की अच्छाई सदैव ही अपने शासक की बुद्धिमत्ता पर निर्भर करती है। शासक की बुद्धिमत्ता अच्छी सलाह पर निमर नहीं करती।

२४

इतालवी शासक अपना-अपना राज्य क्यों खो बैठे ?

यदि कोई नया शासक मेरे द्वारा उल्लिखित नियमो का सजगता से पालन करता है तो ऐसा लगेगा जैसे वह बहुत लम्बे समय से शासनारूढ़ रहा हो। वह शीघ्र ही अपने पाव इतनी मजबूती से जमा लेगा, जितनी मजबूती से वह लम्बे समय से शासन करता रहने पर भी न जमा पाता। किसी उत्तराधिकारी शासक की अपेक्षा नये शासक की कार्यवाहियो की ओर लोगो का ध्यान कही ज्यादा रहता है और जब इन कार्यवाहियो मे पराक्रम का पुट भी होता है, तो वे शाही रक्त की अपेक्षा कही अधिक कुशलता से लोगो का मन जीत लेती हैं और उनके मन मे स्वामिभक्ति की लौ जगाती हैं।

इसका कारण यह है कि लोग अतीत की अपेक्षा वर्तमान की ओर अधिक आकृष्ट होते हैं और जब वे इस फैसले पर पहुच जाते हैं कि उनके सामने तत्काल जो कुछ हो रहा है वह अच्छा है, तो वे उसी से तुष्ट हो जाते हैं और अयत्र झाकना बन्द कर देते हैं। इस प्रकार से प्रभावित होने के बाद वे अपने शासक की रक्षा के लिए कुछ भी करने को तैयार हो जायेंगे। शर्त यही है कि स्वय उसी मे कोई वैसी कमी न हो। इस प्रकार नये शासक को दोहरी कीर्ति मिलेगी—एक तो नये राज्य की स्थापना का श्रेय, दूसरे उस राज्य को अच्छे कानूनो, समुचित सुरक्षा व्यवस्था, विश्वसनीय सहयोगियो और प्रेरणाप्रद नेतत्व के गहनो से सजाने और उसे मजबूत बनाने का श्रेय। इसके विपरीत किसी जन्मजात शासक को, यदि वह अपने जन्मजात अधिकार को अपनी अयोग्यता से खो बैठता है, तो दुहरी शर्मिन्दगी उठानी पडती है।

आइये, हम नेपल्स के शाह, मीलान के ड्यूक और ऐसे ही कई अन्य शासक की चर्चा करें जो हमारे ही युग म अपने-अपने राज्य-शासन खो बैठे हैं। इनका अध्ययन करन पर हम पायेंगे कि उन सबमे उल्लिखित कारणो से सनिक सगठन-सम्बन्धी एक कमजोरी मौजूद थी, फिर आप यह भी देखेंगे कि इनमे से कुछेक तो प्रजाजनो की शत्रुता मोल ले बैठे अथवा प्रजाजना के पक्ष म होते हुए भी उन्ह अपने प्रति सामन्तो की स्वामिभक्ति को बनाये रखना नही आया। अगर इनमे से किसी एक कारण से उनकी जडो मे मटठा नही भरा गया है तो युद्ध के मैदान मे पूरी सेनाओ का धकेलने म समथ राज्य शासको के हाथ से नही निकल सकते। मेसीडन के शाह फिलिप (सिकन्दर महान के पिता नहीं, वल्कि टाइटस क्विण्टियम द्वारा पराजित सेनापति) रोमनो तथा यूनानियो के मुकाबले मे एक बहुत छोटी सी रियासत क शासक थे और इन दोनो विराटाकार शासको ने उन पर हमला कर दिया।

फिर भी, क्योकि वह स्वभावत सनिक व्यक्ति था और प्रजाजनो को सन्तुष्ट रखने एव सामन्तो की स्वामिभक्ति अपने प्रति बनाये रखने की कला जानता था, इसलिए कई वर्षो तक इन दोनो महती शक्तियो के विरुद्ध युद्ध का सचालन करता चला गया और अन्तत कुछेक नगरो का शासन छिन जान के बावजूद उसके अपने राज्य का शासक बना रहा।

इसलिए हमारे ये शासक, जिनकी सत्ता की स्थापना हुए कई-कई वप बीत चुके थ, अपने-अपने राज्य के छिन जाने के लिए भाग्य का बदनाम नही कर सकते। इसका दोप उनके अपने प्रमाद और आलसीपन को दिया जा सकता है, क्योकि शान्तिकाल मे उन्होने कभी यह सोचा नही कि समय की गति बदल भी सकता है (यह मानव जाति की सामान्य भूल है कि वे लोग सागर के शान्त रहते हुए सागर मे तूफान के आने की सम्भावना की ओर से भी आखें मूद लेते हैं।), अतएव जब विपदा आयी, तो उन्होंने पहली बात जो सोची वह उसका मुकाबला करने की नही, जान बचाकर भागने की सोची। ये शासक यही सोचते रहे कि विजेता की ज्यादतियो से तग आकर वे स्वयमेव उन्हें वापिस बुला लेंगे। जब और कोई चारा ही न रहे तो यह नीति ठीक ही रहती है, लेकिन इसी आशा के बल पर अन्य

सावधानिया और सजगताओ की उपेक्षा कर देना गलत है। किसी दूसरे द्वारा सहायता का हाथ बढाकर उठा लिये जाने की आशा से ही हमने लोगो को कभी (जान-बूझकर) गिरते हुए नही देखा है। हो सकता है यह सहायता न मिले और यह सहायता मिल जाने पर भी आप असुरक्षित रह जाते हैं क्योंकि आपके द्वारा अपनाया गया तरीका कायरतापूर्ण था, आपके अपने कृतित्व और श्रम पर आधारित नही था। प्रतिरक्षा के अच्छे, सुदृढ और सुनिश्चित उपाय वही हो सकते हैं, जो आपके अपन काय, श्रम और पराक्रम पर आधारित हो।

२५

भाग्य किस सीमा तक मानव-जीवन का नियन्त्रण करता है तथा उसका विरोध कैसे किया जाय ?

मैं बहुतेरे लोगो की इस धारणा से अनभिज्ञ नही हू कि भाग्य और भगवान घटनाओ का नियमन इस ढग से करते हैं कि मानव की दूरदर्शिता उनकी दिशा को नही बदल सकती और मनुष्य का उन पर कोई वस नही चलता। इस धारणा के कारण ये लोग यही तक किया करते है कि व्यर्थ म जान मारने से और पसीना बहाने से कोई लाभ नही होगा। व्यक्ति के लिए सयोग के आगे सिर झुका लेना ही ठीक है।

हमारे अपने युग म यह धारणा बहुत प्रचलित रही है, क्योकि हमारे ही युग मे ऐसी कई एक महत्त्वपूर्ण क्रान्तिया और हलचले हो गयी है, जो मानव की कल्पना से भी परे की बाते थी और जिनको हमने प्रतिदिन अनुभव किया है, आज भी करते है। कई बार इस बात को सोचकर मेरी अपनी भी यही धारणा बनकर रह गयी है। इसके बावजूद मानव के स्वतन्त्र चयन की सम्भावना को रद्द नही किया जा सकता। मैं मानता हू कि यह बात शायद सच ही है कि हमारी आधी गतिविधियो का फैसला भाग्य ही करता है, लेकिन शेष आधे कामो का फैसला तो हमारे ऊपर ही होता है।

मैं भाग्य की तुलना उन तूफानी नदियो मे से किसी एक से करता हू जो उफान आने पर मैदानो मे बाढ ले आती है, पेडो और इमारतो को जड और नीव से उखाडकर धरती पर ला पटकती हैं और एक जगह की मिट्टी को बहाकर दूसरी जगह जमा करने के लिए ले जाती हैं। हर व्यक्ति इन नदियो के आगे भागता है, हर व्यक्ति उनके जोश के सामने सिर झुका

देता है। इनका मुकाबला किये जाने की कोई सम्भावना ही नहीं है। इन नदियों की प्रकृति ऐसी होते हुए भी यह नहीं समझा जाना चाहिए कि जब ये नदियां शान्त बह रही होती हैं उस समय सावधानी नहीं बरती जा सकती—कि इन नदियों पर फाटक और बांध नहीं बनाये जा सकते, जिससे कि नदी में बाढ़ आने पर पानी को नहरों में डाला जा सके अथवा उनके प्रवाह की गति को कम विकराल और कम खतरनाक बनाया जा सके।

भाग्य का भी यही हाल है। उसकी प्रबलता भी वहीं देखने को मिलती है, जहां उसका नियमन करने के लिए फाटक और बांध नहीं बनाये जाते। यदि आप मेरे द्वारा वर्णित क्रान्तियों और हलचलों के रंगमंच इटली के बारे में सोचें तो आप देखेंगे कि इस देश में न कोई फाटक बनाया गया है और न ही कोई बांध बांधा गया है। यदि इटली को जर्मनी, फ्रांस और स्पेन की तरह (भाग्य के थपेड़ों के लिए) भली भांति तैयार किया गया होता तो या तो यह बाढ़ इतने बड़े परिवर्तन न कर पाती जो उसने किये हैं, अथवा यह बाढ़ आती ही नहीं।

मैं चाहता हूं कि भाग्य का प्रतिरोध करने के सम्बन्ध में मैंने जो कुछ कह दिया है, वही काफी मान लिया जाए, लेकिन अब अपने वक्तव्य को विशिष्ट घटनाओं तक सीमित रखते हुए मैं कहना चाहूंगा कि कई शासक एक दिन समृद्धि के शिखर पर चढ़ जाते हैं और दूसरे दिन उनके भाग्य का सितारा डूब जाता है—और इन शासकों का व्यक्तित्व अथवा चरित्र किसी भी प्रकार से बदला हुआ नजर नहीं आता। मेरा विचार है कि ऐसा एक तो उल्लिखित कारणों से होता है, जैसे पूर्णतया भाग्य पर निर्भर करने वाले शासक भाग्य का प्रवाह बदलने पर विपदा के शिकार हो जाते हैं। मेरा यह भी विश्वास है कि समयानुकूल नीतियों का अनुसरण करने वाला शासक समृद्धि पाता है और इसी तरह से समय के प्रवाह के विपरीत चलने वाला व्यक्ति समृद्ध नहीं हो पाता।

यह देखा जा सकता है कि लोग अपने-अपने लक्ष्यों की पूर्ति के लिए अर्थात यश एवं समृद्धि पाने के लिए कई प्रकार के उपाय अपनाते हैं। एक व्यक्ति परिस्थितियों का सावधानी से अध्ययन करके कदम उठाता है, दूसरा व्यक्ति सीधे जोश में आगे बढ़ चलता है। एक व्यक्ति हिंसा का

आश्रय लता है दूसरा छल-कपट का। एक व्यक्ति काम करते समय धैर्य स काम लेता है दूसरा इसके ठीक विपरीत व्यवहार करता है और फिर भी साधनो एव उपकरणो की इस तमाम विविधता के बावजुद हर व्यक्ति अपने लक्ष्य को पा सकता है। यह भी देखा जा सकता है कि सजगता से कदम उठाने वाल दो व्यक्तियो मे स भी एक व्यक्ति मजिल पा जाता है, दूसरा नही पा मकता। इमी प्रकार से दो निताात भिन्न मार्गों को अपनाने वाल लोग भी अपनी लक्ष्य प्राप्ति म सफल हो जाते हैं, चाहे उनमे से एक सजग हो और दूसरा भावना-प्रवाह म बहकर काम करने वाला। यह सारा खेल इसी बात का है कि उनके द्वारा अपनाये गये साधन एव उपाय किस सीमा तक समय के प्रवाह के अनुकूल पडते है और किस सीमा तक समय-प्रवाह के प्रतिकूल। यही कारण है कि जसा मैं पहले कह चुका हू दो भिन्न-भिन्न तरीको से काम करने वाले व्यक्ति एक ही लक्ष्य की प्राप्ति कर सकते है जबकि एक ही तरीके से काम करने वाले दो व्यक्तियो मे से एक को इच्छित फल मिल जाता है दूसरे को नही मिलता।

इमी से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि समद्धि को क्षणिक अथवा चचला क्या कहा जाता है। यदि एक व्यक्ति धय और सजगता से काम लेना है और यह तरीका यदि समय और परिस्थितियो के अनुकूल पडना है तो वह समद्धि प्राप्त कर लेता है, लेकिन समय एव परिस्थितियो के बदलत ही अपनी नीति को न बदलने के कारण वह व्यक्ति बरबाद हो जाता है। हमे कोई व्यक्ति ऐसा नजर नहा आता जो इतना दूरदर्शी हो कि अपनी नीतियो को इस प्रकार के समय के प्रवाह के अनुकूल ढाल सके। इसका एक कारण तो यह हो सकता है कि दूसरे किसी तरीके स काम करना उसके स्वभाव के ही विपरीत पडता हो अथवा यह सम्भव है कि सदव एक ही पक्ष के अनुसरण मे लाभान्वित होन के कारण वह स्वय को अपना माग बदलने के लिए तैयार न कर पाता हो। इस प्रकार से सजग और सावधान रहने वाला व्यक्ति परिस्थितियो द्वारा की गयी तीव्रगामी साधनो की माग पूरी न कर सकने के कारण अपने दायित्व का निर्वाह नही कर पाता और विपदा म फस जाता है। यदि वह समय और परिस्थितियो के अनुसार अपने तौर तरीका को बदल सके, तो उसक भाग्य का सितारा

कभी न डूबे।

पोप जूलियस द्वितीय हर मामले म जोश से काम लेता था और समय एव परिस्थितिया उसके तौर-तरीको के लिए कुछ ऐसी अनुकूल सिद्ध हुई कि उसे अपने हर काम म हमेशा सफलता मिली। गियोवानी बन्तीवोग्ली के जीवनकाल म ही बोलोना पर किये गये उसके हमले को ही ले लीजिए। वेनिस वाला को अब भी उस पर विश्वास नही था। स्पेन के शहशाह का भी यही रवया था और जूलियस अभी तक इस मामले को लेकर फ्रास वाला के साथ बहस ही कर रहा था। इस सबके बावजूद अपने व्यक्तित्व की विशिष्ट प्रबलता और दुदमनीयता के साथ उसने स्वय अपने ही नेतत्व म बोलोना पर यह पहला हमला कर दिया। इस चाल स स्पेन और वेनिस वाले बेचैन हो उठे और स्तम्भित रह गये। वेनिस वाले भय भीत थे और स्पन के शहशाह की आकाक्षा नेपल्स के पूरे साम्राज्य को एक बार फिर से जीतने की थी। दूसरी ओर पोप जूलियस ने फ्रास को इस हमले मे अपने पीछे लगा लिया। ऐसा इसलिए हुआ कि जूलियस को हमला करते देखकर और वेनिस वालो को कुचलने मे पोप जूलियस की मदद के इच्छुक फ्रास के शहशाह इस निणय पर पहुचे कि उसे सनिक सहायता देने से इनकार करने का अथ उसे हानि पहुचाना ही होगा। इस-लिए उस समय की जोश भरी कायवाही के द्वारा पोप न वह काम कर लिया जो कोई भी दूसरा पोप, तमाम मानवीय दूरदृष्टि के बावजूद, नही कर सकता था। अगर पोप रोम से कूच करने से पहले अपनी सभी समझौता-वार्ताओ, सौदबाजिया और आयोजनो के पूरे हो जाने की प्रतीक्षा करता जैसी कि किसी भी अय पोप स आशा की जाती थी, तो वह कभी सफल नही हो पाता। फ्रास के शहशाह ने कम स कम एक सौ एक बहाने पेश किये होते और अया न उसे एक सौ एक हौए दिखाकर उसे भयाक्रात किया होता।

मैं उसके अय कृत्यो की चचा नही करूगा, क्योकि उन सबम उसकी व्यवहार प्रणाली यही रही और वह हर अभियान म सफल रहा। उसका शासन काल इतना छोटा था कि उसे सफलता के अतिरिक्त अय प्रकार का अनुभव ही नहीं हुआ। यदि उसके सामन कोई ऐसा अवसर आया होता,

जहा उसे सजगता से काम करने की आवश्यकता पडती तो वह शायद मुसीबत म पड गया होता। उसके स्वभाव मे सजगता नही थी और वह अपन स्वभाव के विपरीत व्यवहार कभी न कर पाता।

इसलिए निष्कप रूप म मैं यही कह सकता हू कि मानव अपने व्यवहार क्रम म जड होता है और भाग्य का प्रवाह सदैव परिवतनीय। अतएव मानव तभी तक सफलता और समद्धि पाता है जब तक उसकी नीतिया समय के अनुकूल होती हैं। जब कभी इन दोना म सघप होगा, तभी उसे विफलता का सामना करना पडेगा। मेरी यह दढ धारणा है कि सजग होने की अपेक्षा तीव्रगामी होना बहतर है क्योकि भाग्य एक नारी की तरह होता है। उसे अपने सामने झुकाने के लिए उसे दण्डित करना और प्रताडना देना आवश्यक होता है। अनुभव स यही सिद्ध होता है कि भाग्य रूपी स्त्री ठण्डे दिमाग से काम लन वाले बुद्धि सम्पन्नो की अपेक्षा अमानीय प्रवल प्रवत्ति वाल पुरुषो के समक्ष अधिक समर्पित होती है। एक नारी होने क नात वह युवको को ही पसन्द करती है क्योकि वे सजग कम हैं और जोशीले अधिक और क्योकि वे उसपर बलात शासन करते हैं।

२६

इटली को बर्बर शासकों के चंगुल से मुक्त कराने का आह्वान

उल्लिखित सभी बातों की चर्चा करने के बाद मैंने स्वयं से पूछा कि क्या इटली में आज का युग किसी नये शासक को मान्यता देने के लिए अनुकूल है ? और क्या आज की परिस्थितियों में कोई दूरदर्शी एवं योग्य पुरुष यहां पर नयी व्यवस्था चला सकता है जिसमें कि उसे सम्मान प्राप्त हो और प्रत्येक इतालवी व्यक्ति को खुशहाली मिल सके ? एक नये शासक के पक्ष में इतने तत्त्व और सुयोग मिल रहे हैं कि मेरी दृष्टि से उसकी स्थापना के लिए वर्तमान से अधिक अनुकूल किसी अन्य समय की कल्पना ही नहीं की जा सकती और फिर जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं अगर इजराइलियों का मिस्र में इसलिए गुलामी सहनी पड़ी कि उनके नेता मूसा का उद्भव हो सके अगर साइरस की महानता को मान्यता दिलाने के लिए फारस के लोगों को मडीज के अत्याचार सहन करने पड़े, अगर थीसियस की श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए एथेन्स की प्रजा को बिखर जाना पड़ा, तो इटली की आत्मा का मूल्यांकन करने के लिए हमारे युग में इस देश का अपनी वर्तमान चरम अव्यवस्था की स्थिति में पहुंच जाना जरूरी था। उसका यहूदियों की अपेक्षा अधिक गुलाम होना, फारस के लोगों की अपेक्षा अधिक दमन सहना और एथेन्स के लोगों की अपेक्षा अधिक बिखरना, नेतृत्वहीन अनुशासनहीन दमित, लुटे पिटे, बरबाद और प्रताड़ित होना बहुत जरूरी था। उसे हर प्रकार की असहायता का शिकार होना ही था।

यद्यपि आज से कुछ समय पहले एक ऐसा व्यक्ति था[1] जिसके व्यक्तित्व म कुछ ज्योति नजर आती थी और लगता था कि ईश्वर ने देश के पुनरुद्धार के लिए ही उसका सृजन किया था, फिर भी बाद मे देखा गया कि अपने कायकारी जीवन के चरमोत्कर्ष पर पहुचकर वह भाग्य द्वारा ठुकरा दिया गया। अतएव आज जीवन प्राण-हीन हुआ यह देश उस युग पुरुष की प्रतीक्षा कर रहा है, जो उसके घाव भर सके, लोम्बार्डी के पतन और वहा हो रही लूट-पाट को समाप्त कर सके राज्य म और टस्कॅनी म शोषण का अन्त कर सके और लम्बे समय स रिसते चले आ रह छाला को साफ कर सके।

सहज ही देखा जा सकता है कि इटली आज ईश्वर से किसी एसे व्यक्ति को भेजने का आग्रह कर रहा है जो उसे इन बबरताओ और अपमान से बचा सके, जो उसे भोगन पड रहे है। आज देश किसी एक झण्डे तले एक हो जाने के लिए इच्छुक और उत्सुक है। कोई उस झण्डे को खडा करने वाला तो हो।

आज यह सोचा भी नही जा सकता कि यह देश आपके सम्मानित सदन से अधिक अपनी आस्था का आधार किसे बनाये। इस सदन म न सौभाग्य की कमी है, न पराक्रम की इस पर चच की भी अनुकम्पा है और ईश्वर की भी (चच का तो यह सदन आज मुखिया है।)। यही आज इस देश को मुक्ति दिला सकता है। यदि आप मेरे द्वारा परिगणित व्यक्तियो क जीवन एव कार्यो का ध्यान करेंगे तो पायेंगे कि यह काम कुछ बहुत कठिन नही है। ये व्यक्ति अपवाद रूप हो सकते हैं असाधारण हो सकते हैं, इसके बावजूद वे भी मानव ही तो थ और उनम स प्रत्यक के पास जो अवसर था, वह आज उपलब्ध अवसर की अपेक्षा बहुत कुछ हीन था। उनके अभियानो का न तो आज स अधिक कुछ औचित्य था और न ही वे आज की अपेक्षा कुछ आसान थे।

आज हमारे लक्ष्य के पीछे न्याय का महान बल है। 'आवश्यक युद्ध उचित युद्ध होता है और जहा आशा का एकमात्र स्रोत शस्त्रधारण करने मे

---

1 स्पष्ट सकेत सीज़र बोर्गिया की ओर।

लाविष्कारी वृत्ति म अ-यो से कही बढे-चढे है, लेकिन जहा सैनिक सगठन का सवाल उठता है, वे तुलनात्मक दप्टि स पीछे रह जाते हैं।

कारण ? जो योग्य हैं, उनकी आज्ञा का पालन कोई नही करता। हर व्यक्ति स्वय को नेता बनने योग्य समझता है। इसी कारण से अभी तक किसी ने ऐसा पराक्रम और कौशल नही दिखाया है कि वह दूसरो पर नियन्त्रण स्थापित कर सके। इस सबके परिणामस्वरूप पिछले बीम माल के लम्बे समय मे लडी गयी तमाम लडाइया के बीच जहा कही पूणरूपेण इतालवी फौजें लडी हैं, वही वे पराजित हुई है। इसके प्रमाणस्वरूप तारो, अलेक्सान्द्रिया, कापुआ जेनोआ, वैला बोलोना और मस्त्रे के युद्धो का सर्वेक्षण किया जा सकता है।[1]

इसलिए यदि आपका सम्मानित सदन उन राष्ट्र नायको के पदचिह्नो पर चलना चाहता है, जिन्होंने अपने-अपने देशो की रक्षा की तो सबसे पहले उसके लिए एक नागरिक सेवा का सगठन आयोजन जरूरी है। इसका कारण यही है कि नागरिक सेवा से बढकर वफादार, उससे अधिक ईमानदार और बेहतर कोई सेना हो ही नही सकती। ये सैनिक अकेले-

---

१ तारों में फर्नोवो का युद्ध १४९५ में अवकाश ग्रहण करने वाली फ्रांसीसी सना तथा एक इतालवी लीग के बीच हुआ। अलेक्सान्द्रिया का फ्रांसीसियो ने लुई बारहवें के द्वारा इटली पर किये प्रथम आक्रमण के दौरान १४९९ में, लूटा था। नेपल्स पर फ्रांस और स्पेन के सयक्त आक्रमण के बाद १५०१ मे कापुआ को फ्रांसीसी सनिको ने लूटा और बरबाद किया था। जेनोआ पर फ्रांसीसियो ने १५०९ में अधिकार स्थापित कर लिया था (इससे एक ही वष पूव फ्रांस समथक कुलीन दल की सत्ता उलट दी गयी थी)। १५०९ म ही लीग ऑव कम्ब्रे के काय व्यापार के ही क्रम में फ्रांसीसियों के साथ हुए युद्ध में, वला अथवा आग्नादेलो के मदान में वेनिस वाले बुरी तरह पछाड गये। बोलोना पर १५११ में जूलियस द्वितीय के साथ हुए युद्ध में फ्रांसीसियों ने अधिकार कर लिया था। १५१३ में विसन्जा के युद्ध से कुछ ही पहले जहां वेनिस वाले पराजित हुए थे वेनिस के निकट अवस्थित नगर मेस्त्रे को सम्राट स्पेन मीलान और पोप की सम्मिलित सेनाओं ने लूटा और जला दिया था।

रवन्ना का युद्ध १५१२ में लड़ा गया। (अधिक विवरण के लिए नामावली में देखिए—लुई बारहवां)

अकेले भी ले लिये जायें तो अच्छे होते हैं, फिर एक सगठित सैन्य के रूप मे काम करते समय, जब वे स्वय को अपने शासक के भण्डे तले, उसके द्वारा सम्मानित और पोषित पायेंगे तो और भी वेहतर एव उपयोगी सिद्ध होग। इसलिए आक्रमणकारी का मुकाबला करने के लिए अपनी प्रतिरक्षा व्यवस्था का इतालवी राष्ट्रीय शक्ति पर आधारित बनाने के लिए इस प्रकार की नागरिक सेना का गठन अनिवार्य है। स्विस और स्पेनिश तापखाना को अपराजेय समझा जा सकता है, फिर भी उन दोनो सेनाओ म एक एसा दोष है, जिसके कारण कोई भी तीसरी सेना न सिर्फ उन्हें युद्ध के मैदान म घेर लेगी बल्कि निश्चय ही उन्हें पराजित कर देगी।

स्पेनिश तोपखाना घुडसवार सेना का भार नहीं सह सकता और स्विस सैनिक युद्ध के मैदान मे अपनी बराबरी के तोपखाने के भी सामने जाते हुए डरते हैं। इस प्रकार से देखा गया है और अनुभव से भी यही सिद्ध होता है कि स्पेनिश सैनिक फ्रासीसी घुडसवारो से पिट जाते हैं और स्विस सैनिक स्पेनिश तोपखाने के आगे घुटने टेक देते हैं। इस बादवाली बात का अभी तक कोई निर्णायक दिग्दर्शन नही हुआ है। मगर इसकी सत्यता का कुछ सकेत रवन्ना के उस युद्ध मे मिल गया था, जहा स्पेनिश तोपची जमन बटालियनो से भिडे थे। जमनो की युद्धकला स्विस युद्धकला स मिलती-जुलती है। भिडन्त होन पर स्पेनी सैनिको ने अपनी ढालो का अच्छा उपयोग किया और बडी फुर्ती से जमनो के बर्छी भालो के बीच और नीचे घस गये। यहा उन्होंने असहाय-से हो चुके जमनो पर बडी निममता स प्रहार किया। यदि उनपर घुडसवार सेना आक्रमण न करती तो स्पेनी सैनिक जर्मनो का सफाया कर देत।

अतएव इन स्विस एव स्पेनी सैनिको की कमियो को समझ लेने के बाद आप एक नय किस्म की सना का गठन कर सकते हैं, जो घुडसवार सना का भार सह सके और दूसरे पक्ष के तोपखाने के आगे से भाग न खडी हो। यह तभी हो सकता है जब नयी सेना का गठन हो और उनके गठन के लिए नयी व्यवस्था अपनाई जाय। इसी प्रकार की बातें नये सिरे स की जायें तो शासक की महत्ता और प्रतिष्ठा बढती है।

इसलिए यदि हम लोग यह चाहते हैं कि इतने लम्बे समय के बाद

प्रमुख नाम और संदर्भ

अगाथोक्लीज ईस्वीपूर्व ३१७ मे सिराक्यूज का शासक घोषित किया गया, और इसने धीरे धीरे, कार्थेज द्वारा शासित प्रदेश को छोड़कर, पूरे सिसिली पर अपनी सत्ता का विस्तार कर लिया। ईस्वीपूर्व ३१० मे हैमिल्कार के नेतृत्व म लडने वाली एक कार्थेनियन सेना ने इसे पराजित किया और फिर सिराक्यूज को ही घेर लिया। इसने सफलतापूर्वक अफ्रीका तक विजय-यात्रा की, मगर जब सिराक्यूज के कई नगरो म स्वय उसीके खिलाफ़ विद्रोह हुए, तो वह घर लौटने के लिए तथा कार्थेज के साथ शांति-संधि करने के लिए विवश हो गया। ईस्वीपूर्व २८९ मे मत्यु। मैकियावेली ने इसके कायकारी जीवन का इतिहास रोमन इतिहासकार जस्टिन की कृतियो स लिया है।

अलेग्ज़ान्देर एम० आरेलियस अलेग्ज़ान्दर सेवेरस। ईस्वीसन २२२ स २३५ तक रोमन सम्राट। सम्राट हैलियागेबालस का चचेरा भाई था मगर ईस्वीसन २२१ मे सम्राट ने इसे गोद ले लिया। विद्रोही सैनिको ने, शायद मक्सिमाइनस के भडकाने से, इसकी हत्या कर दी थी।

अलग्ज़ान्देर चतुर्थ कार्डिनल रोडरिगो बोर्गिया। १४९२ ईस्वी मे पोप

पद के लिए चुना गया। १५०३ मे मत्यु। अपने भ्रष्ट व्यक्तिगत जीवन और अपनी अवध सन्तान के प्रति असाधारण समपण के भाव के लिए बदनाम, लेकिन वह एक कुशल प्रशासक था। फ्रासीसियो द्वारा इटली पर हमले के दौरान चुनौती पाने वाला वह पहला पोप था और उसे फ्रासीसी-स्पेनिश सयुक्त स न्य से भी लडना पडा।

इपामिनोण्डास ईसापूव चौथी शताब्दी का थीबो का सेनापति और राजनीतिज्ञ जिसे यूनान के लिए थीबी को जीतन का श्रेय प्राप्त है।

एकिलाज वीर काव्य 'ईलियड' का नायक। फीनिक्स तथा सेण्टावर चिरॉन का शिष्य।

एकुतो गियोवानी जान हॉकवुड के नाम का इतालवी सस्करण। एसक्स, इग्लैण्ड का यह निवासी फ्रास मे नौकरी करता था। एडवड तृतीय न इसे सम्मानित भी किया था। १३६० ईस्वी म वह एक छोटी सी निजी सेना लेकर इटली गया और वहा उसन अपने व्यवहार के लिए स्थायी ख्याति प्राप्त कर ली। ऐसी धारणा है कि इतालवी भाषा का मुहावरा—'इतालवीकृत अग्रेज शतान का अवतार होता है। —इसी प्रकार के झगडे पर मारकाट करने वाले अग्रेज सैनिको द्वारा की गयी ज्यादतियो के फल स्वरूप प्रचलित हुआ होगा।

एण्टियोकस सीरिया का सम्राट, एण्टियोकस महान, ईस्वीपूव २२७ से १८७ तक। रोमनो के साथ लडाई म निरन्तर उलझा रहा।

एस्कानियो देखिये *स्फोर्जा, कार्डिनल।*

ओलिवरात्तो, फर्मो का ओलिवरोत्ता यूफ्रेदुच्ची। मकियावेली द्वारा वर्णित फर्मो की घटनाए १५०१ मे घटी थी। १५०२ मे सिनिगाग्लिया के स्थान पर गला घोट कर उसकी हत्या कर दी गयी थी।

आर्को, रोमिरो द रामिरो द लार्का। सीजर बोर्गिया का मजोर्दोमो। सीजर के साथ १४९८ म फ्रास गया। १५०१ म

रोमाना का गवनर नियुक्त हुआ। १५०२ में मृत पाया गया।

तरहवी शताब्दी के उत्तराध म शक्तिसम्पन्न हो जाने वाले एक रोमन परिवार का नाम। सीजर बोर्गिया न अपने प्रारम्भिक विजयाभियान म इनका प्रयोग भाडे के सैनिको के रूप मे किया। सीजर के विरुद्ध हुए षडयन्त्र म इनकी भी भूमिका थी। मार सिनिगालिया म सीजर इन्हे धोखा दे गया।

वेनिस और फ्लारेंस के मुकावले म मीलान के शासक का समथन करने वाला बोलोना का एक अधिकारसम्पन्न परिवार था। १४५५ म इस परिवार के मुखिया ने अपने प्रतिद्वन्द्वी बेन्तिवोग्ली का मुकाबला करके सत्ता हथियाने का प्रयास किया। एनीबेल बेन्तीवोग्ली मारा गया लकिन प्रजा ने प्रतिरोध किया और कैनेस्ची लोगा को नगर से खदेड दिया।

एम० आरेलियस एन्टोनिनस। ईसापूव २११ स २१७ तक रोम का सम्राट था। सम्राट सवेरस का पुत्र। पिता की मृत्यु पर वह एव उसका भाइ गद्दी पर बैठे। ईस्वीपूव २१२ मे उसन अपन भाई गेता की हत्या कर दी और शासन की बागडार सभाल ली। सत्ता सूत्र का इस्तेमाल उसन वडी निममता और क्रूरता स किया। राजस्व मे वद्धि के विचार से उसने साम्राज्य भर के तमाम स्वतत्र नागरिको को रोम की नागरिकता का अधिकार प्रदान कर दिया। मक्रिनस द्वारा भडकाये जान पर कुछ लोगो ने उसका वध कर दिया।

कार्मग्नोला — कार्माग्नोला के काउण्ट फ्रासस्को बुसान। कार्माग्नोला म ही १३९० म पैदा हुए। वेनिस क शासक ने १४२५ म उन्हे भाडे के सेनानायक के रूप म भरती कर लिया। वेनिस और फ्लारेंस की सयुक्त सेना के कमाण्डर भी रहे। बाद म उन पर देशद्रोह का सन्देह हो गया और १४३२ ई० म वेनिस म उनकी हत्या कर दी गयी।

कार्डिनल कोलोना — सालेर्नो के ड्यूक एन्तोनियो कोलोना का पुत्र गियोवानी।

☐ मैकियावेली

☐ व्यावहारिक राजनीति के आदिगुरु के रूप में भारत में जो प्रतिष्ठा ब्राह्मण कौटिल्य को प्राप्त है वही स्थान यूरोपीय राजनीतिक दर्शन के क्षेत्र में मैकियावेली को भी प्राप्त है। फर्क सिर्फ यही है कि भारत में हम कौटिल्य का नाम आज भी सम्मान के साथ लेते हैं और मैकियावेली राजनीति की हर बुराई का इलज़ाम अपने सिर लेने वाला विवादास्पद मोहरा बन चुका है।

☐ सच्चाई यह है कि उसने कभी भी कैथोलिक सम्प्रदाय की बुराई नहीं की। हां वह राज्य कार्य में पादरियों के हस्तक्षेप का कट्टर विरोधी था।

☐ शासक कृति एक आशावादी व्यक्ति की वैयक्तिक एवं राष्ट्रीय असद अनुभूतियों का परिणाम है।

☐ जबरदस्त बेकारी के जमाने में उसने कई पुस्तकें लिखीं और इन पुस्तकों के बल पर वह इतालवी गद्य के आद्य गुरुओं में गिना जा सकता है।